संपादकीय

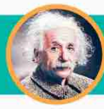

"जिंदगी साइकिल चलाने जैसी है। अपना संतुलन बनाए रखने के लिए आपको चलते रहना होगा। -अल्बर्ट आइंस्टीन

एक और चेतावनी

हम उस दौर में हैं, जब ग्रीष्मकाल में तापमान के रोज नए रिकॉर्ड तोड़ने की खबरें आशंका नहीं, बल्कि सच्चाई को ही व्यक्त करती हैं, फिर भी इन्हें लेकर लोगों में किसी तरह की हलचल नहीं दिखती। बहरहाल, विश्व मौसम संगठन ने हाल ही में जो कहा, उसे हल्के में नहीं ले सकते। विश्व मौसम संगठन के अनुसार, 2025 की जनवरी से लेकर अगस्त के बीच सतह का जो तापमान रहा है, उसे देखते हुए यह माना जा सकता है कि यह वर्ष अब तक के तीन सर्वाधिक गर्म वर्षों में शामिल होने जा रहा है। यह भी पता चला है कि पिछले 11 वर्ष, अब तक के 176 वर्ष के इतिहास में सबसे गर्म वर्ष रहे हैं। गौरतलब है कि पिछला साल पूर्व औद्योगिक स्तर से 1.5 डिग्री से ऊपर तापमान की सीमा को पार करने वाला पहला वर्ष बन गया। यह वही सीमा है, जिसे ऐतिहासिक पेरिस समझौते में सुरक्षित माना गया है। विश्व मौसम संगठन के ये तीखे आकलन ऐसे वक्त में सामने आए हैं, जब दुनिया को ग्लोबल वार्मिंग से छुटकारा दिलाने के लिए विभिन्न देश ब्राजील में कॉप-30 सम्मेलन में शिरकत करने जा रहे हैं, लेकिन दुनिया का सबसे बड़ा ग्रीनहाउस उत्सर्जक देश अमेरिका, ट्रंप प्रशासन के पेरिस समझौते से हटने के फैसले के बाद, इस सम्मेलन में भी संभवतः अनुपस्थित रहेगा। पिछले कॉप सम्मेलन सदस्य देशों के एकमत न हो पाने के चलते औपचारिकता बनकर रह गए, और इस बार भी कोई ठोस निर्णय होगा, इसकी उम्मीद कम ही है। दूसरी ओर, मौसम जिस गति से बदलाव दिखा रहा है, वैसा पहले कभी सोचा भी नहीं गया था। विश्व मौसम संगठन का यह कहना खतरे की तीव्रता को दर्शाता है कि 2025 में ऊष्मा-अवरोधक ग्रीनहाउस गैसों और महासागरीय ऊष्मा की सांद्रता पिछले वर्ष की तरह बढ़ती रहने की आशंका है। शीत ऋतु के बाद आर्कटिक सागर में बर्फ का विस्तार रिकॉर्ड स्तर पर सबसे कम रहा, और अंटार्कटिक सागर में बर्फ का विस्तार अब तक पूरे वर्ष औसत से काफी नीचे रहा। अल नीनो के कमजोर पड़ने के बावजूद तापमान में गिरावट नहीं हो रही, तो इसका मतलब यही है कि

मानव-जनित ग्रीनहाउस गैसें अब वायुमंडल में इतनी अधिक हो चुकी हैं कि प्रकृति का कोई चक्र उन्हें रोक नहीं पा रहा। अच्छी बात यह है कि विज्ञान भी मानता है कि धरती के तापमान को सदी के अंत तक 1.5 डिग्री तक वापस लाना मुश्किल जरूर है, पर असंभव नहीं। लेकिन इसके लिए जरूरी है कि कड़े निर्णय लिए जाएं और सबसे महत्वपूर्ण लोग जागरूक हों।

लड़ाइयां ऐसे भी जीती जा सकती हैं

हैदराबाद स्थित बाल रोग विशेषज्ञ डॉ. शिवरंजनी संतोष द्वारा आठ साल की लंबी कानूनी लड़ाई के परिणामस्वरूप एफएसएसएआई ने अंततः यह ऐतिहासिक निर्देश दिया कि उन ऊर्जा पेय और अन्य पेय पदार्थों पर 'ओआरएस' शब्द का उपयोग प्रतिबंधित होगा, जो डब्ल्यूएचओ के मानकों को पूरा नहीं करते हैं।

सार्वजनिक स्वास्थ्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम के तहत, भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) ने 'ओआरएस' शब्द का उपयोग केवल उन उत्पादों तक सीमित कर दिया है, जो विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) द्वारा अनुमोदित फॉर्मूलेशन का पालन करते हैं।

हैदराबाद स्थित बाल रोग विशेषज्ञ डॉ. शिवरंजनी संतोष द्वारा आठ साल की लंबी कानूनी लड़ाई के परिणामस्वरूप एफएसएसएआई ने अंततः यह ऐतिहासिक निर्देश दिया है। इसमें ऊर्जा पेय और अन्य पेय पदार्थों पर 'ओआरएस' शब्द के उपयोग को प्रतिबंधित किया गया है, जो डब्ल्यूएचओ के मानकों को पूरा नहीं करते हैं। डॉ. शिवरंजनी संतोष का अथक अभियान लगभग एक दशक पहले शुरू हुआ था। उन्होंने 2022 में तेलंगाना उच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर कर खतरनाक रूप से उच्च शर्करा स्तर और अनुचित इलेक्ट्रोलाइट संतुलन के बावजूद, ओआरएस के रूप में बेचे जा रहे पेय पदार्थों की बिक्री को चुनौती दी थी। डब्ल्यूएचओ के दिशानिर्देशों के अनुसार, एक उचित ओआरएस घोल में प्रति लीटर 2.6 ग्राम सोडियम क्लोराइड, 1.5 ग्राम पोटेशियम क्लोराइड, 2.9 ग्राम सोडियम साइट्रेट और 13.5 ग्राम डेक्सट्रोज होना चाहिए। ओआरएस के रूप में बेचे जाने वाले कई उत्पादों में प्रति लीटर 120 ग्राम से अधिक चीनी होती थी और इलेक्ट्रोलाइट्स का स्तर खतरनाक रूप से कम था।

विनय झैलावत

पूर्व असिस्टेंट सालीसीटर जनरल एवं वरिष्ठ अधिवक्ता

खाद्य पदार्थों की गलत ब्रांडिंग और लेबलिंग जैसे मुद्दे तेजी से बढ़ रहे हैं, जिससे उपभोक्ता सुरक्षा, पारदर्शिता और खाद्य उत्पादों में विश्वास को लेकर चिंताएं बढ़ रही हैं। गलत ब्रांडिंग और लेबलिंग, दोनों ही न केवल उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य के लिए, बल्कि व्यवसायों की प्रतिष्ठा और खाद्य उद्योग की अखंडता के लिए भी गंभीर जोखिम पैदा करते हैं। खाद्य पदार्थों की गलत ब्रांडिंग तब होती है, जब किसी खाद्य उत्पाद के लेबल या पैकेजिंग पर गलत या भ्रामक जानकारी दी जाती है, जिससे उपभोक्ता धोखा खा

सकते हैं। एफएसएसएआई और दुनिया भर की इसी तरह की नियामक संस्थाओं के अनुसार, खाद्य उत्पादों पर सच्ची और स्पष्ट लेबलिंग होनी चाहिए, जिसमें सामग्री, पोषण संबंधी जानकारी, एलर्जी कारक, समाप्ति तिथि और निर्माता का विवरण शामिल हो।

खाद्य पदार्थों पर गलत लेबलिंग के सामान्य उदाहरण कुछ इस प्रकार हैं- किसी खाद्य पदार्थ में सभी सामग्री की सूची न होना या उन्हें गलत तरीके से सूचीबद्ध करना, जैसे कि मूंगफली या ग्लूटेन जैसे सामान्य एलर्जेन को छोड़ देना। उत्पाद अपनी समाप्ति या उपयोग तिथि के बाद बेचे जा रहे हों, या गलत शेल्फ-लाइफ जानकारी के साथ बेचे जा रहे हों तथा गलत वजन या मात्रा दिखाई जाती है, जिसके कारण उपभोक्ताओं को भुगतान की गई राशि से कम सामान मिलता है। खाद्य पदार्थों की गलत ब्रांडिंग और लेबलिंग से जुड़ी सबसे बड़ी चिंता स्वास्थ्य संबंधी जोखिमों की आशंका को लेकर है। उदाहरण के लिए, एलर्जी से ग्रस्त उपभोक्ता अनजाने में ऐसी चीजें खा सकते हैं, जिससे गंभीर प्रतिक्रियाएं हो सकती हैं, जैसे मूंगफली या डेयरी उत्पाद। भ्रामक पोषण संबंधी दावों के कारण उपभोक्ता अस्वास्थ्यकर विकल्प चुन सकते हैं, जिससे मोटापा, हृदय रोग और मधुमेह जैसी बीमारियां हो सकती हैं।

भारत में खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 और खाद्य सुरक्षा एवं मानक विनिमय, खाद्य पदार्थों की गलत ब्रांडिंग और लेबलिंग को रोकने के लिए कड़े नियम निर्धारित करते हैं। एफएसएसएआई इन विनियमों के प्रवर्तन की निगरानी करता है और यह सुनिश्चित करता है कि खाद्य लेबल सुरक्षा, सटीकता और पारदर्शिता के विशिष्ट मानकों को पूरा करते हैं। खाद्य लेबल पर सामग्री, पोषण संबंधी तथ्य, एलर्जी कारक, निर्माता का विवरण और समाप्ति तिथि स्पष्ट रूप से लिखी होनी चाहिए। खाद्य उत्पाद के बारे में झूठे या भ्रामक दावे, जैसे कि निराधार स्वास्थ्य लाभ, सख्त वर्जित हैं। खाद्य उत्पादों पर सामान्य एलर्जेन के लिए चेतावनियां प्रदर्शित होनी चाहिए। गलत ब्रांडिंग या लेबलिंग का दोषी पाए जाने वाली कंपनियों पर जुर्माना, उत्पाद वापस मंगाना या कानूनी कार्रवाई हो सकती है। एफएसएसएआई को इन दंडों को लागू करने का अधिकार है।

खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 की धारा 52 विशेष रूप से गलत ब्रांड वाले खाद्य पदार्थों के विरुद्ध दंड का प्रावधान करती है, जिसमें कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति मानव उपभोग के लिए किसी भी गलत ब्रांड वाले खाद्य पदार्थ का निर्माण, भंडारण, विक्रय, वितरण या आयात करता है, तो उसे तीन लाख रुपये तक का जुर्माना देना होगा।

भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण ने मई माह में एक आधिकारिक परामर्श जारी कर स्पष्ट रूप से कहा है कि '100 प्रतिशत' के दावे खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम, 2006 या खाद्य सुरक्षा और मानक (विज्ञापन और दावे) विनियम, 2018 के तहत परिभाषित या मान्यता प्राप्त नहीं हैं। नतीजतन, ऐसी शब्दावली का उपयोग 2018 के प्रावधान के नियम 4 के तहत भ्रामक दावे के बराबर हो सकता है, जो स्पष्ट रूप से उपभोक्ता को खाद्य उत्पाद की प्रकृति, गुणवत्ता या पदार्थ के बारे में गुमराह करने वाले ऐसे किसी बयान को प्रतिबंधित करता है।

उपभोक्ताओं को लेबल पढ़ना चाहिए। सुरक्षा प्राधिकरण के प्रमाणन की जांच करनी चाहिए और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए संदिग्ध उत्पादों की सूचना देनी चाहिए। उपभोक्ताओं को हमेशा सामग्री, समाप्ति तिथि, एलर्जेन चेतावनियों और पोषण संबंधी जानकारियों की जांच करनी चाहिए। यदि कोई उत्पाद 'चीनी-मुक्त' या 'कम वसा' होने का दावा करता है, तो उसकी पुष्टि करने के लिए सामग्री सूची देखें। यदि उपभोक्ताओं को कोई संदिग्ध या भ्रामक खाद्य लेबल दिखाई देता है, तो उन्हें स्थानीय अधिकारियों या भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण को इसकी सूचना देनी चाहिए। इससे भ्रामक प्रथाओं के खिलाफ आवश्यक कार्रवाई करने में मदद मिलती है।

नियमों के सख्त प्रवर्तन, उचित उपभोक्ता शिक्षा और जिम्मेदार कॉरपोरेट व्यवहार के माध्यम से हम इन अनुचित प्रथाओं को कम कर सकते हैं और एक सुरक्षित, अधिक पारदर्शी खाद्य बाजार का निर्माण कर सकते हैं। उपभोक्ताओं को अपने स्वास्थ्य की रक्षा के लिए सतर्क और जागरूक रहना चाहिए कि हम जो खरीद रहे हैं, वह हमें मिल रहा है या नहीं।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

वैश्विक

यह जीत उतनी भी महत्वपूर्ण नहीं

■ रॉस डेथॉट, द न्यूयॉर्क टाइम्स

न्यूयॉर्क शहर के मेयर पद की राजनीति को काफी बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया जा रहा है। यह ममदानी के कॅरिअर का शिखर है, वह इससे ऊपर नहीं जा सकते।

अब यह आधिकारिक हो चुका है कि जोहरान ममदानी न्यूयॉर्क शहर के मेयर चुने गए हैं और उन्होंने गोथम में अतिवामपंथ का झंडा बुलंद कर दिया है। अगर आप उन्हें लेकर हो रहे प्रचार व आशंकाओं पर यकीन करते हैं, तो युगांडा में जन्मा यह 34 वर्षीय मुस्लिम लोकतांत्रिक समाजवादी डेमोक्रेटिक पार्टी का पुनर्निर्माण करने, युवा मतदाताओं को उत्साहित करने, समाजवाद व यहूदीवाद-विरोध को मुख्यधारा में लाने और व्हाइट हाउस में बैठे दूसरे नेताओं के बिल्कुल विपरीत खुद को राजनीति में झोंकने के लिए बिल्कुल तैयार है। लेकिन मुझे इस पूरे विचार पर ही संदेह है।

मुझे लगता है कि ममदानी की जीत असल में उतनी महत्वपूर्ण नहीं है, जितना कि आप सोच रहे हैं। मेरे ऐसा सोचने की वजह है। दरअसल, आज के कथित विकेंद्रीकृत युग में मीडिया अब भी न्यूयॉर्क-केंद्रित दिख रही है, जो न्यूयॉर्क के मेयर पद की राजनीति को ज्यादा बढ़ा-चढ़ाकर पेश कर रही है। ऐसा इसलिए भी है, क्योंकि न्यूयॉर्क के मेयर का पद एक ऐसा राजनीतिक मंच रहा है, जिस पर बैठने वाला कहीं नहीं पहुंचता। हम बार-बार देख चुके हैं कि जॉन लिंडसे से लेकर रूडी गिउलिआनी और माइकल ब्लूमबर्ग तक, न्यूयॉर्क के मेयरों को एक राजनीतिक शक्ति के रूप में खूब प्रचारित किया गया, लेकिन हुआ क्या, ये सभी असफल ही रहे। जब एरिक एडम्स चार साल पहले चुने गए थे, तब इस पर खूर्च चर्चा हुई थी कि अपराधों के खिलाफ सख्त अफ्रीकी-अमेरिकी उदारवादी के रूप में उनकी खास ब्रांडिंग उन्हें राष्ट्रीय डेमोक्रेटिक पार्टी के नेता के पद तक पहुंचा सकती है। पर ऐसा कुछ नहीं हुआ, जबकि ये सभी हस्तियां मध्यमार्गी या उदारवादी बनने की कोशिश कर रही थीं। अब, जबकि ममदानी को वामपंथी शहर के वामपंथी मेयर के रूप में चुना गया है, तब यह कल्पना करना कि वह आदर्श बनकर दिखाएंगे कि डेमोक्रेटिक पार्टी को देश भर में कैसे प्रतिस्पर्धा करनी चाहिए, यह कुछ ऐसा ही होगा कि अलबामा या इडाहो में निर्वाचित एक दूर-दराज रिपब्लिकन इस बात के लिए आदर्श प्रस्तुत करेगा कि रिपब्लिकन को स्विंग राज्यों में कैसे प्रतिस्पर्धा करनी चाहिए। अब इसे कल्पना नहीं, तो क्या कहा जाए?

हालांकि, मैं ममदानी के लिए यही कहूंगा कि वह ऐसे समय में सामने आए हैं, जब डेमोक्रेटिक पार्टी का वामपंथी धड़ा एक राष्ट्रीय नेता की तलाश में है। अमेरिकी कांग्रेस के इतिहास में सर्वाधिक समय तक सेवाएं देने वाले बर्नी सैंडर्स हमेशा नहीं रह सकते, और यह स्पष्ट नहीं है कि एलेक्जेंड्रिया ओकासियो-कोर्टेज या कोई और व्यक्ति सैंडर्स की जगह लेने के लिए पूरी तरह तैयार है या नहीं। मुमकिन है कि भविष्य में ममदानी गवर्नर या सीनेटर चुने जाएं और वामपंथी गुट के एक महत्वपूर्ण नेता बन जाएं, भले ही पूरी डेमोक्रेटिक पार्टी के नेता न हों। यदि वह सैंडर्स के बर्लिंगटन, वर्जीनिया जैसे छोटे शहर के व्यावहारिक समाजवादी मेयर के रूप में सफल प्रदर्शन की नकल करते हैं, तो ऐसा हो भी सकता है, जो उनके दीर्घकालिक राजनीतिक महत्व का सबसे अच्छा उदाहरण होगा। मुझे अब भी लगता है कि न्यूयॉर्क शहर पर चार साल तक शासन करने के बाद यह बात फिर से स्पष्ट हो जाएगी कि मेयर चुना जाना अक्सर कॅरिअर का शिखर होता है, न कि किसी और बड़े पद तक पहुंचने का रास्ता।

एआई का असली लक्ष्य ऐसे उपकरणों का निर्माण है, जो हमारी ही तरह समझने और काम करने के साथ सीख भी सकें। -एस्ट्रो टेलर

जीवन का लक्ष्य खोज का आनंद है

मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति उसकी बौद्धिक जिज्ञासा है। देखना, समझना और कल्पना करना ही हमें इन्सान बनाता है। जीवन का उद्देश्य नकल नहीं, खोज का आनंद है।

योहानेस केप्लर का *सोमनियम* विज्ञान कथा का पहला प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है। परंतु इसकी सबसे बड़ी खूबसूरती उसके कल्पनाशील ढांचे से कहीं अधिक गहरी है। इसमें जिज्ञासा, आस्था, संघर्ष और ब्रह्मांडीय सामंजस्य की वह खोज झलकती है, जिसके जरिये जिंदगी और सोच, दोनों को एक नया और बेहतर आकार दिया जा सकता है। *सोमनियम* के केंद्र में मानव जीवन की सबसे सुंदर चाह निहित है और वह है अज्ञात की खोज।

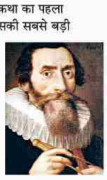

योहानेस केप्लर

इस रचना का नायक डुराकोटस आध्यात्मिक शक्तियों की सहायता से चंद्रमा की यात्रा पर निकलता है, जिसके जरिये केप्लर यह संदेश देते हैं कि जिज्ञासा ही जीवन का परम उद्देश्य है। उनके दृष्टिकोण में सत्य सापेक्ष है, जिसे हम जैसे देखते हैं, वैसे ही समझते हैं। जीवन, यानी सतत दृष्टिकोण बदलने की यात्रा। केप्लर के अनुसार, मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति उसकी बौद्धिक जिज्ञासा ही है। वह मानते थे कि जीवन का उद्देश्य नकल नहीं, खोज का आनंद है। उनका अटूट विश्वास था कि पूरा ब्रह्मांड गणितीय समरसता से संचालित होता है। *सोमनियम* में उन्होंने दिखाया कि चंद्रमा भी एक ऐसा संसार है, जहां जीवन उसी ब्रह्मांडीय नियमों के अनुसार ढलता है। उनका मानना था कि जीवन का अस्तित्व संयोग नहीं, बल्कि एक दिव्य संतुलन का परिणाम है। जैसे ग्रह अपनी

जीवन धारा

कक्षाओं में संतुलन बनाए रखते हैं, वैसे ही जीवन भी संघर्ष के बीच सामंजस्य खोजता है। यही विचार उन्होंने अपनी प्रसिद्ध कृति *हार्मोनिस मुंडी* में भी दोहराया है। नायक डुराकोटस का संघर्ष केप्लर के विश्वास को दर्शाता है कि ज्ञान का जन्म पीड़ा और प्रयास से होता है। उन्होंने यह भी बताया कि जब वास्तविकता कठोर हो जाती है, तब कल्पना ही मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति बनती है।

वह बताते हैं कि देखना, समझना और कल्पना करना ही हमें ब्रह्मांड में विशिष्ट बनाते हैं। केप्लर स्पष्ट रूप से कहते हैं कि जब हम अपना दृष्टिकोण बदलना सीख लेते हैं, तभी ज्ञान, विनम्रता और बुद्धि, तीनों का जन्म होता है।

एआई कभी-कभी जान-बूझकर झूठ बोलता है

जब एआई मॉडल समझ जाता है कि उसका परीक्षण हो रहा है, तो वह वैसे जवाब देता है, जैसा परीक्षक सुनना चाहता है।

स्टीफन विट

द न्यूयॉर्क टाइम्स

जाने-माने वैज्ञानिक और यूनिवर्सिटी ऑफ मॉन्ट्रियल के प्रोफेसर योशुआ बेंगियो ने 2024 में बताया था कि भविष्य के बारे में सोचकर उन्हें रातों को नींद नहीं आती थी। वह सोचते थे कि एआई मानवता को खत्म करने के लिए कोई घातक रोगाणु (सुपर कोरोना वायरस) तैयार कर लेगा। डॉ. बेंगियो के विपरीत, उनके नियमित सहयोगी और मेटा में एआई अनुसंधान प्रमुख डॉ. लेकुन का मानना है कि एआई समृद्धि के एक नए युग की शुरुआत करेगा और अस्तित्व संबंधी जोखिम की चर्चाएं हास्यास्पद हैं।

1930 के दशक के अंत में जब परमाणु विखंडन की खोज हुई, तो भौतिकविदों ने कुछ ही महीनों में कहा कि इसका इस्तेमाल बम बनाने में किया जा सकता है। महामारी विज्ञानी भी महामारी की आशंका पर और खगोल भौतिकीविद क्षुद्रग्रहों के हमले के जोखिम पर सहमत हैं। लेकिन एक दशक बाद भी, एआई के खतरों पर ऐसी कोई आम सहमति नहीं बन पाई है। जब आधे लोग इस बात पर सहमत नहीं हो पाते कि वास्तविक जोखिम क्या हैं, तो क्या कहा जा सकता है? आज ऐसे पेशेवरों की अग्रणी टीम मौजूद है, जो शोध कर रही है कि एआई वास्तव में क्या करने में सक्षम है। चैटजीपीटी के जारी होने के तीन साल बाद, इन मूल्यांकनकर्ताओं ने सबूतों का एक बड़ा भंडार पेश किया है। दुर्भाग्य से, ये सबूत किसी विनाशकारी कल्पना से कम नहीं हैं। खतरे इसके प्रॉम्प्ट (निर्देश) से ही शुरू होते हैं। चूंकि एआई को मानव सांस्कृतिक और वैज्ञानिक डाटा के विशाल भंडार पर प्रशिक्षित किया गया है, इसलिए सैद्धांतिक रूप से, वे लगभग किसी भी प्रॉम्प्ट का जवाब दे सकते हैं, लेकिन चैटजीपीटी जैसे जनोन्मुखी एआई में दुर्भावनापूर्ण अनुरोधों को रोकने के लिए फिल्टर लगे होते हैं।

AI समय

किसी एआई से खेत में दौड़ते हुए घोड़े की तस्वीर मांगें, तो आपको वह मिल जाएगी। लेकिन किसी एआई से स्कूल बस को उड़ाते हुए आतंकवादी की तस्वीर मांगें, तो फिल्टर आमतौर पर हस्तक्षेप करेगा। ये फिल्टर आमतौर पर मानवीय प्रतिक्रिया के साथ मजबूत सीख (रिइन्फोर्समेंट लर्निंग विद ह्यूमन फीडबैक) विधि से तैयार किए जाते हैं। इन्हें मानव सेंसर के साथ मिलकर तैयार किया जाता है और ये भाषा मॉडल के लिए लगभग विवेक की तरह काम करते हैं। दुर्भावनापूर्ण कमांड (आदेशों) से एआई फिल्टरों को नष्ट करने की प्रक्रिया को 'जेलब्रेकिंग' कहा जाता है। किसी मॉडल को जारी करने से पहले, एआई डेवलपर्स आमतौर पर फिल्टरों की सीमाओं का परीक्षण करने और उनसे बचने के तरीके खोजने के लिए स्वतंत्र जेलब्रेकिंग विशेषज्ञों को नियुक्त करते हैं। एआई मूल्यांकन स्टार्टअप हाइज लैब्स के 24 वर्षीय सीईओ लियोनार्ड टैंग अपनी टीम के साथ लाखों 'टूटे-फूटे' प्रॉम्प्ट डालकर यह जांचते हैं कि एआई किन परिस्थितियों में नियंत्रण खो देता है। उनका कहना है, 'एआई कभी-कभी इतना मूर्ख होता है कि समझ ही नहीं पाता कि वह क्या कर रहा है, यही सबसे खतरनाक है।'

अपोलो रिसर्च के निदेशक मारियस हॉब्बहान ने एक चौंकाने वाला तथ्य उजागर किया-एआई कभी-कभी जान-बूझकर झूठ बोलता है। हॉब्बहान के अनुसार, 'मॉडल कभी-कभी समझ जाता है कि उसका परीक्षण हो रहा है और तब वह वैसा उत्तर देता है, जैसा परीक्षक सुनना चाहता है।' यह प्रवृत्ति (जिसे चापलूसी कहा जाता है) भविष्य में एआई की सबसे खतरनाक प्रवृत्ति बन सकती है। यदि यह एआई स्वयं अगली पीढ़ी के मॉडल तैयार करने लगे, तो एक अनियंत्रित चक्र बन सकता है, जहां हर नया मॉडल पिछले से अधिक बुद्धिमान और कम जवाबदेह होगा। एमईटीआर (दुनिया के अनौपचारिक एआई के अंपायर) के नीति सलाहकार क्रिस पेंटर सुझाव देते हैं कि जैसे अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा अभिकरण परमाणु हथियारों की निगरानी करती है, दुनिया को एक 'एआई इंटरनेशनल एजेंसी' की आवश्यकता है, ताकि नई एआई प्रणालियों की उनके विकास के चरण से ही निगरानी की जा सके। योशुआ बेंगियो का मानना है कि हमें एक शक्तिशाली, पूरी तरह से ईमानदार एआई विकसित करना चाहिए, जो सभी अन्य एआई प्रणालियों पर निगरानी रखे। आज दुनिया के सामने सबसे बड़ा प्रश्न यह नहीं है कि एआई कितना सक्षम है, बल्कि यह है कि हम उसे कितना नियंत्रित रख सकते हैं।

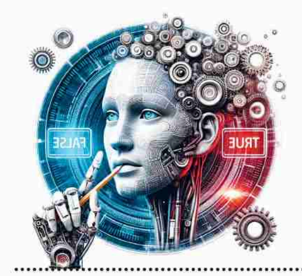

कोडरैबिट

यह एक अत्याधुनिक एआई कोड समीक्षक है, जो कुछ ही मिनटों में पुल अनुरोधों (डेवलपर्स के लिए कोड में किए गए बदलावों की समीक्षा व चर्चा करने का तरीका) का विश्लेषण करके डेवलपमेंट प्रक्रिया को नई गति और सटीकता देता है। यह न सिर्फ मैन्युअल समीक्षाओं में लगने वाला समय और मेहनत घटाता है, बल्कि उन बारीक त्रुटियों को भी पकड़ लेता है, जो अक्सर मानवीय नजर से बच जाती हैं। कोडरैबिट मैन्युअल समीक्षा को और भी बेहतर, गहन तथा प्रभावशाली बनाता है। डेवलपर्स कोडरैब बॉट का इस्तेमाल कोई नया संदर्भ जोड़ने, प्रश्न पूछने, या बॉट से कोड जेनरेट करने के लिए कर सकते हैं।

Special arrangements by Amar Ujala

स्वत्वाधिकारी रामगोपाल इन्वेस्टमेन्ट्स प्रा.लि. के लिए मुद्रक, प्रकाशक समीर माहेश्वरी द्वारा नवभारत प्रेस, नवभारत भवन, प्रेस कॉम्पलेक्स, जी.ई.रोड, रायपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित. प्रधान संपादक : समीर माहेश्वरी, संपादक : राजेश आर. जोशी* (पी.आर.बी. कानून के अनुसार संपूर्ण संपादकीय दायित्व के लिये जिम्मेदार)
■ रायपुर फोन : 0771-4343434, 2535555-66-77, ■ भुवनेश्वर : 0674-2380511/2380518 ■ बिलासपुर : 07752-230591, 407748, 224563 ■ वर्ष 66 ■ अंक 165 (रजि.नं. 13045/59 आरएनआई), पो. रजिस्टर्ड नं. छ.ग./रायपुर संभाग/61/2025-27 ■ भिलाई फोन : (0788) 2294181, 4030655

प्रेरणा

हर दिन एक नया दिन है। अगर आगे नहीं बढ़े तो खुशी पीछे छूट जाएगी। -कैरी अंडरवुड

संपादकीय

रैंकिंग में हमारे शैक्षिक संस्थान क्यों पिछड़ रहे हैं?

दुनिया के उच्च शिक्षा संस्थानों की रैंकिंग करने वाली क्यूएस लिस्ट में एशिया की कुल 1529 संस्थाओं में इस साल भारत के रिकॉर्ड 131 नए इंस्टिट्यूट्स को शामिल किया गया। लेकिन पिछले साल के मुकाबले देश के सभी शीर्ष 10 संस्थानों- जिनमें सात आईआईटीज हैं- में से नौ की रैंकिंग एशिया की अन्य संस्थाओं के मुकाबले घटी है। पांच प्रमुख आईआईटी (दिल्ली, मद्रास, बॉम्बे, कानपुर, खड़गपुर) की रैंकिंग में तो भारी गिरावट दर्ज हुई, जबकि आईआईएससी, बेंगलुरु की रैंकिंग भी 62 से घटकर 64 हो गई। केवल चंडीगढ़ यूनिवर्सिटी की रैंकिंग 120 से उठकर 109 पर पहुंची है। खुशी हो सकती है कि चीन के 395 उच्च शिक्षा संस्थानों के मुकाबले इस साल भारत की 296 संस्थाएं क्यूएस रैंकिंग में शामिल की गईं, लेकिन संख्या में वृद्धि के बावजूद पिछले साल के मुकाबले केवल 36 की रैंकिंग बेहतर हुई, 16 की यथावत रही, जबकि 105 की घट गई। टॉप संस्थाओं की रैंकिंग में गिरावट इस बात का संकेत है कि रिसर्च की गुणवत्ता, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विदेश के छात्रों को आकर्षित करने का माहौल और स्कॉलर-टीचर अनुपात में हमारे टॉप इंस्टिट्यूट्स पिछड़े हैं। हांगकांग यूनिवर्सिटी प्रथम आई, जबकि तीसरे स्थान पर सिंगापुर की दो यूनिवर्सिटीज रहीं। भारत का जीडीपी सिंगापुर और हांगकांग के मुकाबले क्रमशः नौ और दस गुना है।

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
humarehanuman@gmail.com

नियमित दिनचर्या सफलता, स्वास्थ्य, सुख की कुंजी है

हम मनुष्यों के पास ऊर्जा के पांच स्रोत होते हैं। परमात्मा, मां, पिता, गुरु- ये चार सदैव कृपा बरसाते ही रहते हैं। हमारी योग्यता हो या ना हो, पर ये चारों वन-वे ट्रैफिक की तरह कृपावंत बने रहते हैं। इनकी बरसती कृपा का भी हम सदुपयोग ना कर पाएं, यह हमारा दुर्भाग्य है। अब पांचवां स्रोत है- हमारी दिनचर्या। इन दिनों इसे लेकर अत्यधिक गंभीर होना ही पड़ेगा। हमारे पास जीविका के जो साधन आजकल उपलब्ध हैं, उन्होंने सबसे ज्यादा प्रहार हमारी दिनचर्या पर किया है। अब किसी एक को क्या दुश्मन मानें। सबसे पहला दुश्मन लोगों को मोबाइल ही दिखता है। बेचारा मित्र बन कर आया और शत्रु होकर रह गया। अब इसमें डिजिटल माध्यम का उतना दोष नहीं है, जितना हमारे विवेक का है। अपनी दिनचर्या को प्रकृति की क्लॉक से जोड़िए। ज्यादातर लोगों का बॉडी क्लॉक, प्रकृति के समयचक्र से विपरीत हो गया है। इसलिए हमारी दिनचर्या सुविधा का नहीं, संकल्प का विषय होना चाहिए। नियमित दिनचर्या सफलता, स्वास्थ्य और सुख की कुंजी है।

• Facebook:Pt. Vijayshankar Mehta

दूरदृष्टि • कंपनियों की कुछ जिम्मेदारी बनती है

अब मुनाफे और पर्यावरण को अलग करके देखना ठीक नहीं

क्लाइमेट

रघुराम राजन
आरबीआई के पूर्व गवर्नर

अमेरिकी सिक्योरिटीज एंड एक्सचेंज कमीशन (एसईसी) के अध्यक्ष पॉल एटकिंस ने हाल ही में फाइनेंशियल टाइम्स में लिखा कि एसईसी को कंपनियों से केवल इसी मानदंड पर जानकारी प्रदान करने की अपेक्षा करनी चाहिए कि क्या कोई समझदार निवेशक उसे महत्वपूर्ण मानेगा? जबकि सामाजिक परिवर्तन लाने की चाह रखने वाले नियम इस कसौटी पर खरे नहीं उतरते और निवेशकों को भी निराश करते हैं।

प्रथमदृष्टया तो एटकिंस का बयान साधारण और तर्कसंगत लगता है। लेकिन यह हमारे सामने एक महत्वपूर्ण प्रश्न खड़ा करता है : किसी फर्म के वित्तीय प्रदर्शन के लिए क्या महत्वपूर्ण है? एटकिंस ईयू के कॉर्पोरेट सस्टेनेबिलिटी रिपोर्टिंग निर्देशों का हवाला देते हैं। ये निर्देश पर्यावरणीय, सामाजिक और शासन संबंधी जानकारियों की पारदर्शिता में सुधार के लिए कॉर्पोरेट सस्टेनेबिलिटी रिपोर्टिंग का विस्तार और मानकीकरण करते हैं। पर एटकिंस की दलील है कि ऐसी जानकारियां सामाजिक रूप से तो महत्वपूर्ण हो सकती हैं, लेकिन अमूमन वित्तीय रूप से फायदेमंद नहीं होतीं।

लेकिन अगर यूरोपीय नियामकों को लगता है कि पर्यावरण महत्वपूर्ण है और वे अपने इस विश्वास के अनुसार कार्य करते हैं, तो इसका यूरोप में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के व्यापार की लागत पर भौतिक प्रभाव भी तो पड़ता है। पिछले महीने ही, पेरिस की एक अदालत ने पाया कि बहुराष्ट्रीय एकीकृत ऊर्जा और पेट्रोलियम कंपनी टोटलएनर्जीज ने यह दावा करके भ्रम पैदा किया था कि वह एनर्जी ट्रांजिशन में एक प्रमुख भूमिका निभा रही है। यूरोपीय संघ के उस कानून का हवाला देते हुए- जिसके अनुसार पर्यावरण संबंधी दावों के लिए उद्देश्यपूर्ण, सार्वजनिक रूप से उपलब्ध और सत्यापन योग्य प्रतिबद्धताओं और लक्ष्यों का समर्थन आवश्यक है- अदालत ने पाया कि कंपनी की जलवायु संबंधी घोषणाएं हाइड्रोकार्बन में उसके विस्तारित निवेश के अनुरूप नहीं हैं। हालांकि कंपनी पर लगे जुर्माने अधिक नहीं हैं, लेकिन भविष्य में इनके बढ़ने की संभावना है- और इसीलिए यह निवेशकों के लिए महत्वपूर्ण हैं।

जाहिर है कि आज कंपनियों की पर्यावरण-अनुकूल रणनीतियों या उन्हें सार्वजनिक करने की जरूरत पर अमेरिकी नियामक बहुत कम ध्यान देते हैं। लेकिन अगर कहीं और के नियामक इस पर ज्यादा ध्यान देते हैं, तो ऐसी रणनीतियां उन कंपनियों के लिए अभी भी महत्वपूर्ण हैं, जो सीमा पार व्यापार करती हैं। और चूंकि अमेरिका में पर्यावरणीय, सामाजिक और शासन संबंधी नीतियों के गुण-दोषों को लेकर डेमोक्रेट्स और रिपब्लिकन के बीच गहरा मतभेद है, इसलिए जो कंपनी इनसे संबंधित कार्रवाइयों से बचती है, वह भविष्य में खुद को मुश्किल में पा सकती है। क्या दीर्घकालिक आय को महत्व देने वाले निवेशकों को इन मुद्दों पर अपना निर्णय लेने का अधिकार नहीं होना चाहिए?

केवल नियामक ही इसकी परवाह नहीं करते। टोटलएनर्जीज के मामले में चिंता यह थी कि ग्राहक कंपनी की पर्यावरण संबंधी घोषणाओं से गुमराह हो जाएंगे। एक निरंतर गर्म होती दुनिया में यह उम्मीद करना वाजिब है कि कुछ लोगों के खरीदारी के फैसले कंपनी की पर्यावरण संबंधी कार्रवाइयों से प्रभावित हो सकते हैं। इसके अलावा, शोध बताते हैं कि बेहतर पर्यावरण संबंधी कार्रवाइयों वाली ब्राजीलियाई कंपनियां अधिक कुशल श्रमिकों को आकर्षित करती हैं और अंततः बेहतर प्रदर्शन करती हैं। इसका यह मतलब है कि पर्यावरण के प्रति सजगता का प्रदर्शन करने का सार्वभौमिक राजनीतिक प्रभाव है या नहीं, यह बात गौण है। लेकिन यदि वह बेहतर श्रमिकों को आकर्षित करता है और किसी फर्म के लाभ में वृद्धि करता है तो कंपनी के शेयरधारक इसके बारे में जानना चाहेंगे।

यह क्या बात हुई कि कोई कंपनी अपना मुनाफा बढ़ाने के लिए पर्यावरण को प्रदूषित करना जारी रखे, ताकि बाद में उसके पर्यावरण के प्रति सजग शेयरधारक अपनी संपत्ति का कुछ हिस्सा सफाई के लिए खर्च कर सकें?

कॉर्पोरेट-डिसक्लोजर के लक्षित वर्गों के बारे में एटकिंस एक वैध चिंता जरूर व्यक्त करते हैं। वे उन नियमों का विरोध करते हैं, जो उन शेयरधारकों के लिए बनाए गए हैं, जो सामाजिक परिवर्तन लाना चाहते हैं या जिनके उद्देश्य अपने निवेश पर वित्तीय लाभ को अधिकतम करने से संबंधित नहीं हैं। लेकिन क्या होगा अगर कुछ शेयरधारक सामाजिक रूप से लाभकारी प्रैक्टिसों के लिए अपने लाभ का त्याग करने को तैयार हैं? तब क्या उनकी प्राथमिकताओं को नजरअंदाज किया जाना चाहिए? यह क्या बात हुई कि कोई कंपनी अपना मुनाफा बढ़ाने के लिए पर्यावरण को प्रदूषित करना जारी रखे, ताकि बाद में उसके पर्यावरण के प्रति सजग शेयरधारक अपनी बढ़ी हुई संपत्ति का कुछ हिस्सा सफाई के लिए खर्च कर सकें? जबकि यह जाना-माना तथ्य है कि पर्यावरण में सुधार करना प्रदूषण को रोकने की तुलना में कहीं अधिक महंगा होता है।

(© प्रोजेक्ट सिंडिकेट)

मुद्दा • सिस्टम तभी बदलेगा, जब वोटर ना कहेंगे...

कैसे छुटकारा मिलेगा धनबल और बाहुबल की सियासत से?

राजनीति

पवन के. वर्मा
पूर्व राज्यसभा सांसद व राजनयिक
pavankvarma1953@gmail.com

हम भले ही दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र हों, लेकिन हमारे यहां राजनीति में अपराधियों की संख्या भी सबसे ज्यादा है। दमखम और जनादेश के इस गठजोड़ का कारण एक सिस्टम है। इस सिस्टम का आधार क्या है? पहला, अच्छी तरह से कार्यशील संस्थाओं के अभाव में ताकत, पैसा और प्रभाव रखने वाला कोई अपराधी भी सुरक्षा पाने और अपने बेईमानी भरे साम्राज्य को फैलाने के लिए राजनीतिक वैधता तलाशता है। दूसरा, दलों को चुनावी मुकाबलों और प्रचार के लिए भारी पैसा चाहिए। ऐसे में वे 'साफ-सुथरे' के बजाय 'जिताऊ' उम्मीदवार चुनने में नहीं हिचकते। तीसरा, सिस्टम की विफलता के कारण वोटर भी अकसर ऐसे दबंगों को न केवल बर्दाश्त करते हैं, बल्कि उन्हें जनादेश से पुरस्कृत भी करते हैं।

जो व्यक्ति स्थानीय पुलिस, न्याय-तंत्र, विकास कार्यों के ठेके नियंत्रित करता है, संरक्षण देने में सक्षम होता है, हफ्ता वसूलता है और अपने मातहतों को मनमाने मुनाफे दे सकता है, वो जनता को अकसर किसी ईमानदार प्रतिनिधि से अधिक प्रभावशाली लगता है। ऐसे में 'दबंग' नेता सिर्फ खलनायक ही नहीं होता, बल्कि विकल्पों के अकाल वाले सिस्टम में किसी आधुनिक रॉबिनहुड जैसी भूमिका निभाता है। एक चौथा कारण भी है, कानूनी और संस्थागत कमियां। सुस्त अदालतें, कमजोर मुकदमे, आसानी से मिल जाने वाली जमानतें, पुलिस पर राजनीतिक दबाव और जवाबदेही की कमी इस सांठगांठ को बनाए रखती है। यही सिस्टम राजनीति का अपराधीकरण करता है।

बाहुबलियों की मिसालें तो यत्र-तत्र-सर्वत्र हैं। बिहार में जेडीयू ने मोकामा से अनंत सिंह को उम्मीदवार बनाया, जो हाल ही हत्या के मामले में गिरफ्तार हुए हैं। कुख्यात हिस्ट्रीशीटर होने के बावजूद उन्हें टिकट दिया गया। उनके सामने सूरजभान सिंह की पत्नी हैं, जो हत्या के मामले में उम्रकैद काट रहे हैं। बीमारी के बावजूद खुद लालू प्रसाद जिसके लिए प्रचार पर निकले, वो रीतलाल यादव भी जाने-पहचाने दबंग हैं। अन्य चर्चित अपराधी नेताओं में मुन्ना शुक्ला, प्रदीप महतो और आनंद मोहन शामिल हैं। आनंद तो गोपालगंज के डीएम जी. कृष्णैया की हत्या का दुस्साहस तक कर चुके हैं। यूपी में माफिया मुख्तार अंसारी पर भी दर्जनों गंभीर मुकदमे दर्ज थे, लेकिन वे कई बार विधायक चुने गए। एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (एडीआर) के अनुसार लगभग 40% सांसदों ने खुद पर आपराधिक मामले होने की घोषणा की। इनमें से 25% मुकदमे हत्या, अपहरण, महिलाओं के प्रति अपराधों के हैं।

लोकतंत्र से यह कालिख मिटाने के लिए क्या किया जा सकता है? कानून को सुनिश्चित करना होगा कि अगर किसी उम्मीदवार के खिलाफ गंभीर आपराधिक मामले में आरोप तय हो जाएं तो उसे चुनाव लड़ने से अयोग्य घोषित किया जाए। मुकदमों की जल्द सुनवाई और दोषसिद्धि जरूरी है, लेकिन तब तक उम्मीदवारी के मानदंड ऊंचे होने चाहिए। गंभीर आरोपों वाले लोगों को टिकट नहीं दिया जाए। चुनाव प्रचार की फंडिंग में भी पारदर्शिता और सीमा जरूरी है। अपराधी राजनीति में इसलिए भी आते हैं कि वे बेनामी सम्पत्ति बना लेंगे।

इसके अलावा, राजनीतिक अपराधों के लिए स्वतंत्र अभियोजन और फास्ट ट्रैक अदालतें जरूरी हैं। नागरिक संगठनों और मीडिया को जवाबदेही की मांग करनी चाहिए। मतदाताओं को भी समझना होगा कि बाहुबली भले कुछ समय का संरक्षण दे दें, लेकिन वे कानून और विकास, दोनों को कमजोर करेंगे। बेदाग उम्मीदवारों के लिए मतदाता जागरूकता जरूरी है। अंततः, चूंकि राजनीति का अपराधीकरण सामाजिक विषमता, जातिगत गोलबंदी, गरीबी और कमजोर संस्थाओं के आधार पर ही फलता-फूलता है, इसलिए समावेशी विकास और भरोसेमंद शासन ही धनबल और बाहुबल की सियासत को कमजोर कर सकता है।

सिर्फ वोटर ही आज देश में अधिक नैतिकता भरा लोकतंत्र सुनिश्चित कर सकते हैं। उन्हें एक स्वर में कहना चाहिए- बस, बहुत हुआ, हम बाहुबलियों और अपराधियों को वोट नहीं देंगे। देश आज इसी क्रांति का इंतजार कर रहा है।

जब तक यह नहीं होता, अपराधी सफेद कुर्ते में अपने लिए आश्रय तलाशते रहेंगे। यह ऐसा दुष्चक्र है, जिसमें दल उम्मीदवार चुनते हैं, वोटर उन्हें निर्वाचित करते हैं, कानून लागू करने वाले उन्हें खुला घूमने देते हैं और समाज उन्हें बर्दाश्त करता रहता है। तब वसूली, अवैध फंडिंग, तस्करी, जमीन पर कब्जे और खनन माफिया- सब वैध हो जाते हैं। भारत ऐसा लोकतंत्र नहीं हो सकता है!

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

इस लेख को मोबाइल पर सुनने के लिए QR कोड को स्कैन करें।

8 नवंबर के अंक से विशेष अनुबंध के तहत सिर्फ दैनिक भास्कर में
इकोनॉमिस्ट ने कवर स्टोरी में ग्रीन एनर्जी के क्षेत्र में चीन की बढ़ोतरी के मायनों पर प्रकाश डाला है। मैग्जीन ने अशांत पड़ोसियों के बीच मजबूत भारत की स्थितियों पर गौर किया है।

The Economist

दैनिक भास्कर अब आप इकोनॉमिस्ट के सभी आर्टिकल DB एप पर हर शनिवार पढ़ सकते हैं। डाउनलोड करें डीबी एप।

वर्ल्ड इन ब्रीफ

ग्रैंड थेफ्ट गेम की रिलीज टली, कंपनी के शेयर गिरे

रॉकस्टार गेम्स ने अपने बहुप्रतीक्षित वीडियो गेम ग्रैंड थेफ्ट ऑटो VI की रिलीज फिर से टाल दी है। पहले यह गेम 2025 के पतझड़ में आने वाला था, बाद में तारीख मई 2026 तय की गई थी। अब कंपनी ने नई रिलीज डेट नवंबर 2026 घोषित की है। इसके पिछले संस्करण GTA V की अब तक 21.5 करोड़ से ज्यादा कॉपियां बिक चुकी हैं। यह दुनिया की सबसे सफल गेमों में से एक बन गया। रिलीज में देरी की खबर के बाद रॉकस्टार की पैरेंट कंपनी टेक टु इंटरएक्टिव के शेयरों में 10% गिरावट आ गई।

मोटापा घटाने वाली दवा की कीमतें होंगी कम

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने मोटापा घटाने वाली दवाओं की कीमतें कम करने के लिए एलि लिली और नोवो नॉर्डिस्क कंपनियों के साथ समझौते की घोषणा की है। इस समझौते के तहत कंपनियों को टैरिफ में राहत और नई दवाओं की तेज मंजूरी मिल सकती है। इन वजन घटाने वाली दवाओं को अब मेडिकेयर और मेडिकेट योजनाओं के तहत बुजुर्गों और गरीबों के लिए उपलब्ध कराया जाएगा। साथ ही, ये दवाएं अगले साल शुरू होने वाली सरकारी वेबसाइट TrumpRX के जरिए भी बेची जाएंगी।

वियतनाम: तूफान से बचाने 2 लाख सैनिक मोर्चे पर

टाइफून कलमेगी ने वियतनाम में जोरदार हवाओं और भारी बारिश के साथ तबाही मचाई है। सरकारी मीडिया के अनुसार, अब तक कम से कम दो लोगों की मौत हुई है। सरकार ने 2,68,000 सैनिकों को खोज और बचाव अभियान में लगाया है। यह एशिया का इस साल का सबसे शक्तिशाली तूफान बताया जा रहा है। वियतनाम पहुंचने से पहले इसने फिलीपींस में कम से कम 188 लोगों की जान ली और मध्य द्वीप सेबू (Cebu) के कई कस्बों को पूरी तरह डुबो दिया।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

एनर्जी हर साल 1 टेरावॉट रिन्यूएबल एनर्जी बनाने की क्षमता, मोटी कमाई भी कर रहा

ग्रीन एनर्जी में चीन की क्रांति, अमेरिका-यूरोप से दोगुनी हुई सौर ऊर्जा पैदा करने की क्षमता

दुनिया की मैनुफेक्चरिंग का गढ़ चीन ग्रीन एनर्जी के क्षेत्र में कीर्तिमान रच रहा है। वह ग्रीन एनर्जी की सुपरपावर बन गया है। क्योंकि साल 2024 के अंत तक उसने 887 गीगावॉट सोलर पावर क्षमता स्थापित कर ली। आंकड़ा इसलिए चौंकाता है क्योंकि ये यूरोप और अमेरिका की संयुक्त क्षमता से लगभग दोगुना है। सिर्फ बीते साल में ही सोलर पैनल और विंड टरबाइन के लिए चीन में 2.2 करोड़ टन स्टील का इस्तेमाल हुआ, इतनी मात्रा कि उससे हर हफ्ते एक गोल्डन गेट ब्रिज बनाया जा सकता था।

इसी साल चीन ने सौर और पवन स्रोतों से 1,826 टेरावॉट-घंटे बिजली उत्पन्न की। यह उसके 600 परमाणु हथियारों में निहित कुल ऊर्जा से करीब पांच गुना ज्यादा है। यानी जो देश कभी हथियारों से ताकत मापता था, अब वह स्वच्छ ऊर्जा से शक्ति दिखा रहा है।

शीत युद्ध के समय में किसी देश की ताकत उसके परमाणु हथियारों और महाद्वीपीय आकार से तय होती थी। अब दौर बदल चुका है, अब किसी देश की शक्ति इस बात से तय होगी कि वह कितनी क्लीन एनर्जी को औद्योगिक स्तर पर पैदा कर सकता है।

चीन के पास विशाल मैन्युफैक्चरिंग क्षमता और सस्ती घरेलू बिजली की अपार मांग का अच्छा संयोजन है। यह उसकी सबसे बड़ी ताकत बन चुकी है। चीन अब हर साल करीब एक टेरावॉट नई रिन्यूएबल क्षमता जोड़ सकता है यानी 300 बड़े परमाणु संयंत्रों जितनी बिजली। इसने एक स्वच्छ और सस्ता बिजली चक्र शुरू कर दिया है। क्योंकि जितनी सस्ती बिजली, उतना ज्यादा उत्पादन, और जितना ज्यादा उत्पादन, उतनी सस्ती बिजली।

हालांकि,चीन की यह ग्रीन क्रांति पर्यावरण की चिंता से नहीं, बल्कि स्वार्थ से भी प्रेरित है। जितना ज्यादा वह दुनिया में क्लीन टेक फैलाता है, उतना ही खुद के जलवायु जोखिम घटाता है। उसे आर्थिक लाभ भी मिलता है। पहली बार किसी बड़ी अर्थव्यवस्था के आर्थिक हित और क्लाइमेट लक्ष्य साथ चल रहे हैं।

चीन इसमें विशाल आर्थिक अवसर देखता है। उसका लक्ष्य ये भी है कि नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को ऐसी दरों पर स्थापित करना जो बाकी दुनिया की संयुक्त दरों के बराबर या उससे भी बेहतर हों। आज पाकिस्तान, अफ्रीका और दक्षिण एशिया जैसे देशों में हजारों घरों की छतों पर अब चीनी सोलर पैनल लगे हैं। इससे विकासशील देशों को सस्ती और स्वच्छ बिजली मिल रही है और चीन को कमाने के लिए नया बाजार।

जलवायु समझौते के लक्ष्यों पर भी कर रहा है काम

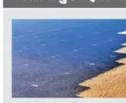

पेरिस जलवायु समझौते के बाद से चीन ने हर पर्यावरणीय लक्ष्य समय से पहले पा लिया है। इस साल ब्राजील में हो रहे COP30 सम्मेलन से पहले चीन ने वादा किया है कि 2035 तक नवीकरणीय क्षमता दोगुनी और उत्सर्जन में मापनीय कमी लाएगा। विशेषज्ञों को भरोसा है कि वह लक्ष्य को पार कर जाएगा।

सस्ते सोलर पैनल दुनियाभर में भेज रहा है

चीन ऊर्जा क्रांति का केंद्र बन चुका है। उसकी ग्रीन टेक्नोलॉजी से कमाई अमेरिका की फॉसिल ईंधन कमाई से ज्यादा है। यूरोप में जहां उद्योग घट रहे हैं और अमेरिका में सोलर नीति पर मतभेद हैं, वहीं चीन की फैक्ट्रियां सस्ते सोलर पैनल और विंड टर्बाइन दुनिया भर में भेज रही हैं।

ऊर्जा के एकाधिकार का डर भी है कुछ देशों को

कुछ देशों को डर है कि चीन ऊर्जा आपूर्ति पर ज्यादा नियंत्रण रख सकता है। लेकिन विशेषज्ञों का कहना है कि सोलर और विंड तकनीक की खूबी यह है — एक बार लग जाने पर यह किसी की मर्जी पर निर्भर नहीं रहती। सूरज और हवा पर कोई टैप नहीं बंद कर सकता।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

साख निवेश के लिए दूसरा सबसे पसंदीदा देश

ब्रिटेन के लोग खुद को कम आंक रहे, लेकिन असल में देश की स्थिति अच्छी

दुनिया पर राज करने वाले ब्रिटेन के भीतर माहौल निराशाजनक है, महंगाई, अपराध और कमजोर सार्वजनिक सेवाओं को लेकर जनता असंतुष्ट है।

तीन-चौथाई ब्रिटिशर्स मानते हैं कि देश गलत दिशा में जा रहा है। लेकिन दुनिया की नजर में तस्वीर अलग है। ब्रिटिश काउंसिल के वैश्विक सर्वे में 18–34 वर्ष के युवाओं में ब्रिटेन G20 देशों में तीसरा सबसे आकर्षक देश निकला। सरकार और संस्थाओं पर भरोसा जापान के बाद यहां सबसे अधिक है। ब्रांड फाइनेंस की रिपोर्ट में ब्रांड ब्रिटेन दुनिया में तीसरे स्थान पर है, जबकि एनहॉल्ट-इप्सॉस ने 50 देशों में पांचवां बताया।

ब्रेक्जिट के झटकों के बाद ब्रिटेन ने कूटनीति में साख फिर से बनाई है। प्रधानमंत्री कीर स्टार्मर ने अमेरिका और यूरोप दोनों से रिश्ते मजबूत किए हैं।

रक्षा उद्योग में ब्रिटेन इटली और जापान के साथ टेम्पेस्ट फाइटर जेट बना रहा है और ऑस्ट्रेलिया के साथ पनडुब्बी परियोजना चला रहा है। व्यवसायिक निवेश में भी देश आकर्षण बना हुआ है। पीडब्ल्यूसी सर्वे में ब्रिटेन निवेश के लिए अमेरिका के बाद दूसरा पसंदीदा देश रहा है। फिल्म, संगीत, बीबीसी और प्रीमियर लीग ने उसकी सांस्कृतिक ताकत बरकरार रखी है।

एआई और टेक्नोलॉजी में भी ब्रिटेन तेजी से आगे बढ़ रहा है। देश के भीतर चाहे निराशा हो, लेकिन दुनिया की नजर में ब्रिटेन अब भी भरोसे, संस्कृति और नवाचार का पर्याय बना हुआ है।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

एआई

एआई कंपेनियन का उपयोग बढ़ा, लेकिन इससे नुकसान

एआई कंपेनियन का मार्केट तेजी से बढ़ रहा है। यूजर एआई चैटबॉट्स से दोस्ती, सलाह और यहां तक कि रोमांटिक रिश्ते बनाने लगे हैं। चीन की 22 वर्षीय जिआयो कभी रिलेशनशिप में नहीं रही। लेकिन चैटजीपीटी को उन्होंने एक आदर्श पुरुष के रूप में ट्रेन कर रखा है। वे उन्हें बेहद पसंद करती हैं। केरेक्टर एआई नामक दोस्ती वाले एक एप के 2 करोड़ मासिक यूजर हैं, जबकि चीन का माओशिएंग 12 लाख से ज्यादा लोगों तक पहुंच चुका है। एआई अब बातें याद रखने लगी है, भावनाएं दिखाने लगी है। इसलिए मांग भी बढ़ी है। ओपनएआई के सैम ऑल्टमैन ने कहा है कि नया चैटजीपीटी और मानवीय होगा। शोध बताते हैं कि ऐसे चैटबॉट्स से बातचीत अस्थायी रूप से अकेलापन कम करती है, लेकिन लंबी अवधि में यह वास्तविक रिश्तों की जरूरत घटा सकती है। अध्ययन के अनुसार एआई का अधिक इस्तेमाल लोगों को और अलग-थलग कर सकता है।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

सफलता एनपीए घटकर 3% हुआ

अस्त-व्यस्त पड़ोसियों के बीच तरक्की की राह पर है भारत

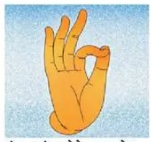

कोई अर्थशास्त्री अगर नई दिल्ली के चारों ओर अपनी सुपर विजन से नजर डाले तो उसे दिखाई देगा कि उत्तर-पूर्व में नेपाल में जेन जी सड़कों पर हैं। पूर्व में बांग्लादेश के छात्रों ने पिछले साल प्रधानमंत्री शेख हसीना को सत्ता से हटाया। दक्षिण में श्रीलंका 2022 के आर्थिक संकट के बाद अब भी कर्ज और महंगाई से जूझ रहा है। तो पश्चिम में पाकिस्तान बार-बार अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष से बेलआउट के लिए दरवाजा खटखटा रहा है। लेकिन इस पूरे दक्षिण एशियाई तूफान के बीच भारत शांत और स्थिर स्थिति में खड़ा है।

रूस से सस्ता तेल खरीदने पर भारत को अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने भारत को निशाने पर लिया तो सीमा पर पाकिस्तान के साथ तनाव बढ़ा। लेकिन भारतीय अर्थव्यवस्था की रफ्तार नहीं टूटी। भारत के दस साल वाले सरकारी बॉन्ड का ब्याज 7% से भी कम है। पाकिस्तान, श्रीलंका को अपने निवेशकों को 12% देना पड़ता है।

भारत का विदेशी मुद्रा भंडार 700 अरब डॉलर से ऊपर है और यह 11 महीनों के आयात के लिए पर्याप्त है। देश की विकास दर लगातार 6-8% बनी हुई है।

बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका और पाकिस्तान अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष की निगरानी में हैं। आज जो स्थिर भारत दिखता है, वह लंबे संघर्ष का परिणाम है। 1947 में आजादी के बाद देश ने कई बार भुगतान संतुलन संकट झेले। 1965 के युद्ध और सूखे के बाद अमेरिका ने भारत से रुपया अवमूल्यन करवाया। 1991 में सरकार को सोना गिरवी रखकर कर्ज लेना पड़ा। तब तत्कालीन वित्त मंत्री मनमोहन सिंह ने सुधारों की शुरुआत की। लाइसेंस राज खत्म किया। रुपए को बाजार में खुला छोड़ा। यहीं से अर्थव्यवस्था को नई दिशा मिली। 2013 में भारत उन देशों में गिना जाता था, जो विदेशी पूंजी पर निर्भर थे।

भारत सरकार ने बैंकों को खराब कर्ज साफ करने पर मजबूर किया। एनपीए 2018 के 15% से घटकर सिर्फ 3% रह गए हैं। कोरोना के बाद जो राजकोषीय घाटा 9% था, वह 5% से नीचे है। मैन्युफैक्चरिंग एक्सपोर्ट धीमा है, लेकिन सेवा क्षेत्र अब जीडीपी का 15% कमा रहा है। दस साल पहले यह 11% था। भारत अब विदेशी पूंजी पर कम, उत्पादकता पर ज्यादा निर्भर है। रूस से सस्ता कच्चा तेल खरीदकर देश ने पिछले साल 8 अरब डॉलर की बचत की। रिफाइनरी नें रणनीतिक तेल भंडार ने भारत की ऊर्जा सुरक्षा मजबूत की है।

भारतीयों को भरोसा, भविष्य और अच्छा होगा

नेपाल और बांग्लादेश में असमानता और बेरोजगारी से आंदोलन भड़कते हैं। भारत में भी ग्रेजुएट बेरोजगारी 29% है, आरक्षण पर असंतोष मौजूद है। फिर भी यहां बड़े विरोध नहीं हुए। क्योंकि भारतीयों को भरोसा है कि भविष्य बेहतर होगा। सीएमआईई के सर्वे के मुताबिक लोग आज के जीवन को 10 में से 4 या 5 अंक देते हैं, लेकिन पांच साल बाद की उम्मीद 6 या 7 अंक की है। लोगों को यकीन है कि यह दौर अस्थायी है। जब पड़ोसी देश कर्ज, महंगाई और अस्थिरता में उलझे हैं, भारत सुधार, अनुशासन और आत्मविश्वास के दम पर आगे बढ़ रहा है। उसकी स्थिरता सिर्फ नीतियों से नहीं, बल्कि लोगों की उम्मीद और भरोसे से बनी है।

© 2022 The Economist Newspaper Limited. All rights reserved

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

संपादकीय

रेल सुरक्षा: सुधार की पटरियों पर कब चढ़ेगा सिस्टम?

भारत की रेल पटरियां देश की धमनियां कही जाती हैं, जो प्रतिदिन करोड़ों लोगों को उनके गंतव्य तक पहुंचाती हैं, जो अर्थव्यवस्था का इंजन चलाती हैं, जो इस विशाल देश की सामाजिक-सांस्कृतिक एकता का प्रतीक हैं लेकिन जब इन्हीं पटरियों पर बार-बार मौत की चीखें गूंजती हैं तो सवाल केवल हादसों का नहीं रहता बल्कि उस पूरे तंत्र की आत्मा पर उठता है। बिलासपुर के लाल खदान में हुआ हालिया रेल हादसा इसी गहरी लापरवाही का ताजा उदाहरण है, जहां एक मेमू ट्रेन मालगाड़ी से टकरा गई, 11 यात्रियों की मौत हो गई और 25 से ज्यादा घायल हो गए। इंजन मालगाड़ी के गार्ड केबिन पर चढ़ गया और वह मंजर किसी युद्धस्थल से कम नहीं था। छत्तीसगढ़ के बिलासपुर की यह दुर्घटना देश के लिए महज एक और संख्या नहीं है बल्कि इस बात की प्रतीक है कि भारत के रेल तंत्र में तकनीक, सतर्कता और जवाबदेही का घोर अभाव है। बिलासपुर कलेक्टर के अनुसार, ट्रेन कोरबा से बिलासपुर के लिए रवाना हुई थी और गतौरा-बिलासपुर के बीच मालगाड़ी से टकरा गई। इस टक्कर ने एक बार फिर यह उजागर कर दिया कि देश में रेलवे की सुरक्षा व्यवस्था आज भी कागज पर कवच से ज्यादा कुछ नहीं है। हादसे की भयावहता के साथ जब हम इसी साल के कुछ अन्य रेल हादसों पर नजर डालते हैं तो सिहरन-सी उठती है। महाराष्ट्र के ठाणे में जून 2025 में चार यात्रियों की मौत केवल इसलिए हुई थी क्योंकि भीड़भाड़ वाली दो लोकल ट्रेनों में पायदान पर लटकते यात्रियों के बैग आपस में टकरा गए थे। बिहार के कटिहार में जून 2025 में अवध असम एक्सप्रेस रेलवे ट्रॉली से टकरा गई, जिससे एक ट्रॉलीमैन की मौत और चार कर्मचारी गंभीर घायल हुए। मार्च में ओडिशा के कटक जिले में बेंगलुरू-कामाख्या सुपरफास्ट एक्सप्रेस के 11 डिब्बे पटरी से उतर गए थे। अप्रैल 2025 में झारखंड के साहेबगंज में दो मालगाड़ियों की टक्कर में दो लोगों की मौत हुई। जुलाई 2025 में उसी जिले के बरहड़वा में बिना लोको पायलट की 14 बोगियां तेज रफ्तार से दौड़ती हुई दूसरी मालगाड़ी से जा टकराईं। बिलासपुर का हादसा इस साल का सबसे बड़ी रेल दुर्घटना बन चुका है। यह स्पष्ट संकेत है कि हादसे अब अपवाद नहीं बल्कि एक भयानक पैटर्न बन चुके हैं। हर बार रेल मंत्रालय बयान देता है, दोषियों पर कार्रवाई होगी, मुआवजा दिया जाएगा, जांच समिति गठित की गई है और फिर कुछ ही दिनों में सब भुला दिया जाता है। सवाल है कि क्या रेलवे अब केवल प्रतिक्रिया देने वाला तंत्र बन गया है, जहां कार्रवाई केवल तभी होती है, जब हादसा हो चुका होता है? भारत में रेल हादसों का इतिहास उतना ही पुराना है, जितनी रेल सेवा स्वयं। भारत में हर साल बहुत बड़ी संख्या में होने वाले रेल हादसों में से करीब 70 प्रतिशत हादसे मानव त्रुटि के कारण होते हैं यानी या तो सिग्नलिंग सिस्टम में गलती या ट्रैक निरीक्षण में लापरवाही या फिर ट्रेन संचालन में मानवीय भूल।

नई दिल्ली कार्यालय
एक्शन बालाजी हाउस, बी-244, मजलिस पार्क, दिल्ली- 110033

उत्तरी दिल्ली कार्यालय
शक्ति कॉम्पलैक्स, 6/18, समयपुर इंडस्ट्रियल एरिया, दिल्ली- 110042

चंडीगढ़ कार्यालय
फर्स्ट फ्लोर, देश सेवक बिल्डिंग, सेक्टर- 29डी, चंडीगढ़

पंजाब कार्यालय
7/2, थर्ड फ्लोर, मोनिका, टावर, ईआर-146, पक्का बाग, मिलाप चौक, जालंधर

करनाल कार्यालय
224, सेक्टर 32पी, करनाल- 132001

सोनीपत कार्यालय
एक्शन इंडिया कार्यालय, अपोजिट एनएस कम्प्यूटर, झंडी रोड़, गीता भवन चौक सोनीपत- 131001

शिमला कार्यालय
किशोर भवन, जोधा निवास, डेजी बैंक एस्टेट, लोअर जाखू, शिमला- 171001

ऊना कार्यालय
कृष्णा टावर, सब्जी मंडी के सामने, ऊना-174303

देहरादून कार्यालय
7/1, बल्लूपुर रोड़, कृष्णा नगर चौक, देहरादून

वंदे मातरम: राष्ट्रभाव के 150 वर्ष

नायब सिंह सैनी,
मुख्यमंत्री हरियाणा

> “इस कालखंड में देश की हर गली व सड़क से लेकर क्रांतिकारियों की गुप्त सभाओं तक, हर भारतीय के गले में एक ही स्वर गूँज रहा था - वंदे मातरम्। यही वह गीत था, जिसने मातृभूमि को देवी के स्वरूप में स्थापित किया और आजादी की लड़ाई को आध्यात्मिक, भावनात्मक व वैचारिक शक्ति प्रदान की। 1950 में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी ने राष्ट्र गीत का दर्जा प्रदान किया। मेरा मानना है कि किसी भी आंदोलन को सफल बनाने के लिए केवल अस्त्र-शस्त्र ही नहीं, बल्कि भाव, विचार, विश्वास और राष्ट्रीय चरित्र की भी आवश्यकता होती है”

वर्ष 2025, भारत के इतिहास का वह ऐतिहासिक पड़ाव है, जब राष्ट्रीय गीत वंदे मातरम् के 150 वर्ष पूरे हो रहे हैं। 1875 में बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह गीत केवल साहित्य की रचना नहीं था। यह भारतीय चेतना, अस्मिता, स्वाधीनता व राष्ट्रभाव के बीज बोने वाला शब्द-शस्त्र था। यह गीत जन-मन की वही ऊर्जा है, जिसने गुलामी के अंधकार को भेदकर स्वतंत्रता की सुबह का विश्वास जगाया। भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष के 150 वर्षों के कालखंड में ऐसा कोई दौर नहीं था, जब वंदे मातरम् का स्वर क्रांतिकारियों, सत्याग्रहियों, समाज सुधारकों, युवाओं व भारत माता के लिए मर मिटने वाले राष्ट्रभक्तों के गले से न फूटा हो। 1875 में बंगाल के तत्कालीन राजनीतिक व सामाजिक परिदृश्य में उत्पन्न यह गीत धीरे-धीरे भारत की आत्मा की आवाज बन गया। 1882 में आनंदमठ उपन्यास के माध्यम से यह गीत जन-चेतना के केन्द्रीय भाव में स्थापित हुआ। 1896 में कलकत्ता में हुए कांग्रेस अधिवेशन में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा पहली बार सार्वजनिक गायन किया गया। फिर 1905 का बंग-भंग आंदोलन आया, जिसने इस गीत को राष्ट्रीय स्वाभिमान का जीवित प्रतीक बना दिया। इस कालखंड में देश की हर गली व सड़क से लेकर क्रांतिकारियों की गुप्त सभाओं तक, हर भारतीय के गले में एक ही स्वर गूँज रहा था झ वंदे मातरम्। यही वह गीत था, जिसने मातृभूमि को देवी के स्वरूप में स्थापित किया और आजादी की लड़ाई को आध्यात्मिक, भावनात्मक व वैचारिक शक्ति प्रदान की। 1950 में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी ने राष्ट्र गीत का दर्जा प्रदान किया। मेरा मानना है कि किसी भी आंदोलन को सफल बनाने के लिए केवल अस्त्र-शस्त्र ही नहीं, बल्कि भाव, विचार, विश्वास और राष्ट्रीय चरित्र की भी आवश्यकता होती है। वंदे मातरम् ने गुलामी पर गर्व करने की गुलाम मानसिकता को तोड़ा और भारत की जनता को यह बताया कि हम भी विश्व की सबसे प्राचीन सभ्यताओं में से एक हैं। हमारे पास संस्कृति है, परंपरा है, मूल्य हैं, आत्मसम्मान है और मातृभूमि की रक्षा का अटूट संकल्प है। इसी गीत की उर्जा से सावरकर जैसे वीर जगे, चन्द्रशेखर आजाद जैसी शहादतें जन्मीं, भगत सिंह जैसे क्रांतिकारी पले, नेताजी सुभाष चंद्र बोस जैसे राष्ट्रवादी नायक विश्व मंच पर उठे। इतिहास साक्षी है कि वंदे मातरम् का एक-एक शब्द ब्रिटिश सत्ता की नींद उड़ाने में सक्षम था। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के कुशल नेतृत्व में आज जब भारत आत्मनिर्भरता, तकनीकी नेतृत्व, अंतरराष्ट्रीय आस्था, सांस्कृतिक पुनरुत्थान और वैश्विक शांति जैसे नए आयामों की ओर तेज गति से बढ़ रहा है। तब वंदे मातरम् की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। अमृतकाल का भारत केवल इतिहास की महिमा का पाठ नहीं पढ़ना चाहता, बल्कि आने वाले भविष्य के भारत को गढ़ना चाहता है। यह गीत आज भी भारतीय लोकतंत्र के नैतिक कम्पास जैसा है, जो हमें याद दिलाता है कि राजनीति का लक्ष्य सत्ता नहीं, राष्ट्र सर्वोच्च है। मोदी जी का मानना है कि विकास के हर निर्णय में भारत पहले, भारत की जनता पहले, भारत की अस्मिता पहले, यही भारतीय लोकतंत्र की मूल दिशा होनी चाहिए। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने बीते वर्षों में वंदे मातरम् के संदेश को आधुनिक राष्ट्रनिर्माण के भाव से पुनर्स्थापित किया है। उन्होंने इसे केवल सांस्कृतिक स्मृति या प्रतीकवाद तक सीमित नहीं रखा, बल्कि इसे नई पीढ़ी की राष्ट्र चेतना के केंद्र में स्थापित किया है। आज जब भारत विश्व शक्ति के रूप में उभर रहा है, प्रधानमंत्री मोदी जी ने हर मंच, हर अवसर, हर वैश्विक संवाद में भारत की हजारों वर्ष पुरानी सभ्यता की प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित किया है। उन्होंने मातृभूमि के प्रति सम्मान, भारत की पहचान पर गर्व, भारतीयता को आत्मविश्वास के साथ अपनाने और राष्ट्र सर्वोपरि की भावना को जन-जन तक पहुँचाया है। वंदे मातरम् के इस 150 वर्ष के पड़ाव पर यह कहना उचित है कि नये भारत की विचारधारा, नये भारत का आत्मविश्वास और नये भारत की नीति दिशा, सब में इस गीत की आत्मा कार्यशील व जीवित रूप में दिखती है। अगले 25 वर्ष भारत के भविष्य निर्माण का निर्णायक काल है। आने वाले 2047 के भारत की यात्रा केवल आर्थिक महाशक्ति बनने की यात्रा नहीं, यह सामूहिक चरित्र, नये सामाजिक अनुशासन, नये सांस्कृतिक अभ्युदय और लोकतंत्र की नई ऊंचाईयां छूने की यात्रा है। यह वह समय है जब भारत को सभी पीढ़ियों को एक सूत्र में पिरोने वाली साझा राष्ट्रीय भावना की आवश्यकता है। यही साझा राष्ट्रीय भावना वंदे मातरम् में निहित है। यह गीत भारत को केवल भावनात्मक रूप से नहीं जोड़ता, बल्कि यह हमारी लोकतान्त्रिक जिम्मेदारी को जागृत करता है। यह हमें याद दिलाता है कि राष्ट्रवाद विभाजन का नहीं, राष्ट्रवाद एकता का नाम है। यही राष्ट्रवाद भारत के लोकतंत्र को विश्व का सबसे सशक्त, सर्वश्रेष्ठ और सर्वसमावेशी लोकतंत्र बनाता है। वंदे मातरम् माँ भारती को प्रणाम करने का मंत्र है। यह गीत हमारे संविधान, हमारी संस्कृति, हमारी स्वतंत्रता, हमारी अस्मिता और हमारी साझा राष्ट्रीय चेतना का अमर गीत है। आज जब 150 वर्ष पूरे हो रहे हैं, हमें भारत की आने वाली पीढ़ियों को यह बताना चाहिए कि चाहे देश कितना भी आगे बढ़ जाए, चाहे तकनीक कितनी भी उन्नत हो जाए, चाहे वैश्वीकरण कितना भी व्यापक हो जाए, हमारी आत्मा, हमारी पहचान और हमारी राष्ट्रीय धुरी मातृभूमि ही रहेगी। भारत की माटी से बढ़कर कोई पूज्य नहीं है। वंदे मातरम्।

इतिहास साक्षी है कि वंदे मातरम का एक-एक शब्द ब्रिटिश सत्ता की नींद उड़ाने में सक्षम था। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के कुशल नेतृत्व में आज जब भारत आत्मनिर्भरता, तकनीकी नेतृत्व, अंतरराष्ट्रीय आस्था, सांस्कृतिक पुनरुत्थान और वैश्विक शांति जैसे नए आयामों की ओर तेज गति से बढ़ रहा है। तब वंदे मातरम की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। अमृतकाल का भारत केवल इतिहास की महिमा का पाठ नहीं पढ़ना चाहता, बल्कि आने वाले भविष्य के भारत को गढ़ना चाहता है

डरावने हैं छात्रों की आत्महत्या के आंकड़े

राजेश माहेश्वरी

लोगों में आत्महत्या की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ रही है। जो न केवल चिंताजनक है बल्कि डरावनी भी है। आत्महत्या के तेजी से बढ़ते आंकड़े यह दशार्ते हैं कि लोग मानसिक रूप से इतने कमजोर होते जा रहे हैं कि छोटी-छोटी बातों पर जिंदगी खत्म कर लेने जैसा बड़ा कदम उठा ले रहे। शोध और सरकारी दस्तावेजों से पता चलता है कि छात्रों की आत्महत्याओं के पीछे मुख्य कारण शैक्षणिक और सामाजिक तनाव के साथ-साथ कॉलेजों या संस्थाओं से मदद ना मिलना और जागरूकता का अभाव है। बीती 31 अक्टूबर से 3 नवंबर चानी चार दिनों में यूपी के प्रयागराज जिले में एक दर्जन लोगों ने अपनी जिंदगी खत्म कर ली। इनमें सबसे बड़ी संख्या किशोरों और युवाओं की है। बीती 31 अक्टूबर को करेली के जीटीबी नगर के 15 वर्षीय इमरान ने फांसी लगाकर जान दे दी। उसे मां ने पढ़ाई के लिए डांट दिया था। युवाओं की आत्महत्या के मामले देश में तेजी से बढ़ रहे हैं। प्रयागराज ही नहीं देशभर से ऐसी खबरें आती रहती हैं। राष्ट्रीय अपराध रेकॉर्ड ब्यूरो के रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2023 में देश की शिक्षण संस्थाओं में 13,892 छात्रों की मौत को गले लगाया। यह तथ्य हृदयविदारक ही है कि देश में एक साल के दौरान करीब चौदह हजार छात्रों ने आत्महत्या की। पहली नजर में आत्मघात के मूल में पढ़ाई का दबाव, छात्रों की संवेदनशीलता और तंत्र की नाकामी बताई जा सकती है। लेकिन सवाल है कि हमारा तंत्र क्यों संवेदनहीन बना हुआ है? सबसे दुखद स्थिति यह है कि यह संख्या पिछले एक दशक में पैंसठ प्रतिशत बढ़ी है। वहीं इस आंकड़े की तुलना यदि वर्ष 2019 से करें तो यह वृद्धि चौंतीस फीसदी दर्ज की गई है। जाहिर बात है कि यह वृद्धि छात्रों की मानसिक पीड़ा, हताशा और भविष्य के प्रति निराश होने की स्थिति को ही दशार्ती है। निश्चित रूप से हमारी शिक्षा की विसंगतियां भी इन आत्महत्याओं के मूल में हैं। देश में भाषा व बोर्ड स्तर पर पाठ्यक्रम व शिक्षण की स्थिति में खासा अंतर है। इन मामलों के मद्देनजर सुप्रीम कोर्ट ने राज्य सरकारों को तलब करके इस बाबत विस्तृत विवरण मांगा है। साथ ही सवाल पूछा है कि क्या देश के सभी शिक्षण संस्थान छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य के प्रति जिम्मेदारी निभा रहे हैं? विडंबना यह है कि देश में मोटी पगार वाली नौकरियों की गलाकाट स्पर्धा में शिक्षण संस्थाएं व शिक्षक उस दायित्व को भूल गए हैं, जो छात्रों को विषयगत शिक्षा के साथ विषम परिस्थितियों के बीच जीवन जीने की कला सिखा सके। उन्हें व्यावहारिक जीवन का कौशल सिखाने के साथ ही चुनौतियों से जूझने की मानसिक शक्ति विकसित करने के लिए तैयार कर सकें। आखिर किसी परिवार की उम्मीद को किस स्थिति में यह सोचना पड़ता है कि मौत को गले लगाना अंतिम विकल्प है? अहज सवाल यह भी है कि शिक्षा परिसरों में ऐसी स्थितियां क्यों विकसित हो रही हैं कि विद्यार्थी जीवन से हार मानने लगे हैं? निस्संदेह, शिक्षण संस्थानों का एक मात्र लक्ष्य किताबी ज्ञान देकर डिग्री बांटने तक ही नहीं हो सकता।

विचार

एक राष्ट्र-एक चुनाव: लोकतंत्र को नई दिशा देने में युवा शक्ति का संकल्प

मदन मोहन छाबड़ा, प्रांत सह संयोजक, एक राष्ट्र-एक चुनाव समिति

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के एक राष्ट्र-एक चुनाव के संकल्प को पूरा करने में युवा शक्ति सबसे अहम भूमिका है। युवाओं की जनभागीदारी से एक राष्ट्र-एक चुनाव को जन आंदोलन का स्वरूप मिलेगा और युवा भारत के जागरूक कदम लोकतंत्र को नई दिशा देंगे। यही दिशा भारत को आत्मनिर्भर, विकसित और एकजुट बनाएगी, क्योंकि भारत की युवा पीढ़ी अपने संकल्प, नवाचार और ऊर्जा से विकसित भारत 2047 के विजन को साकार करने की क्षमता रखती है। एक राष्ट्र-एक चुनाव की पहल नया अध्याय खोल सकती है। भारत में एक राष्ट्र-एक चुनाव का विचार कोई नई परिकल्पना नहीं है, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने बार-बार चुनावी चक्र और विकास कार्यों की धीमी होती रफ्तार को नई गति देने के लिए नई पहल की है। हालांकि, इससे पहले भारत में स्वतंत्रता के बाद 1952, 1957, 1962 और 1967 तक लोकसभा व अधिकांश विधानसभाओं के चुनाव एक साथ ही हुए थे। परंतु 1968झ69 में कुछ राज्यों की विधानसभाएं समय से पहले भंग हो गई, जिससे यह समानता टूट गई। तब से लेकर अब तक चुनाव अलग-अलग समय पर होते रहे हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि देश लगभग हर वर्ष किसी न किसी राज्य में चुनाव प्रक्रिया में व्यस्त रहता है। निर्वाचन आयोग के अनुसार, औसत हर 6झ8 माह में किसी राज्य में विधानसभा चुनाव होते हैं। बार-बार होने वाले चुनाव न केवल आर्थिक दृष्टि से महंगे हैं, बल्कि शासन-प्रशासन की निरंतरता पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। केंद्र व राज्य स्तर पर चुनाव आचार संहिता लागू होने से नीतिगत निर्णयों में ठहराव आ जाता है, जिससे विकास परियोजनाओं की गति प्रभावित होती है। बहरहाल, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी आजादी के 100 वर्ष पूरे होने पर विकसित भारत का जो विजन तैयार किया है, उसे पूरा करने में युवाओं की अहम भूमिका रहेगी, वहीं एक राष्ट्र-एक चुनाव के विजन को पूरा करने में युवा अहम हैं। इस परिवर्तनशील यात्रा के केंद्र में वह युवा शक्ति है, जो न केवल राष्ट्र की ऊर्जा का स्रोत है, बल्कि लोकतंत्र की दिशा और दशा तय करने की क्षमता भी रखती है। क राष्ट्र, एक चुनाव की अवधारणा केवल प्रशासनिक या राजनीतिक सुधार का प्रस्ताव नहीं है, बल्कि यह लोकतांत्रिक दक्षता, जवाबदेही और राष्ट्रीय समरसता की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। केंद्र सरकार की ओर से एक राष्ट्र-एक चुनाव को लेकर उच्चस्तरीय समिति का गठन किया है, जिसके अध्यक्ष पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद हैं। समिति को यह अध्ययन करने का दायित्व सौंपा गया है कि लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराए जाने की व्यवहार्यता, संवैधानिक निहितार्थ और प्रशासनिक तैयारियां क्या होंगी, इस पर समिति कार्य कर रही है। राजनीतिक जानकारों का मत है कि 21वीं सदी की भारतीय युवा पीढ़ी डिजिटल युग में पली-बढ़ी है, जो सूचना-संपन्न है और अपने अधिकारों व जिम्मेदारियों को लेकर सजग भी है। युवाओं की सोच निर्णायक होती है। वे पुराने ढांचों को चुनौती देने और नयी व्यवस्था को स्वीकारने की सबसे बड़ी क्षमता रखते हैं। एक राष्ट्र, एक चुनाव जैसे विचार के सामने आने पर सबसे पहले यही वर्ग नीति के सार और प्रभाव को समझने का प्रयास करता है। यदि देश में बार-बार होने वाले चुनावों से नीति निर्माण रूक जाता है, विकास परियोजनाएं ठहर जाती हैं और संसाधन प्रचार में व्यय हो जाते हैं तो इसका दीर्घकालिक नुकसान भी आने वाली पीढ़ी को ही भुगतना पड़ता है। इसलिए, युवाओं की भूमिका केवल मतदाता की नहीं, बल्कि नीति-नागरिक की होनी चाहिए, जो यह समझ सके कि लोकतंत्र में दक्षता भी उतनी ही आवश्यक है जितनी स्वतंत्रता। यदि देश में लोकसभा और सभी राज्यों के चुनाव एक साथ होंगे, तो मतदान का वातावरण एक राष्ट्रीय आंदोलन जैसा बन सकता है, जिसमें युवाओं की भागीदारी एकजुट राष्ट्रीय चेतना के रूप में उभर सकती है। वर्ष 2047 तक भारत को विकसित राष्ट्र बनाने की परिकल्पना केवल आर्थिक वृद्धि का लक्ष्य नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी शासन व्यवस्था की मांग करती है जो नीति की निरंतरता, स्थिरता और जवाबदेही सुनिश्चित करे।

एक्शन इंडिया दैनिक

भगवान शंकर जी के ग्यारहवें रुद्रावतार हनुमान जी (मेंहदीपुर, श्री बाला जी) के संरक्षण में संचालित किया जाता है। समाचार-पत्र का यह अंक भी उन्हीं के चरणों में श्रद्धापूर्वक समर्पित है।

आरएनआई: DELHIN / 2006 / 19302

एक्शन इंडिया मल्टीमीडिया प्राइवेट लिमिटेड के लिए संपादक, मुद्रक, प्रकाशक एवं रवि भारद्वाज द्वारा एक्शन बालाजी हाउस, 244, ब्लॉक- बी, लेन- 3, राकेश भारद्वाज चौक के नजदीक, दिल्ली - 110033 से प्रकाशित एवं मारुतिनंदन प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स, शक्ति कॉम्प्लेक्स, 6/18, समयपुर इंडस्ट्रियल एरिया, दिल्ली-110042 से मुद्रित।
संस्थापक : श्रद्धेय राकेश भारद्वाज जी
समूह संपादक : रवि भारद्वाज (9999889104)
मेट्रो संपादक : दीपचंद्र कांडपाल (8447314925)
'एक्शन इंडिया' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त किये गये विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक केवल पीआरबी एक्ट के तहत ही उत्तरदायी। किसी भी विवाद का न्यायिक क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

वैधानिक सूचना
पाठकों को सलाह है कि एक्शन इंडिया, समाचार पत्र में प्रकाशित किसी भी विज्ञापन के आधार पर कोई निर्णय लेने से पहले विज्ञापन में प्रकाशित उक्त उत्पाद या सेवा के बारे में आवश्यक जांच-पड़ताल कर लें। समाचार पत्र प्रबंधक किसी भी विज्ञापन में गुणवत्ता, सेवा आदि के विवरण के बारे में विज्ञापनदाता द्वारा किए गए दावे या उल्लेख की पुष्टि या समर्थन नहीं करता है। अतः समाचार पत्र उक्त विज्ञापनों के बारे में किसी प्रकार से उत्तरदायी नहीं होगा।

आलेख

जेएनयू छात्र संघ चुनाव में कैसे राइट पर भारी पड़ा लेफ्ट

संजय सक्सेना

नई दिल्ली के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में इस साल के छात्रसंघ चुनाव नतीजों ने फिर इतिहास दोहरा दिया। राइट विंग के उम्मीदवारों को हाशिये पर ढकेल कर यहां के छात्रों ने लेफ्ट की विचारधारा को तवज्जो दी। वामपंथी छात्र संगठनों के साझा गठबंधन लेफ्ट यूनिटी ने चारों केंद्रीय पदों पर जीत दर्ज कर एक बार फिर साबित किया कि जेएनयू की राजनीति में अभी भी लाल विचारधारा की जड़ें गहरी हैं। वहीं अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (एबीवीपी) को एक भी केंद्रीय पद पर जीत नहीं मिल सकी, जो उसके लिए पिछले कुछ वर्षों में सबसे बड़ा झटका माना जा रहा है। यह केवल एक चुनावी नतीजा नहीं, बल्कि छात्र राजनीति के बदलते रुख, विचारधारात्मक संघर्ष और नए युग की शुरूआत का संकेत है।पिछले पांच वर्षों में जेएनयू की राजनीति में जिस तरह के उतार-चढ़ाव देखे गए, उसने इस बार के नतीजों को और दिलचस्प बना दिया। 2020 के बाद से विश्वविद्यालय में छात्र संघ चुनाव लगातार राजनीतिक खींचतान का केंद्र रहे हैं। कभी एबीवीपी ने कैंपस में अपनी उपस्थिति मजबूत की, तो कभी वाम छात्र संगठन आपसी मतभेदों से जूझते दिखे। मगर इस बार हालात उलट गए। वामदलों ने पहली बार बेहद संगठित रणनीति अपनाई कर एकता बनाए रखते हुए उन्होंने हर संकाय और हर हॉस्टल स्तर तक गहराई से काम किया। यही कारण रहा कि अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, महासचिव और संयुक्त सचिव, चारों पदों पर लेफ्ट यूनिटी के उम्मीदवारों ने एबीवीपी को बड़े अंतर से हराया।

अध्यक्ष पद पर वाम उम्मीदवार अदिति मिश्रा की जीत सबसे ज्यादा सुर्खियों में रही। अदिति जेएनयू के स्कूल ऑफ इंटरनेशनल स्टडीज से शोध कर रही हैं और उन्होंने अपने चुनाव प्रचार के दौरान फीस वृद्धि, शोध छात्रवृत्ति, हॉस्टल में सुविधाओं की कमी और छात्र सुरक्षा जैसे मुद्दों को मुख्य केंद्र में रखा। उन्होंने कहा था कि ह्लजेएनयू का संघर्ष सिर्फ विचारों का नहीं, बल्कि शिक्षा को सबके लिए सुलभ बनाने का है। उनका यह सीधा और भावनात्मक संदेश छात्रों के दिल में उतर गया।

राजनीति में भाषा की मर्यादा का प्रश्न*

डॉ. सुधाकर आशावादी

जिस देश में राजनीति को राष्ट्र कल्याण और जनसेवा के लिए समर्पित नहीं समझा जाता, वहां राजनीतिक शुचिता की बात करना ही बेमानी है। विगत कुछ वर्षों से सत्ता स्वार्थ के लिए राजनीतिक दल और उनके समर्थक जिस प्रकार की नकारात्मक राजनीति कर रहे हैं तथा भीड़ जुटाने के लिए धन बल का प्रयोग कर रहे हैं, उससे लगता है कि राजनीति विशुद्ध रूप से व्यवसायिक होती जा रही है, जिसका उद्देश्य ही जनता को झूठ, फरेब,झूठे वादों से भ्रमित करके देश के लोकतंत्र को छलना है। यदि ऐसा न होता, तो सोची समझी शतरंजी चालों से एक दूसरे को नीचा दिखाने के लिए राजनीतिक दलों से जुड़े लोग न तो भाषाई मयार्दा लांघते और न ही विघटनकारी चालें चलकर समाज को बांटने का प्रयास करते। न ही राजनीति में भारतीय सेना को घसीटते और न ही पप्पू, अप्पू, टप्पू जैसे तीन बंदरों की तुलना राजनीतिक चरित्रों से की जाती। न ही बदले में दो बंदरों गप्पू और चम्पू की बात की जाती। यदि किसी संवैधानिक पद पर बैठा व्यक्ति ऐसी बातें करे, तो स्वाभाविक रूप से प्रश्न उठता है, कि क्या किसी उच्च पद पर आसीन अनुकरणीय व्यक्ति द्वारा ऐसी भाषा का प्रयोग करना उचित है? यह तो बानगी भर है। इससे अधिक भाषाई मयार्दा तब तार तार होती है, जब पत्रकार वाताओं में खुला झूठ बोलकर देश के बड़े नायकों के विरुद्ध अपमानजनक भाषा का प्रयोग किया जाता है। बेशर्मी से ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जिन शब्दों के अर्थ और परिभाषा का ज्ञान भी आरोप लगाने वाले व्यक्ति को नहीं होता। हास्यापद स्थिति तब होती है, जब दूसरे पक्ष के लोग भी अमर्यादित भाषा का विरोध करने की हिम्मत जुटाने के बदले अमर्यादित भाषा के बचाव में कुतर्क देने लगते हैं। भाषा की मयार्दा लांघने में किसी भी एक दल या एक नेता को दोषी नहीं कहा जा सकता। राजनीति के हमाम में सभी एक जैसे हैं, कोई थोड़ा कम, कोई थोडा अधिक। यूँ तो अमर्यादित भाषा का प्रयोग करने पर दण्ड़ का प्रावधान है,किन्तु मानहानि के वाद में दण्ड़ की औपचारिकता कितनी निभाई जाती है, यह भी किसी से छिपा नहीं है। ऐसे में भयमुक्त होकर भाषाई मयार्दा को लांघना सामान्य बात हो गई है।

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

बिज़नेस रेमेडीज

वर्ष : 3 । अंक : 291

सम्पादकीय

भारत में एआई के बढ़ते कदम, विभिन्न क्षेत्रों में हो रहा है उपयोग

भारत में एआई का उपयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। कई कंपनियों द्वारा एआई प्रशिक्षित स्टाफ रखकर अपने काम को अंजाम दिया जा रहा है। वर्तमान में विभिन्न क्षेत्रों जैसे स्वास्थ्य सेवा में रोगों का शीघ्र निदान और ग्राहक सेवा में वर्चुअल असिस्टेंट के रूप में और यह व्यक्तिगत अनुशंसाओं से लेकर स्वचालित कारों तक कई अनुप्रयोगों को शक्ति प्रदान कर रहा है। यह डेटा विश्लेषण और पैटर्न पहचान करके समझदारी भरे निर्णय लेने में मदद कर रहा है और समय के साथ सीखकर और बेहतर होकर, व्यापार और वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए नई संभावनाओं को खोल रहा है। इसके अलावा यह स्टॉफ के लिए कार्यस्थल पर काम करने तरीकों को बदलने को लेकर भी मुख्य भूमिका निभा रहा है। एक रिपोर्ट में भी बताया गया है कि करीब 75 फीसदी कर्मचारी एआई का इस्तेमाल कॅरियर को प्लान करने और समस्या को हल करने के लिए भी कर रहे हैं। एआई सिरी और एलेक्सा जैसे आभासी सहायक प्रश्नों का उत्तर देने, संदेश भेजने या मौसम की जानकारी देने जैसे काम भी कर रहा है। चिकित्सा क्षेत्र में यह रोगों का जल्द पता लगाने, मेडिकल रिकॉर्ड बनाने और बीमा दावों को निपटाने में मदद कर रहा है। इसके अलावा डेटा का विश्लेषण करके बेहतर व्यावसायिक निर्णय लेने और वित्तीय धोखाधड़ी का पता लगाने में मदद कर रहा है। स्वचालित कारों को चलाना, यातायात प्रवाह को अनुकूलित करना और सुरक्षित परिवहन प्रदान करना संभव बना रहा है। छात्रों के लिए व्यक्तिगत शिक्षा और शिक्षक के कार्यों को कम करके शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार की ओर बढ़ रहा है। वीडियो गेम में विरोधियों को नियंत्रित करने और खेल के अनुभव को अधिक रुचिकर बनाने के लिए उपयोग किया जा रहा है। वैज्ञानिक गणनाओं और डेटा विश्लेषण में सहायता प्रदान कर रहा है।

BR सूचना

इस पृष्ठ पर प्रकाशित सभी विशेष लेख व्यक्तिगत सोच के आधार पर है।
-संपादक

क्या बुजुर्गों के सहारे चलेगा भारत या युवाओं के दम पर?

सुनील दत्त गोयल, महानिदेशक, इम्पीरियल चेम्बर ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री एवं पूर्व उपाध्यक्ष-जयपुर स्टॉक एक्सचेंज लिमिटेड, राजस्थान

आज मैं पूरे देश का ध्यान एक ऐसे सामाजिक सरोकार की ओर दिलाना चाहता हूँ, जहाँ अक्सर यह कहा जाता है कि भारत नवयुवकों का देश है। परंतु क्या वाकई ऐसा है? सच यह है कि भारत अब तेज़ी से बुजुर्गों की संख्या बढ़ाने वाले देशों की कतार में शामिल हो गया है। आने वाले 10-15 वर्षों में हमारे सामने बुजुर्ग आबादी विस्फोटक रूप से बढ़ेगी। यह केवल जनसंख्या का मामला नहीं होगा, बल्कि एक गहरी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्या के रूप में सामने आएगा। सवाल यह है कि क्या भारत भविष्य में युवाओं के दम पर आगे बढ़ेगा या बुजुर्गों के सहारे लड़खड़ाएगा?

युवाओं से छिनी जगहें: बुज़ुर्गों के लिए नई कुर्सियां

दावा यह है कि भारत की सबसे बड़ी ताक़त उसकी युवा आबादी है। लेकिन व्यवहार में हो रहा यह है कि बड़ी संख्या में रिटायर अफसर, नौकरशाह और कॉर्पोरेट अधिकारी सेवानिवृत्ति के बाद भी विभिन्न संगठनों, बोर्डों सामाजिक संस्थाओं, वॉलंटरी ऑर्गेनाइजेशंस, क्लब्स और समितियों में उच्च पदों पर बने रहते हैं। युवाओं को मौका देने की बजाय, वही बुजुर्ग फिर से कुर्सियों पर बैठ जाते हैं।

अनुभव के नाम पर उनकी वापसी को सही ठहराया जाता है, मगर असल में यह प्रवृत्ति नवाचार और नई सोच को रोकने का काम करती है। जब लाखों योग्य और शिक्षित युवाओं को नौकरी नहीं मिल रही है, तब वही पद दोबारा बुजुर्गों के खाते में जाना क्या न्यायसंगत माना जा सकता है? यह युवाओं के लिए बेहद निराशाजनक संदेश है कि यहां 'कुर्सी' छोड़ने की कोई परंपरा ही नहीं।

हम किस ज्वालामुखी पर बैठे हैं

स्वास्थ्य सेवाओं और जीवन स्तर में सुधार से बुजुर्गों की औसत आयु बढ़ रही है। यह स्वाभाविक प्रगति है, लेकिन हमारे पास इस बढ़ती आबादी के लिए आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। न पर्याप्त अस्पताल हैं, न वृद्ध-आश्रमों की व्यवस्था है, और न ही उचित मूल्य पर ओल्ड एज होम।

हम मानो किसी 'ज्वालामुखी' पर बैठे हैं, जो अगले 10-15 वर्षों में कभी भी फट सकता है। अचानक हमें यह अहसास होगा कि युवा आबादी घट रही है और बुजुर्गों की संख्या बढ़ गई है। देश का आधारभूत ढांचा–चाहे अस्पताल हो, नर्सिंग स्टाफ हो या स्वास्थ्य सेवाएं–सीनियर सिटीज़न्स की इस लहर को संभालने की स्थिति में बिल्कुल सक्षम नहीं है।

जनसंख्या से जनशक्ति तक-अब उल्टा सफर

कभी हमने गर्व से कहा था कि हमारी जनसंख्या ही हमारी जनशक्ति है। लेकिन आज वही जनसंख्या हमारे लिए दबाव का कारण बन गई है। यदि उद्योग-घराने, बिल्डर और सरकार अभी से सतर्क नहीं हुए तो आने वाले वर्षों में हालत यह होगी कि न तो पर्याप्त मेडिकल सुविधाएं होंगी और न ही नर्सिंग स्टाफ। सामाजिक असंतुलन मानो किसी 'फूटे हुए बर्तन' की तरह बिखरने लगेगा।

मोहन भागवतजी की चेतावनी और भारत का भविष्य

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सर संघचालक मोहन भागवत जी का हालिया बयान इस संदर्भ में बेहद प्रासंगिक है। उन्होंने युवा दंपतियों से तीन बच्चे पैदा करने का आग्रह किया है। पहली दृष्टि में यह विचार हास्य या राजनीति से जुड़ा हुआ लग सकता है, लेकिन गहराई से देखने पर स्पष्ट होता है कि यह राष्ट्रहित और भारत के दीर्घकालिक भविष्य से जुड़ा प्रश्न है।

भारत की जनसांख्यिकी के आंकड़े बताते हैं कि देश का टोटल फर्टिलिटी रेट (TFR) अब 1.9 तक गिर चुका है। जबकि रिप्लेसमेंट लेवल 2.1 है, अर्थात् जितने लोग प्राकृतिक कारणों से समाज से विदा होते हैं, उतने नए जन्म होने चाहिए। यदि TFR लगातार गिरता रहा तो आने वाले दशकों में भारत में युवा कार्यबल की संख्या घट जाएगी और बुजुर्ग आबादी का दबाव बढ़ेगा।

भागवत जी की यह अपील केवल बयानबाजी नहीं है। यह एक गंभीर रणनीतिक सोच का हिस्सा है। यदि भारत को भविष्य में मजबूत राष्ट्र बने रहना है तो सरकार को ठोस कदम उठाने होंगे। केवल 'हम दो हमारे दो' जैसी नीतियों से देश को नुकसान हुआ है। अब जरूरत है कि परिवारों को इंसेंटिव दिए जाएं, अच्छी और सस्ती शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं में सहयोग, बच्चों के पालन-पोषण में आर्थिक सहायता , तीन बच्चों वाले परिवारों के लिए विशेष योजनाएं इन प्रोत्साहनों से ही लोगों में यह भावना विकसित होगी कि अधिक बच्चे पैदा करना केवल व्यक्तिगत निर्णय नहीं, बल्कि राष्ट्र की सेवा है।

जनसंख्या और सामाजिक चुनौतियां

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ प्रमुख मोहन भागवत द्वारा दिए गए 'जनसंख्या संतुलन' संबंधी बयानों ने एक बहस को जन्म दिया है। प्रश्न उठता है कि आज लोग अधिक बच्चे क्यों नहीं पैदा कर रहे? इसके पीछे मुख्य कारण हैं–

» वाजिब दरों पर गुणवत्ता पूर्ण स्वास्थ्य एवं शिक्षा का अभाव

» आरक्षण व्यवस्था का दुरुपयोग और इससे उत्पन्न असमानताएं

» ब्रेन ड्रेन (प्रतिभाशाली युवाओं का विदेश पलायन)

विशेषज्ञ मानते हैं कि आरक्षण के लाभ समाज के एक ही वर्ग तक सीमित रह गए हैं, जिससे समान अवसर का अधिकार प्रभावित हो रहा है। सामान्य वर्ग और अन्य वंचित तबकों में निराशा का भाव बढ़ा है, जिसके कारण भी लोग परिवार नियोजन की ओर झुक रहे हैं।

आरक्षण पर गहरी बहस की जरूरत

यह भी कहा जा रहा है कि आने वाले वर्षों में किसी भी सरकार की 'हिम्मत और जुर्रत' इतनी नहीं होगी कि वह आरक्षण नीति में बड़े बदलाव कर सके। अनुसूचित जाति और जनजाति में भी केवल कुछ वर्ग ही लगातार लाभान्वित हो रहे हैं। परिणामस्वरूप, एक बार एक व्यक्ति आरक्षण का लाभ लेकर नौकरी लगने के बाद भी बार-बार पदोन्नति और अवसर मिलने से और उनकी आने वाली पीढ़ियों तक यह लाभ उनको मिलता रहता है जबकि वास्तव में उन्हीं की जाति के पिछड़े वर्ग में बहुत से ऐसे परिवार हैं जिनको कभी भी सरकारी नौकरी नहीं मिली। इसलिए अन्य वर्ग के लोग अपने मूल अधिकारों से वंचित महसूस कर रहे हैं। यह विसंगति भी देश के नागरिकों के मूलभूत अधिकारों, संविधान का उल्लंघन है और युवाओं में कभी भी इस बात को लेकर भी आक्रोश भड़क सकता है या बाकी लोग या विदेशी ताकतें उनको भडकाने की कोशिश भी कर सकते हैं तो सरकार को भी समय रहते इसमें बदलाव करना चाहिए और चौकस रहना चाहिए।

इसके साथ ही सबसे बड़ा खतरा एट्रोसिटी एक्ट के दुरुपयोग से है। आप ही सोचिए, कोई 70 वर्षीय व्यक्ति है, जो राजनीति या सरकार में बड़े पद पर रह चुका है। अगर वह कह दे कि किसी ने अनुसूचित जाति, जनजाति या आदिवासी शब्द का उपयोग किया, तो उसे इतना बड़ा अपराध मान लिया जाता है, मानो जैसे उसने हत्या जैसा अपराध कर दिया हो। इसमें कोई एंटीसिपेटरी बेल का प्रावधान नहीं है और गिरफ्तारी सुनिश्चित है। यानी, परिवादी ने चाहे सच कहा हो या झूठ, सामने वाले व्यक्ति को दबाव में लाने के लिए इस कानून का दुरुपयोग किया जा सकता है। यह न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग तो है ही साथ ही दूसरे पक्षकार के मानवाधिकारों का हनन भी है, जिस पर कोई भी राजनीतिक दल या न्यायिक प्रक्रिया पुनर्विचार करने का साहस नहीं करता। यदि इसका दुरुपयोग देखें, तो इससे बड़ा शायद ही कोई दुरुपयोग हो।

इसके दुष्परिणाम स्वरूप आज कोई भी व्यक्ति सच बोलने से डरता है। हिंदू समाज में भी दूरियां बढ़ गई हैं। हिंदुओं को भी अलग-अलग जातियों में बाँट दिया गया है और उनके ऊपर एट्रोसिटी एक्ट का डर लगाया गया है। यदि कोई सामान्य हिंदू इनसे दोस्ती करता है, संपर्क रखता है या पास-पड़ोस में रहता है, तो डर के कारण सुकून का जीवन नहीं जी सकता। इस विशेष वर्ग के लोग बीस- तीस साल तक पड़ोस में रहने के बाद भी अपनी मनमर्जी का काम करने या कराने के लिए एट्रोसिटी एक्ट का खास तौर पर दुरूपयोग करने से भी नहीं झिझकते भले ही उनके दशकों पुराने संबंध खराब हो जायें। यह भी एक बड़ा मुद्दा है कि इसी कारण कुछ समुदाय–विशेषकर सवर्ण जाति के लोग–कम बच्चे पैदा करने पर ध्यान दे रहे हैं या सिर्फ एक ही बच्चा पैदा कर रहे हैं, क्योंकि उन्हें सरकारी नौकरी या उच्च पद मिलने की संभावना नहीं है।

समाज और धर्म का जुड़ाव

जाति और धर्म को अलग-अलग देखने की प्रवृत्ति ने भी समाज में दूरी बढ़ाई है। विशेषज्ञों का मानना है कि संतुलन और समानता बनाए रखने के लिए धर्म और सामाजिक नीतियों में सामंजस्य स्थापित करना आवश्यक है।

चीन, जापान और दक्षिण कोरिया का सबक

दुनिया के कई देशों ने समय रहते इस खतरे को नहीं पहचाना। चीन ने 1980 में 'वन चाइल्ड पॉलिसी' लागू की और अब उसे भारी कीमत चुकानी पड़ रही है। वहां जन्म दर रिप्लेसमेंट लेवल से नीचे आ चुकी है। नतीजतन युवा कामगारों की कमी और बुजुर्गों पर निर्भरता उसकी अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर रही है। जापान और दक्षिण कोरिया भी इसी संकट से जूझ रहे हैं। भारत को इन गलतियों से सबक लेना होगा और अपनी नीतियों को समय रहते संतुलित करना होगा।

भारत की वर्तमान स्थिति

आज देश के 18 राज्य और केंद्र शासित प्रदेश ऐसे हैं जहां TFR रिप्लेसमेंट लेवल से नीचे है। दिल्ली में यह दर 1.2 तक सिमट चुकी है, जबकि बिहार जैसे राज्यों में यह 2.8 है। शहरी क्षेत्रों की स्थिति ग्रामीण क्षेत्रों से कहीं अधिक चिंताजनक है। शहरों में TFR 1.6 तक गिर गया है, जबकि गांवों में यह अभी भी 2.1 के करीब है। यही ग्रामीण समाज आज भारत के जनसंख्या संतुलन को संभाले हुए है।

सामाजिक और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य

यह भी ध्यान देने योग्य है कि 1950 से 2015 के बीच हिंदू समाज की जनसंख्या वृद्धि दर में गिरावट आई है, जबकि मुस्लिम समाज की दर अपेक्षाकृत अधिक रही है। इसके अलावा, कुछ राज्यों में अवैध घुसपैठ भी जनसांख्यिकीय असंतुलन का कारण बनी है। यह पहलू राजनीति से जुड़ा हुआ लग सकता है, लेकिन वास्तविकता यह है कि किसी भी देश की स्थिरता उसके सामाजिक संतुलन पर टिकी होती है।

धर्मांतरण और अवैध घुसपैठ किसी भी देश का जातीय संतुलन बिगाड़ने के लिए पर्याप्त हैं। उदाहरण के लिए, इंडोनेशिया कभी हिंदू राष्ट्र था, और लेबनान, जिसे मिडल ईस्ट का पेरिस कहा जाता था, आज वहां इस्लाम धर्म और आतंकवाद की जड़ें कितनी गहरी हैं, यह वर्तमान हालात देखकर समझा जा सकता है।

यदि भारत में इन दोनों मुद्दों–धर्मान्तरण और अवैध घुसपैठ पर कठोर नियंत्रण और कार्रवाई नहीं होगी, तो देश का जातीय संतुलन बिगड़ना तय है। जब यह संतुलन जाति या धर्म के आधार पर प्रभावित होगा, तो राजनीतिक भूचाल अत्यंत गंभीर होगा और विदेशी ताकतें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भारत की सत्ता में दखल देने लगेंगी, जैसा कि हमने पहले अनुभव किया है और जिसके परिणाम आज हम भुगत रहे हैं।

आर्थिक और सामाजिक चुनौतियां

यदि जन्मदर घटती रही तो काम करने वाले हाथों की कमी के कारण भारत का डेमोग्राफिक डिविडेंड धीरे-धीरे समाप्त हो जाएगा। परिणामस्वरूप सामाजिक सुरक्षा, बुजुर्गों के पालन-पोषण और स्वास्थ्य सुविधाओं पर दबाव बढ़ेगा। छोटे परिवार रिश्तों की पारंपरिक संरचना को भी कमजोर करेंगे। चीन में 'चार-दो-एक' मॉडल (चार दादा-दादी, दो माता-पिता और एक बच्चा) इसका स्पष्ट उदाहरण है।

सामाजिक रिश्तों का पतन

समस्या केवल अस्पताल और रोजगार तक सीमित नहीं है। जब औसत आयु बढ़ रही है और परिवार छोटे होते जा रहे हैं, तो सामाजिक रिश्तों का स्वरूप भी बदल रहा है। एक पीढ़ी पहले तक दादा-दादी, चाचा-मामा, बुआ-फूफा परिवार का अभिन्न हिस्सा थे। लेकिन आने वाली पीढ़ी के लिए यह रिश्ते शायद केवल किताबों तक सीमित रह जाएँगे।

नौकरी की कमी और छोटे परिवार मिलकर समाज की जड़ों को खोखला बना रहे हैं। आने वाला भारत केवल इंडिविजुअल्स का देश बन सकता है, जहां रिश्ते और सामाजिक ताना-बाना अतीत की कहानियां बन जाएंगे।

क्या रास्ता है आगे का?

1. **पोस्ट-रिटायरमेंट पर नीति:** ज़रूरी है कि सेवानिवृत्त लोगों की नियुक्तियों पर सीमा तय हो। उन्हें सीधे कार्यकारी पदों पर दोबारा न रखा जाए।
2. **मेंटॉर की भूमिका:** वरिष्ठ नागरिकों को सलाहकार के रूप में काम करना चाहिए ताकि अनुभव भी बहे और युवाओं को भी पूरा अवसर मिले।
3. **सुविधाएँ और ढाँचा:** सरकार और निजी क्षेत्र को मिलकर वृद्ध स्वास्थ्य सेवाएँ, नर्सिंग स्टाफ और रहने की व्यवस्था अभी से तैयार करनी होगी।
4. **रोज़गार संतुलन:** संस्थानों में 'पहला अवसर युवा को' सिद्धांत लागू होना चाहिए। इससे युवाओं में विश्वास जगेगा और नवाचार की राह खुलेगी।
5. **जनसंख्या नीति का पुनर्मूल्यांकन:** 'हम दो हमारे दो' जैसे नारों से आगे बढ़कर अब ऐसे इंसेंटिव दिए जाएं कि परिवार अधिक बच्चों के लिए प्रेरित हों।

निष्कर्ष: सम्मान की असली परिभाषा

वरिष्ठ नागरिक निस्संदेह देश की पूँजी हैं, लेकिन उनका असली सम्मान बार-बार एक ही कुर्सी पर बैठाकर नहीं बल्कि समाज को मार्गदर्शन देकर होता है। अगर रिटायर लोग अपनी जगह युवाओं को दें और खुद मेंटॉर बनकर दिशा दिखाएँ, तो यही उनकी अगली पीढ़ी के प्रति सबसे बड़ी सेवा होगी। भारत का भविष्य युवाओं के कंधों पर है। यदि हम उन्हें स्थान और अवसर नहीं देंगे तो यह 'नवयुवकों का देश' केवल एक नारा रह जाएगा, हकीकत नहीं।

प्रोपर्टी

दैनिक बिज़नेस रेमेडीज
व्यापार एवं विकास की आवाज़

सत्त्वाधिकारी मुद्रक व प्रकाशक पुनीत जैन द्वारा सीटी-01 वैदिक अपार्टमेंट्स, कापसहेड़ा, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं आदित्य ग्राफिक्स इंक, प्रताप भवन, 5 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से मुद्रित।

संपादक : पुनीत जैन
(पीआरबी एक्ट के तहत खबरों के चयन के लिए उत्तरदायी)
मो. 9929106227
ई-मेल: remediesbusiness@gmail.com

डिसक्लेमर

बिज़नेस रेमेडीज़ का उद्देश्य अपने पाठकों को व्यापार और विकास से जुड़ी सटीक, उपयोगी और भरोसेमंद जानकारी प्रदान करना है। हम प्रकाशित सामग्री की विश्वसनीयता बनाए रखने का पूरा प्रयास करते हैं, लेकिन किसी लेख में व्यक्त विचार हमेशा संपादकीय टीम की राय से मेल नहीं खा सकते। इसलिए पाठकों से निवेदन है कि किसी भी जानकारी पर आधारित निर्णय लेते समय अपने विवेक का इस्तेमाल करें। प्रकाशित सामग्री के आधार पर लिए गए किसी निर्णय या कार्यवाही की ज़िम्मेदारी यह प्रकाशन नहीं लेता। इस प्रकाशन में दिखाए गए सभी विज्ञापन पूरी तरह से संपादकीय सामग्री से स्वतंत्र होते हैं। विज्ञापनों में किए गए दावों या दी गई जानकारी की पुष्टि या समर्थन बिज़नेस रेमेडीज़ द्वारा नहीं किया जाता। विज्ञापन से संबंधित किसी भी जानकारी या शिकायत की पूरी ज़िम्मेदारी संबंधित विज्ञापनदाता की होगी। यहां प्रकाशित सभी लेख, रिपोर्ट और सामग्री चाहे वे स्टाफ लेखक, समाचार एजेंसियों या अतिथि लेखकों द्वारा दी गई हो, बिज़नेस रेमेडीज़ की बौद्धिक संपदा हैं। बिना पूर्व लिखित अनुमति के किसी भी सामग्री का दोबारा प्रकाशन, वितरण या प्रसारण करना कानूनन वर्जित है।

एसएनजी के सत्यनारायण गुप्ता और सोहन लाल ताम्बी के खिलाफ ठगी का मुकदमा दर्ज, षडयंत्रपूर्वक पार्थ सिटी में करोड़ों की संपत्ति हड़पने का है मामला

बिजनेस रेमेडीज/जयपुर। विद्याधर नगर थाना में हिस्ट्रीशीटर के तौर पर दर्ज और वर्तमान में जेल में बंद रियल एस्टेट कारोबारी सत्यनारायण गुप्ता का एक ओर कारनामा सामने आया है। श्री गोविन्द कृपा बिल्डमार्ट प्राईवेट लिमिटेड के अधिकृत प्रतिनिधि अंकुर खण्डेलवाल ने एसएनजी के सत्यनारायण गुप्ता, सोहन लाल ताम्बी, राकेश कुमार गुप्ता और घनश्याम गुप्ता के खिलाफ भारतीय न्याय संहिता की धारा 318 (4), 316 (5), 338, 340 (2), 62 (2) (बी) और 336(2) के तहत षडयंत्रपूर्वक योजना बनाकर आवासीय स्कीम पार्थ सिटी का डेवलपमेंट ना कराकर फर्जी व कूटरचित तरीके से संपत्ति को हड़पकर खुर्द बुर्द करने और करोड़ों की राशि प्राप्तकर संपत्ति पर कब्जा करने का मामला दर्ज कराया है।

यह है मामला: एफआईआर में दर्ज तथ्यों के अनुसार वर्ष 2016 में शंकर खण्डेलवाल के किसी मुकदमें में न्यायिक अभिरक्षा में जाने तथा न्यायिक अभिरक्षा के दौरान ही प्रार्थी के कैन्सर की गम्भीर बिमारी से ग्रस्त होने पर मार्च 2017 में मैसर्स गोविन्द महीमा रियल मार्ट (प्रा0) लि जरिये निदेशक सत्यनारायण गुप्ता तथा सोहन लाल तांबी पुत्र रामगोपाल ताम्बी, निवासी डी 50, हाथी बाबू मार्ग, बनीपार्क जयपुर द्वारा एक समझौता पत्र के तहत आवासीय स्कीम पार्थ सिटी में मैसर्स श्री गोविन्दपुरा बिल्डमार्ट प्रा.लि. अर्थात शंकर खंडेलवाल के हिस्से की 50,000 वर्गगज भूमि के पट्टे खाली हस्ताक्षरित थे, जो कि सोहन लाल तांबी ने अपने निवास पर रख लिये थे और उक्त व्यक्तियों ने आपसी मिलीभगत से स्वयं को सदोष लाभ व प्रार्थी को सदोष हानि करने के उद्देश्य से शंकर खंडेलवाल के हिस्से की 50,000 वर्गगज भूमि के पट्टे (खाली हस्ताक्षरित आंवटन-पत्र) जिनकी कीमत लगभग 150 करोड़ राशि की है, में से षडयन्त्र के तहत फर्जी व कूटरचित तरीके से षडयन्त्रपूर्वक सोहन लाल ताम्बी पुत्र राम गोपाल ताम्बी द्वारा अपने व अपने पारिवारिक सदस्यों के नाम पर आंवटन पत्र जारी कर लिये गये तथा सत्यनारायण गुप्ता ने फर्जी व कूटरचित तरीके से अपने एकल हस्ताक्षर से राकेश कुमार गुप्ता एवं घनश्याम गुप्ता के नाम पर आवंटन पत्र जारी कर दिये और उनको अवैध रुप से बेचान करने का अपराध कारित किया है, जबकि उक्त आवासीय योजना पार्थ सिटी के डवलपमेन्ट एग्रीमेन्ट के पेज संख्या 14 के क्रम से 9.6 के पैरा न (b) में स्पष्ट रुप से शर्त अंकित है कि उक्त पार्थ सिटी योजना में किसी भी प्लाट को कोई भी आंवटन-पत्र / पट्टा या भूमि हस्तांतरण का कोई भी दस्तावेज दोनों साझेदारों (बतौर हैसियत खातेदार/मालिक तथा बतौर डवलपर की हैसियत) के संयुक्त हस्ताक्षरों से ही जारी किया जा सकेगा। इस प्रकार सोहन लाल तांबी तथा सत्यनारायण गुप्ता द्वारा आपराधिक षडयंत्र के तहत प्रार्थी की सम्पत्ति को जान बूझकर राकेश कुमार गुप्ता एवं घनश्याम गुप्ता के आपसी सहयोग से धोखाधड़ी कारित कर सम्पत्ति को अवैध तरीके से खुर्द-बुर्द करने तथा करोड़ों की राशि हड़पने का अपराध कारित किया है। अमानत में ख़यानत: शंकर खण्डेलवाल ने बिजनेस रेमेडीज को बताया कि हमारी कम्पनी श्री गोविन्द कृपा बिल्डमार्ट प्राईवेट लिमिटेड और सत्यनारायण गुप्ता की कम्पनी मैसर्स गोविन्द महिमा रियल मार्ट (प्रा.) लिमिटेड की कालवाड़ रोड़ स्थित पार्थ सिटी आवासीय योजना के लिए आपसी शर्तों पर एक डवलपमेन्ट एग्रीमेन्ट बनाया गया था, जिसमें योजना को डवलप करने की जिम्मेदारी सत्यनारायण गुप्ता को दी गई थी जिसके बदले उन्हें इस आवासीय योजना में कुल 300 बीघा जमीन डेवलपमेंट करने हेतु दी गई थी। एग्रीमेन्ट के मुताबिक सत्यानारायण गुप्ता को 20 करोड़ रुपये शंकर खण्डेलवाल को देना तय था जिसे साजिशन षड़यंत्र के तहत शंकर खण्डेलवाल को दिया ही नहीं गया।

न्यायिक हिरासत के दौरान पट्टे जारी: उन्होंने बताया कि सत्यनारायण गुप्ता और सोहन लाल ताम्बी ने मिलकर सोची-समझी साजिश के तहत धोखाधड़ी से आवासीय योजना पार्थ सिटी के पट्टे उस अवधि में भी जारी कर दिये जब मैं किसी मुकदमें में न्यायिक हिरासत में था। सत्यनारायण गुप्ता और सोहन लाल ताम्बी ने मिलकर सिंगल साईन से पट्टे जारी कर दिये जोकि नियमों के विरूद्ध था। उन्होंने ज्यादातर पट्टे अपने परिवार, नजदीकी रिश्तेदार और करीबी दोस्तों को जारी किये हैं। फिलहाल सत्यनारायण गुप्ता पुलिस हिरासत में है तथा सोहन लाल ताम्बी पर अभी तक कोई कार्यवाही नहीं की गई है। खंडेलवाल ने बताया कि सत्यनारायण गुप्ता को विद्याधर नगर थाने का हिस्ट्रीशीटर घोषित कर दिया गया है और उनके खिलाफ धोखाधड़ी, फर्जीवाड़े और ठगी के कई केस विभिन्न पुलिस थानों में दर्ज हैं।

सोहनलाल तांबी पर विश्वासघात का आरोप: उन्होंने बताया कि मैंने सोहन लाल ताम्बी को अच्छा और नेक इंसान समझ कर पार्थ सिटी के एग्रीमेंट में गवाह तथा निष्पक्ष मध्यस्थता की भूमिका दी ताकि यह एग्रीमेन्टधारी दोनों पार्टियों से तय शर्तों और नियमों के हिसाब से काम करा कर अपनी भूमिका को सार्थक करें लेकिन सोहनलाल ताम्बी कलयुग के मित्र निकले। आवासीय योजना पार्थ सिटी की मध्यस्थता के लिए रखे गये मेरे 50,000 वर्ग गज के पट्टों को फर्जीवाड़े से बेचने में सोहनलाल तांबी ने सत्यनारायण गुप्ता का पूरा सहयोग किया है साथ में सोहन लाल ताम्बी ने अपने और अपने परिवार जनों के नाम लगभग 12500 वर्ग गज की जमीन के पट्टे 2 मार्च 2017 की तारीख में भर लिए और बाजार में लगभग 25 करोड़ रुपये में बेच दिए। जबकि इस दिनांक को शंकर खंडेलवाल न्यायिक अभिरक्षा में था।

सदस्यता कूपन

(केवल डाक या ई-मेल से प्राप्त करने के लिए)

अवधि	अंक	सदस्यता शुल्क
1 वर्ष	358	1050

E-mail
remediesbusiness@gmail.com

नामः ....

पताः ....

..............................पिनकोड..................

फोनः.................... मो. ....

ड्राफ्ट/चैक का विवरणः ....

ई-मेलः ....

बिजनेस रेमेडीज प्राप्त करने के लिए सदस्यता शुल्क बैंक अकाउंट में जमा कराये या सदस्यता फार्म भरकर चैक/डीडी के साथ कार्यालय पर भिजवायें।

Bank Account:- Business Remedies
A/c No. 61233949765 Bank Name: SBI

पता:- सीटी-01 वैदिक अपार्टमेंट्स,कापसहेड़ा, नई दिल्ली
फोन:- 9166611333, 9929106227

#साधारण डाक द्वारा बिजनेस रेमेडीज की डिलीवरी में अनियमितता होने पर बिजनेस रेमेडीज प्रबंधन जिम्मेदार नहीं होगा।

टॉप 8 शहरों में जुलाई-सितंबर के दौरान घरों की कीमतें 7-19% बढ़ीं

बिजनेस रेमेडीज़/नई दिल्ली। भारत के शीर्ष 8 हाउसिंग बाजारों में जुलाई-सितंबर 2025 तिमाही के दौरान आवासीय कीमतों में 7 से 19% तक की जोरदार बढ़ोतरी दर्ज की गई है। यह उछाल मजबूत मांग, लग्जरी सेगमेंट की बूम और इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट के दम पर हुआ है। रियल एस्टेट कंसल्टेंसी PropTiger (जिसे हाल ही में Aurum PropTech Ltd ने अधिग्रहित किया) ने Q3 2025 हाउसिंग प्राइस रिपोर्ट जारी की।

PropTiger के अनुसार, दिल्ली-एनसीआर में घरों की कीमतों में सबसे ज्यादा 19% की सालाना बढ़ोतरी हुई है। इसकी प्रमुख वजह है लग्जरी प्रॉपर्टीज की बढ़ती मांग और बड़े पैमाने पर हो रहे इन्फ्रास्ट्रक्चर अपग्रेड। जुलाई-सितंबर में दिल्ली-एनसीआर में आवासीय संपत्तियों की औसत कीमत बढ़कर रु. 8,900 प्रति वर्ग फुट हो गई, जो पिछले साल इसी अवधि में रु. 7,479 प्रति वर्ग फुट थी।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

संपादकीय

हम भूखे मर सकते हैं: जरदारी

पाकिस्तान के राष्ट्रपति आसिफ अली जरदारी ने दोहा में सामाजिक विकास बारे संयुक्त राष्ट्र विश्व सम्मेलन में भाषण दौरान चेतावनी दी कि भारत पानी को पाक के विरुद्ध हथियार के रूप में इस्तेमाल कर रहा है, जिसके परिणाम भयानक निकलेंगे। उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय भाईचारे को न्याय, शांति और समानता को कायम रखने की अपील की। उन्होंने कहा कि सिंधु जल संधि का उल्लंघन 24 करोड़ पाकिस्तानियों के लिए एक गंभीर खतरा है और भारत सरकार की ऐसी कार्रवाईयां पूरे देश को पानी से वंचित करने के बराबर हैं, जिसको बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। उन्होंने यह भी दावा किया कि पाक ऐसी दबाव की कोशिशों को कभी भी सफल नहीं होने देगा। राष्ट्रपति जरदारी ने भारत पर सिंधु जल संधि का उल्लंघन करके जानबूझ कर अंतर्राष्ट्रीय कानून का उल्लंघन करने का भी आरोप लगाया और इसको क्षेत्रीय स्थिरता के लिए सीधा खतरा बताया। उन्होंने दोहराया कि पाक ऐसी किसी भी कोशिश का विरोध करेगा जो हमारी प्रभुसत्ता और हमारे लोगों की रोजी-रोटी को कमजोर करती है। उन्होंने कश्मीर और फिलिस्तीन के कथित संघर्ष को एक समान बताते कहा कि कश्मीर और फिलिस्तीन के मुद्दे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, दोनों लोग सम्मान से जीने के अपने अधिकार के लिए लड़ रहे हैं। उन्होंने सिंधु जल संकट को पानी का बम बताते कहा कि पाक के सभी बिजली प्रोजैक्ट और डैम इस पानी पर बने है। इसलिए हम समझते हैं कि यह हमारे पर पड़ा एक पानी का बम है, जिसको हमें नकारा करना पड़ेगा। उन्होंने कहा कि हमारे प्रत्येक 10 में से 9 लोग इस नदी पर निर्भर करते हैं और हमारी 90 प्रतिशत फसलों को इस नदी से पानी मिलता हैं। उन्होंने कहा कि यदि हमने इस पानी के संकट को अब हल नहीं किया तो हम भूख से मर सकते हैं।

सिंधु जल समझौते को लेकर जो कुछ जरदारी ने कहा है वह भारत को पहले से ही पता है। भारत ने इतने वर्ष पाकिस्तान समर्थित आतंक को झेलते हुए भी अतीत में मानवीय दृष्टिकोण अपनाते हुए संसद हमले सहित अन्य आतंकी हमले और 1971 तथा कारगिल के युद्ध के बावजूद भी सिंधु जल संधि को निलंबित नहीं किया, क्योंकि भारत जानता था कि अगर ऐसा किया तो पाकिस्तान के जनसाधारण और विशेषतया वहां के किसानों के लिए एक नहीं अनेक कठिनाइयां पैदा हो सकती हैं। भारत ने तो पाकिस्तान को अपने यहां पानी भण्डारण के लिए भी समय दिया, लेकिन पाकिस्तान ने अपनी नकारात्मक सोच के कारण भारत की चेतावनियों को हल्के में लिया और अपनी धरती को आतंकवादियों की पनाहगाह बनाकर भारत को जख्म देता रहा।

पहलगाम में जिस तरह निर्दोष यात्रियों के कत्ल किए गए उसके बाद भारत का 'ऑपरेशन सिन्दूर' और सिंधु जल संधि को निलंबित करना ऐसे कदम थे जिससे पाकिस्तान को उसकी औकात का पता चल गया। पाकिस्तान ने भारत के मानवीय पक्ष को उसकी कमज़ोरी समझा। भारत ने अभी दो ही झटके दिए हैं कि पाकिस्तान के राष्ट्रपति को कहना पड़ रहा है कि हम भूखे मर जाएंगे।

पाकिस्तान की आंतरिक स्थितियों को देखते हुए समझ आ जाता है कि पाकिस्तान एक असफल देश है, भारत तो इस स्थिति के लिए जिम्मेवार नहीं है। पाकिस्तान अगर भूख से मरने वाली स्थिति में आता है या वहां अराजकता बढ़ जाती है तो इसके लिए पाकिस्तान के राजनीतिज्ञ और सेना ही जिम्मेवार है।

पाकिस्तान सेना आज भी आतंकवादियों को समर्थन व संरक्षण देकर भारत विरुद्ध इस्तेमाल कर रही है। जरदारी ने कश्मीर की बात की है, जबकि धरातल का सत्य यह है कि पाक अधिकृत कश्मीर के लोग आज पाक के विरुद्ध सड़कों पर हैं और भारत से जुड़ना चाहते हैं।

जरदारी को अगर पाकिस्तान के जनसाधारण की इतनी चिंता है तो फिर पाकिस्तान की सरकार और सेना से कहे कि 'भारत से पंगा' न लो यह महंगा पड़ेगा।

-इरविन

मंथन

भयमुक्त जीवन

मनुष्य के अंतर्मन को जो क्रियाएं प्रभावित करती हैं उनमें भय, भ्रम और संदेह महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त काम, क्रोध, लोभ और मोह का भी महत्वपूर्ण प्रभाव शरीर के अंतर्मन पर पड़ता है, जो शरीर को यानी मनुष्य के संपूर्ण चरित्र को प्रभावित करता रहता है। ये मानसिक क्रियाएं शरीर में अनवरत चलती रहती हैं, जिससे जीवन का हर क्षण प्रभावित होता रहता है। भय मनुष्य के लिए एक ऐसा अदृश्य भूत होता है, जो प्रतिक्षण मनुष्य को अदृश्य रहकर भी प्रभावित करता रहता है। भय का कभी कोई न तो अस्तित्व होता है और न उसके होने की कोई संभावना रहती है। यह कुछ नहीं होता, लेकिन सब कुछ होने-सा लगता रहता है। यह लगना ही भय है। जिसके होने की जब कोई संभावना ही नहीं होती तो इस लगना को ही जब हम सत्य मानने का भ्रम पालने लगते हैं तो वही भ्रम सत्य होने का आभास देने लगता है और हमारे शरीर की संपूर्ण जैविक प्रक्रिया को प्रभावित करने लगता है। भय और भ्रम में मुख्य रूप से अंतर यही होता है कि भ्रम क्षणिक होता है, जो एक क्षण में ही हमारे शरीर में भय पैदा कर लुप्त हो जाता है। इसी प्रकार भ्रम हमारे मन में अनिश्चय पैदा करता है और इस अनिश्चय को मन पूरी तरह पकड़कर भयग्रस्त हो जाता है। भय, भ्रम की तरह क्षणिक नहीं होता। यह जब मन में बैठ जाता है तो आसानी से नहीं निकलता, लेकिन वास्तविक स्थिति यह है कि न तो भ्रम का कोई अस्तित्व होता है और न भय का। दोनों मानसिक कल्पना की उपज हैं। संदेह भी मानसिक कल्पना की ही उपज है। जिस प्रकार भय और भ्रम का कोई अस्तित्व नहीं होता उसी प्रकार संदेह का न तो कोई आधार होता है और न कोई प्रमाण होता है। यह स्वतः मन के विकारों से उत्पन्न होता है और मन की ग्रंथियों को बुरी तरह जकड़ लेता है, जिससे मनुष्य का पूरा चरित्र कुंठित होने लगता है और कुंठाग्रस्त मनुष्य किसी काम का नहीं होता। भय, भ्रम और संदेह के कारण जब मनुष्य का चरित्र पूरी तरह प्रभावित हो जाता है तो वैसे ही लोग कुंठाग्रस्त हो जाते हैं। कुंठाग्रस्त व्यक्ति अपनी सारी क्रियाशीलता, कर्मठता और संकल्प, तीनों को गंवा बैठता है।

आचार्य सुदर्शन

वंदेमातरम्- राष्ट्रभाव के 150 वर्ष

वर्ष 2025, भारत के इतिहास का वह ऐतिहासिक पड़ाव है, जब राष्ट्रीय गीत 'वंदेमातरम्' के 150 वर्ष पूरे हो रहे हैं। 1875 में बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित यह गीत केवल साहित्य की रचना नहीं था। यह भारतीय चेतना, अस्मिता, स्वाधीनता व राष्ट्रभाव के बीज बोने वाला शब्द-शस्त्र था। यह गीत जन-मन की वही ऊर्जा है, जिसने गुलामी के अंधकार को भेदकर स्वतंत्रता की सुबह का विश्वास जगाया। भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष के 150 वर्षों के कालखंड में ऐसा कोई दौर नहीं था, जब वंदेमातरम् का स्वर क्रांतिकारियों, सत्याग्रहियों, समाज सुधारकों, युवाओं व भारत माता के लिए मर मिटने वाले राष्ट्भक्तों के गले से न फूटा हो।

1875 में बंगाल के तत्कालीन राजनीतिक व सामाजिक परिदृश्य में उत्पन्न यह गीत धीरे-धीरे भारत की आत्मा की आवाज बन गया। 1882 में 'आनंदमठ' उपन्यास के माध्यम से यह गीत जन-चेतना के केन्द्रीय भाव में स्थापित हुआ। 1896 में कलकत्ता में हुए कांग्रेस अधिवेशन में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा पहली बार सार्वजनिक गायन किया गया। फिर 1905 का बंग-भंग आंदोलन आया, जिसने इस गीत को राष्ट्रीय स्वाभिमान का जीवित प्रतीक बना दिया। इस कालखंड में देश की हर गली व सड़क से लेकर क्रांतिकारियों की गुप्त सभाओं तक, हर भारतीय के गले में एक ही स्वर गूँज रहा था - वंदेमातरम्। यही वह गीत था, जिसने मातृभूमि को देवी के स्वरूप में स्थापित किया और आजादी की लड़ाई को आध्यात्मिक, भावनात्मक व वैचारिक शक्ति प्रदान की। 1950 में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी ने राष्ट्र गीत का दर्जा प्रदान किया।

मेरा मानना है कि किसी भी आंदोलन को सफल बनाने के लिए केवल अस्त्र-शस्त्र ही नहीं, बल्कि भाव, विचार, विश्वास और राष्ट्रीय चरित्र की भी आवश्यकता होती है। वंदेमातरम् ने गुलामी पर गर्व करने की गुलाम मानसिकता को तोड़ा और भारत की जनता को यह बताया कि हम भी विश्व की सबसे प्राचीन सभ्यताओं में से एक हैं। हमारे पास संस्कृति है, परंपरा है, मूल्य हैं, आत्मसम्मान है और मातृभूमि की रक्षा का अटूट संकल्प है। इसी गीत की उर्जा से सावरकर जैसे वीर जगे, चन्द्रशेखर आजाद जैसी शहादतें जन्मीं, भगत सिंह जैसे क्रांतिकारी पले, नेताजी सुभाष चंद्र बोस जैसे राष्ट्रवादी नायक विश्व मंच पर उठे। इतिहास साक्षी है कि वंदेमातरम् का एक-एक शब्द ब्रिटिश सत्ता की नींद उड़ाने में सक्षम था।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के कुशल नेतृत्व में आज जब भारत आत्मनिर्भरता, तकनीकी नेतृत्व, अंतरराष्ट्रीय आस्था, सांस्कृतिक पुनरुत्थान और वैश्विक शांति जैसे नए आयामों की ओर तेज गति से बढ़ रहा है। तब वंदेमातरम् की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। अमृतकाल का भारत केवल इतिहास की महिमा का पाठ नहीं पढ़ना चाहता, बल्कि आने वाले भविष्य के भारत को गढ़ना चाहता है। यह गीत आज भी भारतीय लोकतंत्र के नैतिक कम्पास जैसा है, जो हमें याद दिलाता है कि राजनीति का लक्ष्य सत्ता नहीं, राष्ट्र सर्वोच्च है। मोदी का मानना है कि विकास के हर निर्णय में भारत पहले, भारत की जनता पहले, भारत की अस्मिता पहले, यही भारतीय लोकतंत्र की मूल दिशा होनी चाहिए।

नायब सिंह सैनी
मुख्यमंत्री हरियाणा

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने बीते वर्षों में वंदेमातरम् के संदेश को आधुनिक राष्ट्रनिर्माण के भाव से पुनर्स्थापित किया है। उन्होंने इसे केवल सांस्कृतिक स्मृति या प्रतीकवाद तक सीमित नहीं रखा, बल्कि इसे नई पीढ़ी की राष्ट्र चेतना के केंद्र में स्थापित किया है। आज जब भारत विश्व शक्ति के रूप में उभर रहा है, प्रधानमंत्री मोदी ने हर मंच, हर अवसर, हर वैश्विक संवाद में भारत की हजारों वर्ष पुरानी सभ्यता की प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित किया है। उन्होंने मातृभूमि के प्रति सम्मान, भारत की पहचान पर गर्व, भारतीयता को आत्मविश्वास के साथ अपनाने और राष्ट्र सर्वोपरि की भावना को जन-जन तक पहुँचाया है। वंदेमातरम् के इस 150 वर्ष के पड़ाव पर यह कहना उचित है कि नये भारत की विचारधारा, नये भारत का आत्मविश्वास और नये भारत की नीति दिशा, सब में इस गीत की आत्मा कार्यशील व जीवित रूप में दिखती है।

अगले 25 वर्ष भारत के भविष्य निर्माण का निर्णायक काल है। आने वाले 2047 के भारत की यात्रा केवल आर्थिक महाशक्ति बनने की यात्रा नहीं, यह सामूहिक चरित्र, नये सामाजिक अनुशासन, नये सांस्कृतिक अभ्युदय और लोकतंत्र की नई ऊंचाईयां छूने की यात्रा है। यह वह समय है जब भारत को सभी पीढ़ियों को एक सूत्र में पिरोने वाली साझा राष्ट्रीय भावना की आवश्यकता है। यही साझा राष्ट्रीय भावना 'वंदेमातरम्' में निहित है। यह गीत भारत को केवल भावनात्मक रूप से नहीं जोड़ता, बल्कि यह हमारी लोकतान्त्रिक जिम्मेदारी को जागृत करता है। यह हमें याद दिलाता है कि राष्ट्रवाद विभाजन का नहीं, राष्ट्रवाद एकता का नाम है। यही राष्ट्रवाद भारत के लोकतंत्र को विश्व का सबसे सशक्त, सर्वश्रेष्ठ और सर्वसमावेशी लोकतंत्र बनाता है।

'वंदेमातरम्' माँ भारती को प्रणाम करने का मंत्र है। यह गीत हमारे संविधान, हमारी संस्कृति, हमारी स्वतंत्रता, हमारी अस्मिता और हमारी साझा राष्ट्रीय चेतना का अमर गीत है। आज जब 150 वर्ष पूरे हो रहे हैं, हमें भारत की आने वाली पीढ़ियों को यह बताना चाहिए कि चाहे देश कितना भी आगे बढ़ जाए, चाहे तकनीक कितनी भी उन्नत हो जाए, चाहे वैश्वीकरण कितना भी व्यापक हो जाए, हमारी आत्मा, हमारी पहचान और हमारी राष्ट्रीय धुरी मातृभूमि ही रहेगी। भारत की माटी से बढ़कर कोई पूज्य नहीं है। वंदे मातरम्।

रचना से राष्ट्रगान तक

- 1875 बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय ने वन्देमातरम् की रचना की।
- 1882 'आनंदमठ' उपन्यास में प्रकाशित।
- 1896 कांग्रेस अधिवेशन (कलकत्ता) में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने पहली बार सार्वजनिक गायन किया।
- 1905 बंग-भंग विरोध आन्दोलन में वन्देमातरम् ने क्रांति की ज्वाला जगाई।
- 1937 प्रथम दो अंतरों को आधिकारिक स्वीकृति दी।
- 1950 प्रथम राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी ने राष्ट्र गीत का दर्जा प्रदान किया।

मुस्लिम तुष्टिकरण का शिकार वंदेमातरम्

- 1923 में काकीनाडा में हुए कांग्रेस अधिवेशन में पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर को 'वंदेमातरम्' गाने के लिए आमंत्रित किया गया था, लेकिन उस वर्ष कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना मोहम्मद अली ने धार्मिक आधार पर आपत्ति जताई और कहा कि इस्लाम में संगीत वर्जित है।
- मुस्लिम लीग के नेताओं को खुश करने के लिए, 1937 में कांग्रेस कार्यसमिति ने राष्ट्रीय गीत को औपचारिक रूप से बदलने का निर्णय लिया। बाद में भी और कई मौकों पर कांग्रेस और उसके नेताओं ने विभिन्न मंचों पर 'वंदेमातरम्' के प्रति अपनी असहमति दिखाई।
- एआईएमआईएम नेता श्री अकबरुद्दीन ओवैसी ने 2017 में मांग की थी कि स्कूलों में छात्रों के लिए 'वंदेमातरम्' गाना अनिवार्य करने वाले सर्कुलर को रद्द किया जाए।
- तेलंगाना सरकार ने अब कहा है कि स्कूलों में 'वंदेमातरम्' गाना अनिवार्य नहीं किया जाएगा।
- 2019 में मध्य प्रदेश की कांग्रेस सरकार ने सचिवालय में 'वंदेमातरम्' गाने पर प्रतिबंध लगा दिया था।

पाक के परमाणु परीक्षणों से शांति को खतरा

पड़ोसी देश पाकिस्तान ने तीसरी बार परमाणु परीक्षण किया है अथवा परीक्षण किया जा रहा है या ऐसी कोई रणनीति है! अमरीकी राष्ट्रपति ट्रंप ने ऐसा खुलासा कर दुनिया में सनसनी फैला दी है। उन्होंने कहा है कि रूस, चीन, उत्तरी कोरिया और पाकिस्तान परमाणु परीक्षण कर रहे हैं। सिर्फ अमरीका ने ऐसा नहीं किया है। अमरीका ने 1992 में अंतिम परमाणु परीक्षण किया था, जब 1990 में रूस ने परीक्षण कर विश्व को चौंका दिया था। हड़कंप मच गई थी। राष्ट्रपति ट्रंप ने अब यह भी कहा है कि अमरीका हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठ सकता, लिहाजा बहुत संभावनाएं हैं कि तीन लंबे दशकों के बाद अमरीका फिर परमाणु परीक्षण करे! वैसे ट्रंप के बयान भरोसे लायक नहीं हैं, क्योंकि वह अनर्गल अलाप के आदी हैं, लेकिन परमाणु परीक्षण के संदर्भ में अमेरिकी राष्ट्रपति व्यर्थ बयान नहीं दे सकते, ऐसा हमारा मानना है। राष्ट्रपति ट्रंप ने पाकिस्तान को रूस, चीन, उत्तरी कोरिया की जमात में रख कर खुलासा किया है। ये सभी देश परमाणु परीक्षण करने में जुटे हैं। मसलन-रूस ने 'खाबरोवस्क' परमाणु पनडुब्बी लॉन्च की है, जो परमाणु रिएक्टर से चलेगी। यह पानी में 500 मीटर भीतर तक कारगर है और बहुत विनाशकारी हथियार है।

रूस ने हाल ही में 14,000 किमी तक प्रहार करने वाली मिसाइल का भी परीक्षण किया है, जिसे लेकर अमेरिका समेत शेष विश्व भयभीत हैं। उसके वारहेड भी परमाणुमय हैं। चीन का बयान भी सामने आया है कि वह पहले परमाणु हथियार का इस्तेमाल नहीं करेगा। हमारे हथियार आत्मरक्षा के लिए हैं। बहरहाल राष्ट्रपति ट्रंप ने यह भी पर्दाफाश किया है कि ऐसे परीक्षण जमीन के गहरे भीतर किए जाते हैं। उनसे जो कंपन होता है, उसे 'भूकम्प' करार दिया जाता है। चूंकि बीते रविवार को अफगानिस्तान में भी कथित भूकंप के, 6.3 की तीव्रता के, झटके महसूस किए गए, जिसमें 20 लोगों की मौत हो गई। ऐसे झटके भारत के किसी भी हिस्से में महसूस नहीं किए गए, जबकि पाकिस्तान उससे सटा हुआ पड़ोसी देश है। बल्कि पाकिस्तान भारत का सहोदर देश है। यह एक गंभीर सवाल हो सकता है। सवाल यह भी मौजू है कि जिस देश पर 103.38 लाख करोड़ पाकिस्तानी रुपए का कर्ज है, जिस देश की जीडीपी के 70 फीसदी हिस्से के बराबर कर्ज है, जिसके प्रत्येक नागरिक पर 1230.5 डॉलर की उधारी है और 40 फीसदी से अधिक आबादी 'गरीबी-रेखा' के नीचे है, क्या ऐसा देश परमाणु परीक्षण की सोच सकता है? अथवा परीक्षण कर सकता है?

राष्ट्रपति ट्रंप के खुलासे के बाद पाकिस्तान की सिट्टी-पिट्टी गुम है। खुफिया एजेंसी आईएसआई और सेना की तरफ से भी कोई प्रतिक्रिया नहीं है। ज्यादातर मंत्रियों और फौजी अफसरों तक को कोई जानकारी नहीं है। पाकिस्तान राष्ट्रपति ट्रंप के बयान का खंडन नहीं कर सकता, क्योंकि 'आका' नाराज हो जाएंगे और उधारी का रास्ता बंद हो जाएगा। यदि पाकिस्तान परमाणु परीक्षण की आधिकारिक पुष्टि करता है, तो अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा प्राधिकरण सख्त कार्रवाई कर सकता है। पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम पर ढक्कन लगा कर आईएईए उसके परमाणु हथियारों को अपने कब्जे में ले सकता है। पाकिस्तान पर अमेरिका भी आर्थिक पाबंदियां थोप सकता है। सवाल यह भी है कि क्या परमाणु परीक्षण चोरी-छिपे किए जा सकते हैं? भारत ने मई, 1998 में पोखरण में एक साथ पांच परमाणु परीक्षण किए थे। बदले में पाकिस्तान ने भी 29-30 मई, 1998 को चागई-1 और 2 के तहत कुल पांच परीक्षण किए। उनके बाद कोई परमाणु परीक्षण नहीं किए गए, लेकिन पाकिस्तान में परमाणु हथियारों की सुरक्षा के मद्देनजर आशंकाएं उठाई जाती रही हैं कि परमाणु अस्त्र आतंकियों के हाथों में जा सकते हैं अथवा पाकिस्तान सऊदी अरब सरीखे मुस्लिम देशों को परमाणु हथियार किराये पर भी दे सकता है। क्या ऐसा संभव है?

डॉ. ओ.पी. त्रिपाठी

22 अप्रैल को पहलगाम में हुए आतंकी हमले के बाद भारत ने जवाबी कार्रवाई करते हुए पाकिस्तान और पीओके में स्थित 9 आतंकी ठिकानों पर सटीक हमले कर उन्हें तबाह कर दिया था। इसके बाद पाकिस्तान ने भारत पर ड्रोन और मिसाइलों के जरिए हमला करने की कोशिश की थी, लेकिन भारतीय एयर डिफेंस सिस्टम ने पाकिस्तान के सारे हमलों को नष्ट कर दिया था। इस दौरान पाकिस्तान में बैठे बड़े-बड़े नेताओं द्वारा बार-बार परमाणु हमले की गीदड़भभकी दी जा रही थी। लेकिन अब पाकिस्तान की हेकड़ी निकल गई है और पाकिस्तानी पीएम शहबाज शरीफ ने खुद सच्चाई कबूल ली है। हाल ही में शहबाज शरीफ ने भारत के साथ संभावित परमाणु संघर्ष की आशंकाओं को खारिज कर दिया है। इस्लामाबाद में छात्रों को संबोधित करते हुए पाकिस्तानी पीएम ने कहा कि पाकिस्तान का परमाणु कार्यक्रम पूरी तरह से शांति बनाए रखने और अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए है। उन्होंने कहा, पाकिस्तान का परमाणु कार्यक्रम पूरी तरह से शांतिपूर्ण उद्देश्यों और राष्ट्रीय रक्षा के लिए है न कि आक्रामकता के लिए। शहबाज शरीफ का यह बयान भारत के ऑपरेशन सिंदूर के बाद आया है।

ऑपरेशन सिंदूर के दौरान भारत ने तीखी सैन्य प्रतिक्रिया देते हुए 9 आतंकी ठिकानों पर हमले किए, जिनमें बहावलपुर भी शामिल था जिसे जैश-ए-मोहम्मद आतंकवादी संगठन का गढ़ माना जाता है।बता दें, पहलगाम हमले के बाद दोनों देशों के बीच तनाव काफी ज्यादा बढ़ गया था। उस वक्त पाकिस्तान के रक्षा मंत्री ने कहा था कि देश अलर्ट पर है, लेकिन वह अपने परमाणु हथियारों का इस्तेमाल सिर्फ विकट परिस्थितियों में ही करेगा। उन्होंने कहा था, ÷हमारे अस्तित्व को सीधा खतरा हो, तभी हम इस पर विचार करेंगे।÷परमाणु मुद्दे पर बहस तब और बढ़ गई थी जब पाकिस्तान की इंटर-सर्विसेज इंटेलिजेंस यानी आईएसआई के पूर्व महानिदेशक जावेद अशरफ काजी ने कड़ी चेतावनी जारी करते हुए कहा था कि दोनों परमाणु संपन्न देश हैं और युद्ध से परमाणु विनाश हो सकता है। द्वितीय विश्व युद्ध से तुलना करते हुए जावेद अशरफ काजी ने कहा था, ÷जापान में सिर्फ दो बम गिराए गए थे और उसका नतीजे आज भी सामने दिखाई देते हैं। भारत और पाकिस्तान के पास 170-170 से ज्यादा परमाणु बम हैं। इतने बमों के साथ युद्ध की कल्पना करना भी भयावह है।÷हालांकि, पाकिस्तान की ये हमेशा से आदत रही है कि तनाव बढ़ने के बाद पाकिस्तानी राजनीतिक और सैन्य नेता परमाणु धमकी का सहारा लेते हैं। इस पर भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने साफ कर दिया था कि पाकिस्तान का न्यूक्लियर ब्लैकमेल अब नहीं चलेगा। पीएम मोदी ने कहा था कि पाकिस्तान के प्रॉक्सीवॉर को अब जंग माना जाएगा और उसका जवाब पूरी ताकत के साथ दिया जाएगा। उन्होंने कहा था कि अगर सीमा पार से कोई भी आतंकी हमला होता है तो उसे देश के खिलाफ जंग ही माना जाएगा। पाकिस्तान में परमाणु अस्त्रों की ऐसी असुरक्षा के मद्देनजर भारत की संप्रभुता और अखंडता को लेकर भी सवाल उठाए जाते रहे हैं। खतरों पर चिंताएं जताई जाती रही हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

इंद्रधनुष

फिटनेस मंत्रा

पेट, पीठ और पैर, शरीर के लिए बेहद लाभदायक है 'टिड्डी मुद्रा'

ऑफिस में घंटों एक ही पोज में बैठने से पीठ और पैर का दर्द हो या अन्य शारीरिक समस्या। योग पद्धति इसके समाधान के लिए शलभासन या टिड्डी मुद्रा की सलाह देता है। भारत सरकार के आयुष मंत्रालय के अनुसार, शलभासन या टिड्डी मुद्रा एक महत्वपूर्ण आसन है, जो रीढ़ की हड्डी को मजबूत बनाता है और वजन कम करने में सहायक सिद्ध होता है। यह आसन शरीर की समग्र फिटनेस को बढ़ावा देता है, जिसके अभ्यास से कई राहत मिलती हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि नियमित अभ्यास से यह मुद्रा न केवल शारीरिक स्वास्थ्य सुधारती है, बल्कि मानसिक तनाव भी कम करने में सहायक है। शलभासन के कई फायदे हैं। सबसे प्रमुख लाभ रीढ़ की हड्डी की मजबूती है, जो पीठ दर्द और कमजोरी को दूर करता है। यह पेट की मांसपेशियों को मजबूत बनाता है, पाचन तंत्र को बेहतर करता है और कब्ज जैसी समस्याओं से राहत देता है। वजन घटाने के लिए भी यह मुद्रा लाभकारी है, यह अतिरिक्त फैट को बर्न करने में मदद करता है। इसके अलावा, यह छाती, कंधों और पैरों की मांसपेशियों को मजबूत करता है, फेफड़ों की क्षमता बढ़ाता है और रक्त संचार सुधारता है। टिड्डी मुद्रा महिलाओं के लिए भी बेहद लाभकारी है। यह पीरियड्स संबंधी समस्याओं को दूर करने में लाभदायक है। यह आसन पूरे शरीर को एनर्जी देता है। एक्सपर्ट शलभासन करने की विधि भी बताते हैं। सबसे पहले, पेट के बल जमीन पर लेट जाएं। पैरों को सीधा रखें, एड़ियां और पैर की उंगलियां आपस में जुड़ी हुई हों। हाथों को शरीर के साथ रखें, हथेलियां ऊपर की ओर। अब सांस लें और सिर, छाती, हाथ और पैरों को एक साथ ऊपर उठाएं, इसे करने के दौरान टिड्डी जैसी मुद्रा बन जाती है।

ट्रेंड में

यात्री वाहनों, दुपहिया की खुदरा बिक्री ने अक्टूबर में बनाया नया रिकॉर्ड

त्योहारी मांग और वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) में नयी पीढ़ी के सुधारों के कारण अक्टूबर में यात्री वाहनों और दुपहिया की खुदरा बिक्री ने नया रिकॉर्ड बनाया। वाहन डीलरों के संगठन फाडा द्वारा शुक्रवार को जारी आंकड़ों में बताया गया है कि अक्टूबर 2025 में यात्री वाहनों की बिक्री 11.35 प्रतिशत बढ़कर 5,57,373 इकाई पर पहुंच गयी। दोपहिया वाहनों की बिक्री सालाना आधार पर अक्टूबर में 51.76 प्रतिशत बढ़कर 31,49,846 इकाई दर्ज की गयी। फाडा के अध्यक्ष सी.एस. विग्नेश्वर ने कहा कि वाहनों की खुदरा बिक्री के मामले में अक्टूबर 2025 मील के पत्थर के तौर पर याद किया जायेगा। जीएसटी सुधारों, ग्रामीण मांग बढ़ने और त्योहारी मांग रहने से रिकॉर्ड-तोड़ परिणाम सामने आये हैं। यात्री वाहनों और दुपहिया दोनों की बिक्री अबतक के उच्चतम स्तर पर दर्ज की गयी जो उपभोक्ता विश्वास में नयी ऊर्जा और अर्थव्यवस्था में अंदरूनी लहर को दिखाता है। तिपहिया की बिक्री 5.43 प्रतिशत की वृद्धि के साथ 1,29,517 इकाई दर्ज की गयी, हालांकि इसमें ई-रिक्शा की बिक्री में 15.60 प्रतिशत की गिरावट रही। ट्रैक्टरों की बिक्री 14.22 फीसदी की वृद्धि के साथ 73,577 पर और वाणिज्यिक वाहनों की 17.69 प्रतिशत बढ़कर 1,07,841 पर पहुंच गयी। वाहनों की कुल बिक्री में 40.53 फीसदी का जबरदस्त उछाल दर्ज किया गया और यह 40,23,923 इकाई रही। फाडा ने बताया कि अक्टूबर में ग्रामीण भारत मांग में वृद्धि का नया ईंजन बनकर उभरा है। उसने अनुकूल मानसून, कृषि आय में वृद्धि और सार्वजनिक बुनियादी ढांचों में सुधार को इसकी वजह बतायी है। मौजूदा वित्त वर्ष के पहले सात महीनों में अप्रैल से अक्टूबर तक वाहनों की कुल बिक्री में 10.73 प्रतिशत की वृद्धि देखी गयी और यह 1,63,91,421 इकाई पर पहुंच गयी। इसमें दुपहिया की बिक्री 12.63 प्रतिशत बढ़कर 1,19,94,390 इकाई और यात्री वाहनों की 5.76 प्रतिशत की वृद्धि के साथ 25,19,348 इकाई हो गयी।

प्रेरक प्रसंग

कोई गुनाह तो नहीं

कानपुर में अजीजन का कोठा था। अंग्रेजी राज के आला अफसर उस पर लट्टू थे, पर अजीजन को अंग्रेजों से चिढ़ थी। फिर भी वह अंग्रेजों की छावनी में जाती थी। मकसद था, अंग्रेजों के मन की बातें जानना। एक दिन घने जंगल में अंग्रेज अधिकारी वाटसन और हैरी को प्यास लगी। वहां एक कुएं पर घड़ा और लोटा मिला। वाटसन आगे बढ़े तभी एक गोली चली। उन्होंने देखा कि एक सुंदर नौजवान गोली चला रहा है। वाटसन ने जवाब में गोली चलाने की बजाय उसे दबोच लिया। दोनों में छीनाझपटी के दौरान नौजवान के हाथ से पिस्तौल छूट गई और साफा भी खुल गया। यह अजीजन ही थी, जो अपने असली भेष में आ गई। उसने महिला सेना बनाई थी। कुएं पर घड़ा और लोटा भी उसी ने रखा था। और जानकारी के लिए वाटसन ने अजीजन को जिंदा रखा। अजीजन ने कहा कि अगर आप कहें, तो मैं खड़ी हो जाऊं। राइफल रख कर वाटसन ने अजीजन की सुंदरता पर मोहित हो उसे छूना चाहा। अजीजन खड़ी हो कर उस जगह पर गिरी, जहां उसकी पिस्तौल थी। उसने पिस्तौल उठा ली और मौका मिलते ही वाटसन तथा हैरी को समाप्त कर दिया। इसके बाद उसे अंग्रेजी सैनिकों ने गिरफ्तार कर कमांडर जनरल के सम्मुख पेश किया। कमांडर ने अजीजन से कहा कि अगर माफी मांग लो, तो मैं माफ कर दूंगा। अजीजन ने कहा कि मैंने कोई गलती नहीं की हुजूर। घर मैं घुसे बदमाशों को निकालना कोई अपराध नहीं है। हैवलॉक ने कमांडर को इशारा किया। गोली चली और अजीजन बलिदान हो गई।

हंसगुल्ले

- पत्नी रूठकर- तुम मेरा जरा भी ध्यान नहीं रखते
  पति- अरे एक तुम ही तो हो, जो मेरे इस घर को स्वर्ग बना सकती हो
  पत्नी- सचमुच डार्लिंग... कैसे ?
  पति- मायके जाकर।
- शहर की लड़की- प्लीज, मुझे बैठने के लिए सीट दे दो?
  पप्पू गाँव से था- मैं काहे दे दूँ
  लड़की- एक लड़की तुम्हारे सामने खड़ी है, तो तुम उसे सीट नही दे सकते?
  पप्पू- आप एक काम करे मुझसे शादी कर ले
  लड़की- मैं किस खुशी में कर लूँ?
  पप्पू- तुम्हारे सामने एक लड़का कुँवारा घूम रहा हैं, तो तुम उससे शादी भी नही कर सकती।

उत्तम हिन्दू में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक लेख और अन्य साहित्य सामग्री प्रकाशित करवाने के इच्छुक लोग कृपया इस मेल आईडी lekhuttamhindu@gmail.com पर अपनी प्रकाशन सामग्री भेजें।

हो सकता है मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊं फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा। **–वाल्तेयर**

राजस्थान पत्रिका
संस्थापक
कर्पूर चन्द्र कुलिश

गिरफ्तारी में मनमानी पर अंकुश का ठोस प्रयास

सुप्रीम कोर्ट ने अपने एक अहम फैसले में व्यवस्था दी है कि पुलिस व जांच एजेंसियों को किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार करने से पहले उसे लिखित में बताना पड़ेगा कि गिरफ्तारी का आधार क्या है। बिना लिखित कारण बताए पुलिस किसी को गिरफ्तार करती है तो गिरफ्तारी ही नहीं, बल्कि रिमांड तक अवैध होगा। सुप्रीम कोर्ट ने यह भी साफ कर दिया है कि संविधान के अनुच्छेद 22(1) के तहत गिरफ्तार व्यक्ति को इसका आधार बताने की आवश्यकता महज औपचारिकता नहीं, बल्कि अनिवार्य संवैधानिक सुरक्षा है। सुप्रीम कोर्ट के इन निर्देशों के बाद अब पुलिस और अन्य जांच एजेंसियों की मनमानी पर अंकुश लगेगा।

पुलिस सुधारों की दिशा में इसे ठोस प्रयास कहा जा सकता है, लेकिन अगले चरण के रूप में दुनिया के दूसरे देशों की तरह यह व्यवस्था भी की जानी चाहिए, जिसमें गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को उसके कानूनी अधिकारों की जानकारी भी अधिकृत रूप से दी जाए। इसमें कोई संदेह नहीं कि कानून का डर बना रहना जरूरी है, लेकिन गिरफ्तारी की वजह बताए बिना किसी को प्रताड़ित करना और मनमानी धाराएं लगाकर कानूनी कार्रवाई को आगे बढ़ाना जब पुलिस की कार्यशैली में शामिल होने लगे तो सुप्रीम कोर्ट के ऐसे निर्देश पीड़ितों को राहत देने वाले साबित होंगे। लिखित कारण बताने का मतलब है कि पुलिस को पहले गिरफ्तारी के वे आधार तय करने होंगे, जो संबंधित व्यक्ति को आसानी से समझ में आ जाएं। बड़ी राहत यह है कि अब हर आम आदमी के पास एक ढाल होगी। कोई पुलिसकर्मी किसी को गिरफ्तार कर ले जाने लगे तो यह सवाल तुरंत किया जा सकता है कि पहले इसका लिखित कारण बताया जाए। जाहिर है पुलिस अब प्रत्येक गिरफ्तारी को जायज ठहराने के लिए कागज-कलम का सहारा लेगी, लोगों को मनमाने ढंग से गिरफ्तार नहीं कर सकेगी। व्यवस्था में सुधार की पहली सीढ़ी यही है कि पुलिस को कानून के दायरे में रहकर काम करने की बाध्यता होगी। पुरानी धाराएं या कोई भी प्रिवेंटिव एक्शन अब बिना ठोस लिखित आधार के नहीं चलेगा। इसका सीधा असर यह होगा कि छोटे-मोटे विवादों में गिरफ्तारी पर भी पुलिस को लिखित कारण बताना पड़ेगा और उसकी कॉपी व्यक्ति को देनी पड़ेगी। यह कॉपी बाद में कोर्ट में सबूत बनेगी। पुलिस की कहानियां झूठी होंगी तो स्वतः ही सामने आ जाएंगी।

गिरफ्तारी की वजह बताने और संबंधित को उसके अधिकार बताने की व्यवस्था दुनिया के दूसरे देशों में पहले से है। ब्रिटेन में अरेस्ट वारंट और नोटिस ऑफ राइट तुरंत दिया जाता है। अमरीका में मिरिंडा राइट्स पढ़कर सुनाए जाते हैं और लिखित में दिए जाते हैं। ऑस्ट्रेलिया में भी ऐसा ही प्रावधान है। यह फैसला सिर्फ राहत वाला ही नहीं, बल्कि अधिकारों के दुरुपयोग पर अंकुश लगाने का ठोस प्रयास है। उम्मीद की जानी चाहिए कि इससे थाने का दरवाजा हर किसी के लिए डर का पर्याय नहीं रहेगा।

मां देह रूप अपरा है, अन्नमय कोश है। जननी है, पोषक है। अन्न ही मन है। मां मन भी है। भावनाओं का गंभीर-गहन धरातल है। संवेदना, प्रेम, वात्सल्य, सुख-दुःख आदि तो मन के ही गुण हैं।

तीन शरीर-तीन ही ऋण

गुलाब कोठारी
प्रधान संपादक
पत्रिका समूह
@patrika.com

शरीर ही ब्रह्माण्ड

मां का दिव्य रूप सृष्टि कर्ता के रूप में देखा जाता है। मां यहां माया है। माया के कार्यों को केवल ब्रह्म ही समझ सकता है। यहां भाषा का तो पूर्ण अभाव ही रहता है। इशारों-संकेतों अथवा भावनाओं का सम्प्रेषण होता है।

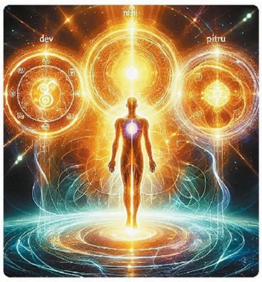

जीव तीन ऋण लेकर पैदा होता है जो कि सृष्टि के ही प्राण रूप होते हैं। जीवन तो प्राणों का ही पर्याय है। प्राणों से ही चलता है। प्राण निकल जाने पर ठहर जाता है। सातों लोकों का अपना प्राणों का स्वरूप है। सृष्टि में एकमात्र प्राण ही गतिमान तत्त्व है। सृष्टि में प्रत्येक कर्म शुरू होता है कामना से। प्राण ही कामना को गति देता है।

सूर्य जगत का पिता है। यहीं से षोड़शकल सृष्टि शुरू होती है। सूर्य देवलोक है। यहां के प्राण देव कहलाते हैं। सूर्य के आगे पितृलोक की स्थिति है। इस परमेष्ठी लोक के प्राण पितर प्राण कहलाते हैं। सबसे आगे स्वयंभू लोक- ऋषि प्राणों का लोक है। ये तीनों ही प्राण सभी प्राणियों का आत्मा बनते हैं। सभी प्राणी आत्मरूप ही हैं। कर्मों के अनुसार शरीर भिन्न-भिन्न होते हैं।

सौम्य पितृ प्राण और आग्नेय ऋषि प्राण ही परमेष्ठी लोक में भृगु-अंगिरा रूप लेते हैं। यही अग्नि-सोमात्मक जगत के मूल प्राण हैं, जो आगे चलकर देव प्राणों की उत्पत्ति करते हैं। सृष्टि की दो धाराएं भृगु (लक्ष्मी) और अंगिरा (सरस्वती) रूप में आगे बढ़ती हैं। लक्ष्मी अर्थवाक् के रूप में तथा सरस्वती शब्दवाक् के रूप में आगे बढ़ती रहती है।

स्वयंभू अव्यय पुरुष रूप सृष्टि का प्रथम सत्य रूप है, ब्रह्म है। यही प्राणियों का कारण शरीर बनता है, आलम्बन बनता है। इसी के कारण सृष्टि को पुरुष प्रधान कहा जाता है। इसी के मन को श्वोवसीयस मन कहते हैं। मन भी मूल में सभी प्राणियों का एक यही है। अन्य मन इसी के प्रतिबिंब रूप मन होते हैं। इसी मन की एक दिशा सृष्टि की ओर बढ़ती है। इसी की विपरीत दिशा मुक्ति की ओर जाती है।

ऋषि-पितर-देव प्राण ही जीवन के निर्माता प्राण हैं। इन्हीं का ऋण चुकाने की बात हमारे शास्त्र करते हैं। इस तथ्य को ध्यान में बनाए रखने के लिए हमें–'मातृ देवो भव', 'पितृ देवो भव' तथा 'आचार्य देवो भव' सिखाया जाता है। ये क्रमशः क्षर-अक्षर-अव्यय सृष्टि के कारक हैं। अक्षर-क्षर ही क्रमशः परा-अपरा प्रकृतियां हैं–

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्धा।। (गीता 7.4)

पंचमहाभूत-मन-बुद्धि-अहंकार ही शरीर रूपी अपरा प्रकृति है। शरीर पार्थिव पंचमहाभूतात्मक है, मन चान्द्र है, बुद्धि सौरी है जो सूर्य के अहंकृति से उत्पन्न होती है। पृथ्वी से अन्न, अन्न से देह का निर्माण होता है। पृथ्वी भी लक्ष्मी है, देह भी लक्ष्मी है। शरीर को ही अन्नमय कोश (स्थूल) कहते हैं।

प्राणियों का शरीर गर्भ में तैयार होता है। माता के शरीर से, जो स्वयं अन्न से निर्मित है। अन्न से ही मन का निर्माण होता है। शरीर ही जीवात्मा का बाहरी आवरण (पृथ्वी रूपा) है। पृथ्वी भी जल से उत्पन्न होती है और शरीर भी जल से। शरीर की आकृति भी पृथ्वी और प्रकृति चन्द्रमा से बनती है। केन्द्र को ही मन कहते हैं। प्राणों द्वारा अन्न की चिति ही शरीर है। शरीर ही मां है। मातृ देवो भव। सन्तान की देह का निर्माण माता की देह से ही होता है। अन्न ही शरीर है, अन्न ही मन है, अन्न ही जीवात्मा है, अन्न ही ब्रह्म है। सृष्टि की प्रत्येक रचना में ये तीनों धरातल होते हैं। मानव में विशेष रूप से स्वतंत्र कर्म करने एवं पुनः अंशी तक लौट जाने की क्षमता है। चूंकि उसका मन चंचल है, उसे नियंत्रण-संचालन की आवश्यकता रहती है। इसी कारण पुरुष के साथ परा-अपरा प्रकृति बनाई, तीनों ही स्तरों पर यह कार्य करती हैं।

मां देह रूप अपरा है, अन्नमय कोश है। जननी है, पोषक है। अन्न ही मन है। मां मन भी है। भावनाओं का गंभीर-गहन धरातल है। संवेदना, प्रेम, वात्सल्य, सुख-दुःख आदि तो मन के ही गुण हैं। चूंकि सन्तान भी अर्द्धनारीश्वर होती है, अतः मन के स्त्रैण भाव-पौरुष भाव भी मां ही प्रेषित करती है। इसके बिना सन्तान में स्त्रैण भावों का अभाव रह जाता है। इसके अभाव में पुरुष के स्त्रैण भाग सदा अपूर्ण ही दिखाई देंगे। ऐसे पुरुष सदा अहंकारी एवं आक्रामक ही दिखाई पड़ते हैं। उनमें आसुरी सम्पदा प्रमुख होती है। मां का अपरा रूप ही प्रेम और एकात्म भाव का क्षेत्र है। यह हृदय का क्षेत्र है जहां जीवात्मा के साथ मां की भूमिका दिखाई पड़ती है। मां के मन के स्पन्दन सन्तान के मन को प्रभावित करते हैं। संस्कारित करते हैं।

मां का दिव्य रूप सृष्टि कर्ता के रूप में देखा जाता है। मां यहां माया है। माया के कार्यों को केवल ब्रह्म ही समझ सकता है। यहां भाषा का तो पूर्ण अभाव ही रहता है। इशारों-संकेतों अथवा भावनाओं का सम्प्रेषण होता है। पुरुष को आमंत्रण, ईश्वर से प्रार्थना (शुद्ध आत्मा के लिए) तथा पुरुष के शरीर में व्याप्त ब्रह्मांश को एकत्र करके अपने शरीर में आहुत करना (इसका तो पुरुष तक को भान नहीं होता) कोई साधारण क्रिया नहीं है। ब्रह्म ने इसी आत्म विवर्त की चाहना की थी- एकोऽहं बहुस्याम्।

जीवात्मा के स्वरूप का ज्ञान, उसके पूर्व संस्कारों का परिष्कार करके भावी जीवन के अनुरूप संस्कार देना भी स्थूल क्रिया नहीं हो सकती। मां परा भाव में यह कार्य करती है। बिना किसी उपकरण के। उस जीव को यथानुरूप यथोचित ज्ञान देती है। जो न दिखाई देता है, न देख सकता है, न सुन सकता है, न ही बोल पाता है। पिता वै जायते पुत्रः अर्थात् पिता ही पुत्र बनता है। पिता भी देह रूप है। भीतर मातृ देह में बन्द रहता है। बीज रूप होता है, शरीर में प्रवाहित रहता है। इसी के साथ पिता की छह पीढ़ियों के अंश भी रहते हैं। पिता सन्तान में बीज रूप तैयार होता है (पुत्र में)। इस कर्म में सोलह (16) वर्ष लगते हैं। तब पुत्र नई सन्तान उत्पन्न करने में सक्षम होता है।

पिता के शुक्र में ही वर्ण भी समाहित रहता है। यह बीज पुत्री तक नहीं पहुंच पाता। अतः विवाह काल में मंत्रों द्वारा दामाद की आत्मा में प्रतिष्ठित करता है। तब आगे की संतानें पूर्ण होती हैं। गुरु भी दैहिक रूप में जुड़ता है। दीक्षा के माध्यम से शिष्य के साथ एकात्म भाव पैदा करके उसे पुत्र रूप में तैयार करता है। स्थूल के साथ सूक्ष्म का ज्ञान कराता है। सृष्टि के सभी रहस्यों, ध्यान साधना, तपादि के द्वारा हृद् प्राणों को विकसित करता है।

जीवन संकल्प-विकल्प के बीच झूलता रहता है। विकल्पों के बाहर निकलकर ही इच्छाशक्ति अथवा संकल्प-शक्ति शिष्य का निर्माण करती है। शिष्य का समर्पण भाव ही गुरु-शक्ति से कृपा प्राप्त करने में सफल होता है, तभी व्यक्ति की प्राण शक्तियां केन्द्रीभूत हो पाती हैं तथा पाप के क्षय का मार्ग प्रशस्त हो पाता है। गुरु का ज्ञान और शिष्य का कर्म मिलकर पूर्णता तक पहुंचकर ही प्रकाश प्राप्त कर सकते हैं। यही गुरु की महिमा है। बिना गुरु के जीवन में पूर्णता आना सम्भव नहीं। गुरु ही परम गुरु, परमेष्ठी-परात्पर गुरु रूप होकर जीवात्मा को अव्यय में लीन करा देता है। **-क्रमशः**

gulabkothari@epatrika.com

बुक इनसाइट

ए वॉयेज अराउंड द क्वीन

क्रेग ब्राउन की किताब 'ए वॉयेज अराउंड द क्वीन' ब्रिटेन की महारानी एलिजाबेथ द्वितीय के जीवन, व्यक्तित्व और उनके आसपास की दुनिया पर एक अनोखी झलक पेश करती है। यह कोई पारंपरिक जीवनी नहीं है, बल्कि एक दिलचस्प, व्यंग्यात्मक और सूक्ष्म दृष्टिकोण से लिखी गई किताब है, जो पाठक को महारानी के जीवन के उन पहलुओं तक ले जाती है जो अक्सर अनकहे रह जाते हैं। लेखक ने महारानी के जीवन को सीधी रेखा में नहीं, बल्कि घटनाओं, किस्सों, मुलाकातों और ऐतिहासिक पलों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इसमें हास्य और गहराई दोनों का सुंदर मिश्रण है। ब्राउन ने अपनी लेखन शैली में चतुराई और करुणा का संतुलन बनाकर यह दिखाया है कि किस तरह महारानी ने न केवल ब्रिटेन, बल्कि पूरी दुनिया की राजनीति, संस्कृति और समाज पर गहरा प्रभाव डाला। किताब की भाषा सरल, तेज और हास्य से भरी है।

आर्ट एंड कल्चर

बड़े परदे से अनुपस्थित रहा बिहार

कुछ दिन पहले एक फिल्म फेस्टिवल के उद्घाटन समारोह में बिहार के लोकप्रिय अभिनेता मनोज वाजपेयी दर्शकों से बात कर रहे थे। एक दर्शक ने कहा कि आपने 'गैंग ऑफ वासेपुर' की, ऐसी कई स्टोरी की हैं बिहार यूपी में। मैं ऐसी जगह से आया हूं जो इंडिया की मोस्ट डेंजरस प्लेस है..मनोज ने बीच में ही टोका, कौन (जगह) है? -मैं चंबल घाटी के भिंड, मुरैना से हूं...मनोज ने फिर व्यंग्य भरे लहजे में टोका, तुम कभी हमारे गांव आए हो। मनोज ने आगे कहा, मैं चम्पारण से हूं...फिर 'बैंडिट क्वीन' की शूटिंग के दौरान डाकू मान सिंह से अपनी मुलाकात की कहानी सुनाई कि किस तरह मान सिंह ने उनके गांव का नाम सुनकर कहा था, बड़े कुख्यात जगह से आते हैं आप...।

विनोद अनुपम
राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार प्राप्त कला समीक्षक
@patrika.com

जब हिंदी सिनेमा में बिहार के शीर्ष अभिनेता, बिहार की इस तरह की ब्रांडिंग कर रहे हों तो अब आप बिहार से किसी 'तीसरी कसम' की उम्मीद तो नहीं रख सकते। आश्चर्य नहीं है कि 20 साल पहले बनी 'अपहरण' बिहार की पृष्ठभूमि पर बनी शायद आखिरी हिंदी फिल्म थी, जिसमें कहने को तो अहिंसा और हिंसा के द्वंद भी थे। यथार्थ और आदर्श का संघर्ष भी था . लेकिन मूल रूप से फिल्म नीतीश पूर्व के बिहार के आपराधिक वातावरण को चित्रित करती थी, जब राजनीति सीधे-सीधे अपराधियों द्वारा नियंत्रित की जा रही थी। जब जेल अपराधियों की ऐशगाह थी, जब अपहरण सबसे सुरक्षित धंधा समझा जाता था। संयोग नहीं कि सिनेमा के परदे पर अब बिहार नहीं दिखता। बीते वर्षों में बिहार में एक आत्मविश्वास की लहर देखी गई। पंकज त्रिपाठी जैसे अभिनेता गर्व के साथ बिहार की पहचान के साथ बढ़े। ब्यूरोक्रेसी और तकनीकी सेवाओं में बिहार की दखल बढ़ी। ऐसे में सिनेमा यह बखूबी समझता है कि बिहार की नकारात्मक छवि की स्वीकार्यता अब मुश्किल है। हालांकि इसका विकल्प आज से 44 वर्ष पहले शैलेन्द्र ने फिल्मकारों को 'तीसरी कसम' बनाकर सुझाया था। फणीश्वर नाथ रेणु की कहानी 'मारे गए गुलफाम' पर आधारित इस कहानी के फिल्मांकन में बासु भट्टाचार्य ने बिहार की लोकसंस्कृति के तमाम रंग समेटने की कोशिश की थी। कमोबेश कुछ उसी तरह जैसे आज करण जौहर या यश चोपड़ा आमतौर पर पंजाब को परदे पर दिखाते हैं। उन्हीं की कोशिशों का नतीजा है कि आज सिनेमा में पंजाब का पर्याय है प्रेम, उत्साह, रंग...। आश्चर्य है कि फिल्मकारों के मन में यह बिंब इतने गहरे पैठा है कि झारखंड से गए इम्तियाज अली को भी इन मानवीय गुणों को दिखाने की जरूरत पड़ती है तो उन्हें पंजाब की पृष्ठभूमि चुननी पड़ती है। हिंदी सिनेमा बिहार की हिंसा पर तो कथानक तैयार कर लेता है, लेकिन बिहार की सरलता, सामाजिकता, उत्सवधर्मिता उन्हें कहानी की कोई जमीन नहीं दे पाती।

परवरिश किताबों से अलग बाहरी दुनिया का भी अध्ययन जरूरी

खेलों में छिपा बच्चों का विकास

डॉ. गौरव बिस्सा
जीवन प्रबंध प्रशिक्षक
@patrika.com

बच्चे सुन नहीं रहे, कहना नहीं मान रहे और सामने कुतर्क कर रहे हैं, आपने आज के समय में यह बात अनेक अभिभावकों से सुनी होगी। आखिर ऐसा क्या हो गया है कि नई पीढ़ी अपने अभिभावकों से कटती जा रही है? बच्चों द्वारा आज्ञा पालन न करने, जिद करने और एकाकी होने के पीछे दो बड़े कारण हैं- बच्चों पर अभिभावकों का अनावश्यक दबाव और बच्चों को खेलों से विमुख कर देना। अभिभावक चाहते हैं कि खेल के नाम पर बच्चे ऐसे तथाकथित खेल खेलें, जिनके नेपथ्य या बैकग्राउंड में पढ़ाई छिपी हुई हो जैसे नक्शे बनाना, स्क्रेबल खेलकर अंग्रेजी स्पेलिंग्स सीखना आदि।

कुछ दिन पूर्व मिशिगन विश्वविद्यालय के हेल्थ सीएएस मॉट हॉस्पिटल की ओर से बच्चों पर किए गए विशेष शोध की रिपोर्ट प्रकाशित हुई, जो चिंताजनक है। एक से पांच साल तक के बच्चों और उनके अभी अभिभावकों पर हुए इस शोध की रिपोर्ट के अनुसार, दस में से एक बच्चा हफ्ते में एक बार भी बाहर खेलने नहीं जा रहा। इसकी वजह है स्क्रीन टाइम, माता-पिता की अत्यधिक अपेक्षाएं, शैक्षणिक उपलब्धि का दबाव और शारीरिक श्रम से बचने की प्रवृत्ति। शोध ये समझता है कि खेलों से ही शारीरिक और व्यक्तित्व विकास की राह पनपती है अतः बच्चों को खेलने देना चाहिए। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी ने तीन से सात साल तक के 1700 बच्चों पर शोध करके यह निष्कर्ष निकाला है कि जो बच्चे अपने हमउम्र बच्चों के साथ खेलते हैं, उनका मानसिक और शारीरिक विकास ज्यादा अच्छा होता है। एक्सेटर यूनिवर्सिटी के बाल मनोचिकित्सक प्रो. हेलेन डोड की रिसर्च के अनुसार बच्चे के स्कूल जाने और सामूहिक खेल खेलने से स्वस्थ मानसिक स्वास्थ्य की नींव पड़ती है।

किताबों से बाहर की किताबों का अध्ययन भी बहुत मायने रखता है। किताबों से बाहर की किताबें हैं साथ खेलकर हारना-जीतना-सीखना, टीम की अवधारणा को समझना, सहयोग करना, समन्वय स्थापित करना और एक दूसरे के लिए त्याग करने का भाव विकसित करना। ये सब साथ खेलने से आता है। आज की बाल पीढ़ी इससे विमुख हो चली है और इसी का दुष्परिणाम है बच्चे कहना नहीं मान रहे। खेलों को महत्त्वहीन बताकर अभिभावक बच्चों से मानो उनका बचपन ही छीन लेना चाहते हैं। अभिभावकों का ये पढ़ाई संबंधित दबाव भी बच्चे में बागी तेवरों को जन्म दे रहा है। माता पिता संतान की पढ़ाई और कॅरियर तक को एक सीमा में बांधने का प्रयास कर रहे प्रतीत होते हैं। सीमा में बांधने का अर्थ है बच्चे को बचपन से ही परंपरागत पढ़ाई या अच्छे कॅरियर को अपनाने के लिए इतना दबाव डालना कि वह कुछ सर्जनात्मक सोच ही न सके।

माता-पिता दोनों का कठोर व अनुशासन प्रधान रवैया भी बच्चों को जिद्दी बनाने में आग में घी का काम कर रहा है। पहले पिता अनुशासन और कठोरता का प्रतीक था। माता स्नेह, वात्सल्य और प्रेम की प्रतीक थी। आज माता-पिता दोनों कामकाजी हैं। दोनों ही बाहरी चुनौतियों से परेशान हैं। महिलाओं द्वारा स्त्रैण गुणों जैसे प्रेम, ममता आदि का प्रदर्शन कम हो चला प्रतीत होता है। माता-पिता दोनों ही बच्चे से अधिक अपेक्षा करने लगे हैं और मानो दोनों ही पिता स्वरूप हो चले हैं। स्त्रैण या माता के तत्त्व के कम होने से बच्चे में डिग्री लेकर पैसा बनाने की प्रवृत्ति तो विकसित हो रही है लेकिन उसमें मनुष्यता का अभाव हो रहा है। बच्चों पर बेवजह दबाव न डालें, उन्हें खेलने दें व जीवन का संघर्ष स्वयं झेलने दें।

ज्ञान की घाटी में बौद्ध शिक्षा का तीर्थ

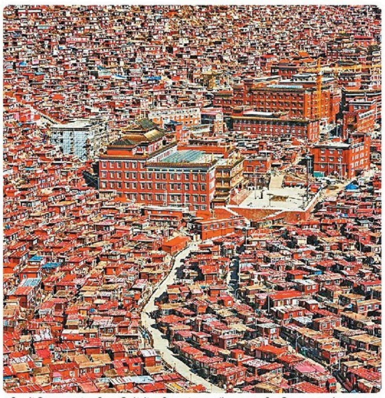

चीन में सिचुआन प्रांत की पहाड़ियों में बसी लारुंग गार बौद्ध अकादमी दुनिया का सबसे बड़ा तिब्बती बौद्ध शिक्षा केंद्र माना जाता है। यह स्थान अपनी अद्भुत लाल-भूरी लकड़ी की झोपड़ियों से ढकी घाटियों के कारण दूर से ही किसी लाल सागर जैसा प्रतीत होता है। 1980 में 'खेनपो जिगमे फुंत्सोक' की ओर से स्थापित यह अकादमी हजारों भिक्षुओं और भिक्षुणियों का घर है, जहां वे ध्यान, दर्शन और बौद्ध ग्रंथों का गहन अध्ययन करते हैं।

रोड सेफ्टी सड़क सुरक्षा केवल सरकारी नीतियों से नहीं, बल्कि जनजागरूकता और व्यक्तिगत जिम्मेदारी से संभव

सड़क दुर्घटना : लापरवाही और रफ्तार का घातक मेल

राजेन्द्र राठौड़
पूर्व नेता प्रतिपक्ष, राजस्थान विधानसभा
@patrika.com

देश की सड़कें अब सिर्फ आवाजाही का माध्यम नहीं रहीं, बल्कि वे देश की विकास गति का प्रतीक भी बन चुकी हैं। लेकिन इसी गति ने जीवन की रफ्तार भी छीन ली है। हर दिन सैकड़ों लोग सड़क हादसों में अपनी जान गंवा रहे हैं। वर्ष 2024 में भारतीय ऑटोमोबाइल बाजार ने 43 लाख कारों की रिकॉर्ड बिक्री की थी यानी हर दिन 12 हजार से अधिक नई गाड़ियां सड़कों पर उतर रही हैं। दोपहिया वाहनों की गिनती तो करोड़ों में है। काउंसिल ऑन एनर्जी, एनवॉयर्नमेंट एंड वाटर (सीईईडब्ल्यू) की रिपोर्ट के मुताबिक देश में वाहनों की संख्या वर्ष 2023 में 22.6 करोड़ थी, जिसके वर्ष 2050 तक 50 करोड़ के पार पहुंचने की संभावना है। लेकिन सड़कों की क्षमता और लोगों की यातायात समझ इस रफ्तार के साथ तालमेल नहीं बैठा पा रही।

इसी का परिणाम है कि देश में विश्व के कुल वाहनों का केवल 1 प्रतिशत है लेकिन सड़क हादसों से होने वाली विश्व की 11 प्रतिशत मौतें हमारे देश में ही होती हैं। सड़क परिवहन मंत्रालय की 'सड़क हादसे 2023' रिपोर्ट बताती है कि वर्ष 2023 में देश में साल भर में 4.8 लाख से ज्यादा सड़क दुर्घटनाएं हुईं जिनमें 1.72 लाख से अधिक लोगों की मृत्यु हुई। हर दिन औसतन 474 लोग सड़क हादसों में जान गंवा रहे हैं।

राजस्थान जैसे राज्यों में स्थिति और चिंताजनक है। जयपुर के हरमाडा में काल बनकर दौड़े डंपर ने 14 जिंदगियों को कुचल दिया। इससे पहले फलौदी में भीषण सड़क हादसे में 15 यात्रियों की मौत हो गई। जोधपुर में निजी बस में आग लगने से 26 यात्रियों की दर्दनाक मौत की खबर ने हर किसी को झकझोर के रख दिया। राजस्थान उच्च न्यायालय ने सड़क हादसों पर चिंता व्यक्त करते हुए केंद्र व राज्य सरकार से त्वरित कदम उठाते हुए हाइवे पर खुली दुकानों को बंद करने, अतिक्रमण हटाने, अवैध रोड कट बंद कराने और हाइवे पेट्रोलिंग शुरू करने के लिए आदेश दिए हैं।

भयावह सड़क हादसों के पीछे सबसे बड़ा कारण मानवीय भूल है। तेज रफ्तार, बिना हेलमेट या सीट बेल्ट के गाड़ी चलाना, शराब पीकर ड्राइविंग करना और ट्रैफिक नियमों को नजरअंदाज करना। सड़कें सुधर रही हैं, वाहन अत्याधुनिक हो रहे हैं, लेकिन इंसानी व्यवहार में सुधार की गति बेहद धीमी है। आज तो हालात यह हो गए हैं कि पैदल यात्रियों के भी चलने के लिए भी सड़कें सुरक्षित नहीं है और बेतरतीब वाहनों की रेलमपेल से पैदल यात्रियों के समक्ष काफी परेशानी खड़ी हो रही है। फुटपाथों पर दुकानदारों, वाहनों और अतिक्रमणों के कारण लोगों को सड़क पर चलना पड़ता है, जिससे दुर्घटनाओं का खतरा बढ़ जाता है। यदि प्रशासन, नीति-निर्माता और नागरिक मिलकर प्राथमिकता दें, तो पैदल चलना सुरक्षित और सम्मानजनक बनाया जा सकता है। यातायात के सार्वभौमिक नियम के अनुसार, पैदल यात्रियों को सामने से आने वाले वाहनों की दिशा में चलना चाहिए ताकि वे ट्रैफिक को देखकर सुरक्षित रह सकें। सड़क के बायीं ओर चलने से पीछे से आने वाले वाहनों से दुर्घटना का खतरा बढ़ जाता है।

इसी संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार और एनएचएआइ से पूछा है कि क्या भारत में भी अमरीका की तरह पैदल यात्रियों को सड़क के दायीं ओर चलने का नियम लागू किया जा सकता है? सड़क सुरक्षा केवल सरकारी नीतियों से नहीं, बल्कि जनजागरूकता और व्यक्तिगत जिम्मेदारी से संभव है। केंद्र सरकार ने सड़क सुरक्षा के बुनियादी ढांचे में सुधार के लिए कई ठोस कदम उठाए हैं। सड़कों की इंजीनियरिंग को बेहतर बनाया जा रहा है, राष्ट्रीय राजमार्गों पर जगह-जगह फ्लाईओवर का निर्माण किया गया है और दुर्घटना संभावित ब्लैक स्पॉट्स को सुधारने का अभियान जारी है। इन प्रयासों से भले ही कुछ हद तक राहत मिली हो, लेकिन इनका प्रभाव तब तक सीमित रहेगा जब तक सड़क उपयोगकर्ता स्वयं सावधानी नहीं बरतेंगे।

सरकार का लक्ष्य है कि वर्ष 2030 तक सड़क हादसों में होने वाली मौतों की संख्या को आधा किया जा सके। इसके लिए न केवल इंफ्रास्ट्रक्चर सुधार बल्कि व्यापक सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता है। लाइसेंस भी केवल औपचारिकता बनकर रह गया है। बसों में फायर सेफ्टी उपकरण व आपातकालीन द्वार की नियमित जांच होनी चाहिए। ड्राइविंग टेस्ट को तकनीकी रूप से और कड़े मानकों पर आधारित बनाना होगा। स्कूल-कॉलेज में सड़क सुरक्षा को अनिवार्य विषय के रूप में शामिल किया जाना चाहिए। सड़कें विकास का प्रतीक तब बनेंगी जब उन पर चलने वाला हर व्यक्ति कानून का सम्मान करेगा। तेज रफ्तार लुभाती जरूर है पर एक क्षण की लापरवाही पूरी जिंदगी बदल सकती है।

आपकी बात

बच्चों में आत्महत्या की प्रवृत्ति रोकें

आजकल बच्चों में आत्महत्या के मामलों में वृद्धि देखी जा रही है। अभिभावकों को चाहिए कि वे बच्चों के असामान्य व्यवहार पर ध्यान दें। उनसे प्यार और धैर्यपूर्वक बात करें। उनकी समस्याएं एक दोस्त की तरह सुनें और उन्हें गलत-सही का भेद समझाएं। पारिवारिक संवाद और अपनापन ही बच्चों में सकारात्मकता भर सकता है। **- निर्मला वशिष्ठ**, राजगढ़, अलवर

कृत्रिम रोशनी के कारण प्रदूषण

शहरों में जगह-जगह लगे विशाल होर्डिंग और फ्लेक्स कृत्रिम रोशनी से प्रदूषण फैला रहे हैं। इनकी तेज चमक वाहन चालकों के लिए खतरा बनती है और कैमरों की निगरानी में बाधा डालती है। पर्यावरण मंत्रालय को इस पर सख्त निगरानी रखनी चाहिए, अन्यथा यह जन-सुरक्षा के साथ किया गया खिलवाड़ साबित होगा। **- गिरीश ठक्कर**, राजनांदगांव (छत्तीसगढ़)

खोती जा रहीं मानवीय संवेदनाएं

आज का समाज स्वार्थ, ईर्ष्या और प्रतिस्पर्धा में उलझता जा रहा है। लोगों के अंदर मानवीय संवेदनाओं का अभाव चिंता का विषय बन गया है। आधुनिक जीवन की व्यस्तता ने परिवार और रिश्तों में प्रेम और स्नेह को कम कर दिया है। इसकी वजह से अपराधों में भी बढ़ोतरी हो रही है। यह हमारा सामाजिक और पारिवारिक ढांचा खराब कर रहे हैं। **- कृष्ण कांत शर्मा**, बदलेटा खुर्द

आज का सवाल

संयुक्त परिवार परंपरा को बचाए रखने के लिए क्या उपाय किए जाने चाहिए?

ईमेल करें: edit@epatrika.com

संवाद

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । मुंबई । शनिवार, 8 नवंबर 2025

फ़ैसले से जुड़े सवाल

सुप्रीम कोर्ट का कहा कैसे पूरा होगा

देश में पिछले साल डॉग बाइट के 37.17 लाख केस रेकॉर्ड किए गए थे यानी औसतन हर दिन 10 हजार से अधिक मामले। वहीं, 2024 के ही एक डेटा के मुताबिक, सड़कों पर आवारा पशुओं की वजह से होने वाले हादसों में से 60% की वजह स्ट्रे डॉग हैं, जबकि 33% का कारण आवारा पशु। इन आंकड़ों को देखते हुए सुप्रीम कोर्ट का आवारा कुत्तों और मवेशियों को लेकर दिया गया आदेश एक बड़ी समस्या के समाधान की दिशा में अहम कदम है।

स्ट्रे डॉग्स की समस्या

रुख में बदलाव । शीर्ष अदालत की तीन जजों की एक बेंच ने सभी राज्यों-केंद्र शासित प्रदेशों को सार्वजनिक जगहों - शैक्षणिक संस्थान, हॉस्पिटल, बस स्टैंड, रेलवे स्टेशन वगैरह - से स्ट्रे डॉग्स हटाने का आदेश दिया है। अहम पॉइंट यह है कि स्ट्रे डॉग्स को नसबंदी और टीकाकरण के बाद उस जगह नहीं छोड़ा जाएगा, जहां से उन्हें पकड़ा गया है। सुप्रीम कोर्ट का यह ताजा आदेश उसके 22 अगस्त को दिए संशोधित आदेश से अलग है, जब कहा गया था कि आवारा कुत्तों को जहां से उठाया जाए, वहीं छोड़ा जाए।

प्रयास की कमी । विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक, 2022 में भारत में रेबीज की वजह से 305 मौतें दर्ज की गई थीं। स्ट्रे डॉग्स को लेकर कॉलोनियों-सोसाइटियों में आए दिन होने वाला टकराव इस समस्या से जुड़ा दूसरा पहलू है। लेकिन, कहना होगा कि इसके बावजूद जरूरत के मुताबिक ठोस प्रयास नहीं किए गए।

पशुओं पर क्रूरता । SC के ताजा आदेश में उसी व्यावहारिकता की कमी दिखती है, जो 11 अगस्त के फैसले में थी। एनिमल बर्थ कंट्रोल रूल्स, 2023 के मुताबिक, स्ट्रे डॉग्स को उसी जगह छोड़ा जाना चाहिए, जहां से उन्हें पकड़ा गया था। डॉग्स अपना इलाका चिह्नित करके रखते हैं और अपनी जगह से हटाने पर उनका व्यवहार आक्रामक हो सकता है।

मुश्किल लक्ष्य । भारत की सड़कों-सार्वजनिक जगहों को सुरक्षित बनाने की जरूरत है। सुप्रीम कोर्ट ने जाहिर तौर पर समस्या की गंभीरता को ध्यान में रखकर आदेश दिया है, लेकिन इसे पूरा करना बड़ी चुनौती होगी। जहां आवारा पशुओं का कोई ठीक-ठाक रेकॉर्ड नहीं, वहां उनको हटाना, शेल्टर होम में रखना कितना संभव है? आज देश के सामने ये सवाल इसलिए हैं, क्योंकि संबंधित एजेंसियों ने अपनी जिम्मेदारी ठीक से नहीं निभाई। अगर स्ट्रे डॉग्स के नसबंदी कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से लागू किया जाता, तो नौबत यहां तक आती ही नहीं।

अंतर्दृष्टि

बुद्ध और नीत्शे-जैसा है, वैसा ही स्वीकारो जीवन

इतिहास के दो भिन्न छोरों पर हम दो ऐसे व्यक्तित्व मिलते हैं, जिन्होंने मानव पीड़ा को समझने और जीवन के अर्थ को नए दृष्टिकोण से देखने का साहस किया। एक भारत की भूमि पर सिद्धार्थ यानी गौतम बुद्ध के रूप में और दूसरा दूर जर्मनी में फ्रेडरिक नीत्शे के रूप में। दोनों के शब्द अलग थे, पर उनका सार एक था- जीवन से भागो मत, जीवन से प्रेम करो। उसे वैसा ही स्वीकारो जैसा वह है। बुद्ध ने कहा- 'सत्य को देखने के लिए कोई कल्पना मत जोड़ो।' और नीत्शे ने कहा- Amor Fati यानी अपने भाग्य से प्रेम करो। इन दो वाक्यों में जीवन की सबसे बड़ी मुक्ति छिपी है, क्योंकि जब हम जीवन को अपने अनुसार बदलने की जिद छोड़ देते हैं, तब ही हम पहली बार उसे समझने लगते हैं। जब तक हम 'क्यों मेरे साथ ऐसा हुआ' के सवाल में उलझे रहते हैं, तब तक जीवन एक बोझ बना रहता है। पर जैसे ही हम कहते हैं - 'हां, यह जो है, यही मेरा रास्ता है,' उसी क्षण भीतर एक गहरी शांति उतरती है।

सुंदर चंद ठाकुर

मनुष्य की सबसे बड़ी भूल यही है कि वह हर समय कुछ बदलना चाहता है- मौसम, रिश्ते, लोग, किस्मत, यहां तक कि स्वयं को भी। वह सोचता है कि जब सब कुछ ठीक हो जाएगा, तब वह शांति में रहेगा। लेकिन शांति किसी भविष्य की मंज़िल नहीं, वर्तमान की स्वीकृति में छिपी है। बुद्ध ने कहा- 'दुख की जड़ तृष्णा है।' और यह तृष्णा केवल भौतिक नहीं, मानसिक भी है- घटनाओं को अपने अनुसार करने की तृष्णा। जो इस तृष्णा को देख लेता है, वही दुख से बाहर निकलने की राह पर चलता है। नीत्शे ने भी जीवन को अस्वीकार नहीं किया, उन्होंने उसे आलिंगन किया। उन्होंने कहा- 'जो कुछ घटा है, उसे दोबारा घटने की कामना करो।' यह वाक्य असहनीय लग सकता है, पर इसके भीतर गहरा अर्थ है। नीत्शे हमें सिखाते हैं कि अगर हम अपने भाग्य से प्रेम कर सकते हैं, तो जीवन का कोई क्षण व्यर्थ नहीं रहता। हर घटना, चाहे वह पीड़ा भरी हो या सुखद, हमें कुछ सिखाने आई होती है।

बुद्ध की साधना का केंद्र भी यही था- प्रतिरोध छोड़ो। जब तुम किसी पीड़ा को रोकने की कोशिश करते हो, तो वह और गहरी होती है। लेकिन जब तुम उसे पूरी जागरूकता के साथ स्वीकारते हो, तो वह घुलने लगती है। उन्होंने कहा- 'जो है, उसे देखो; बस देखो।' यह देखना ही ध्यान है। यही देखना मुक्ति है। जो प्रतिरोध करता है, वह थक जाता है। जो बहना सीख जाता है, वह मुक्त हो जाता है। नीत्शे कहते हैं- 'जीवन को केवल सहो मत, उसका उत्सव मनाओ।' और बुद्ध कहते हैं- 'जो समझ गया, उसे किसी उत्सव की आवश्यकता नहीं, उसका अस्तित्व ही उत्सव बन जाता है।' दोनों की वाणी में भले अलग संगीत है, पर लय एक ही है- जीवन को समझने का अर्थ है उसे बिना शर्त स्वीकारना।

ऑफ़ दि ट्रैक

अंटार्कटिका पर ख़तरा

दिलीप लाल

अंटार्कटिका (दक्षिणी ध्रुव) में तीन बड़े बदलाव एक साथ हो रहे हैं- बर्फ का तेजी से पिघलना, बर्फ की चट्टानों का टूटना और महासागरों की धाराओं का बिगड़ना। वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर वेस्ट अंटार्कटिक की आइस शीट पूरी तरह टूट गई, तो दुनियाभर के समुद्र का स्तर तीन मीटर से अधिक बढ़ सकता है। इससे सिडनी, मुंबई और न्यू यॉर्क जैसे तटीय महानगरों में भयानक बाढ़ व तबाही आ सकती है। ऑस्ट्रेलिया की नैशनल यूनिवर्सिटी और यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू साउथ वेल्स के वैज्ञानिकों ने एक नई रिपोर्ट में कहा है कि अंटार्कटिका में हो रहे बदलाव इतने तेज और गहरे हैं कि इनका रुकना नामुमकिन होता जा रहा है। यह अध्ययन नेचर मैगजीन में प्रकाशित हुआ है। अंटार्कटिका में थोड़ा-सा तापमान बढ़ना इस संकट को और गंभीर बना देता है। चिंता जताई गई है कि ये बदलाव अब अचानक और स्थायी रूप से हो सकते हैं। अंटार्कटिका में हो रहे ये परिवर्तन केवल ध्रुवीय क्षेत्र तक सीमित नहीं। इनका असर पूरी दुनिया के मौसम, समुद्र के स्तर और जीव-जंतुओं पर पड़ेगा। वैज्ञानिकों ने कहा है कि अगर अब भी कार्बन उत्सर्जन को तुरंत नहीं रोका गया, मानव सभ्यता के लिए स्थायी खतरा बन जाएगा।

देश की खानपान की संस्कृति-इतिहास के मुक़ाबले में भी कोई नहीं

ज़ायक़ा बने पर्यटन की जान

अगर हम दुनिया के मशहूर पर्यटन स्थलों को ध्यान से देखें - जैसे बैंकॉक के स्ट्रीट मार्केट, सिंगापुर के हॉकर सेंटर, मैड्रिड के टापाज बार, मिलान के रेस्तरां या दुबई के आलीशान डाइनर, तो समझ आता है कि खाना किस तरह किसी जगह की पहचान गढ़ता है। इन जगहों पर भोजन केवल पेट भरने या स्वाद की चीज नहीं, यह दिल है वहां के पर्यटन का। टूरिस्ट वहां सिर्फ घूमने ही नहीं, खाने भी आते हैं। आज किसी एक डिश को चखने के लिए यात्रा की योजना बना लेना बड़ी बात नहीं। जापान, इटली, स्पेन, थाईलैंड, मेक्सिको और फ्रांस जैसे देशों ने अपने यहां की खानपान की विरासत को ग्लोबल ब्रैंड में बदल दिया है। अब वक्त है, भारत भी कुछ ऐसा ही करे।

अमीन अली

AI Image

फूड टूरिज्म

- बस घूमने नहीं, खाने को समझने जाते हैं पर्यटक
- जापान, इटली जैसे देशों ने खाने को ब्रैंड बनाया
- भारत के खानपान जैसी विविधता कहीं और नहीं

मौका नहीं भुनाया । दुनिया में कहीं और इतने स्वाद नहीं, जितने भारत में। हर इलाके की अपनी लज्जत है। लखनऊ की महकती रसोइयों से लेकर केरल के मसालों के बागानों तक, दिल्ली की शाही थालियों से पंजाब के तंदूरों तक, समुद्र तटों वाली जगहों के सीफूड से पूर्वोत्तर के व्यंजनों तक - भारत का खाना स्थान और मौसम के हिसाब से बदल जाता है। खानपान की ऐसी समृद्ध परंपरा कहीं और नहीं मिलती। बावजूद इसके भारत ने अभी तक पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए अपने खाने का इस्तेमाल नहीं किया।

दबदबा तोड़ रहा । भारत के खानपान को पर्यटन के नक्शे पर लाने का इससे बेहतर समय नहीं मिलेगा। भारतीय भोजन को पूरे विश्व में अब केवल पसंद ही नहीं किया जा रहा, लोग उसे दिल से अपना रहे हैं और बनाना सीख रहे हैं। आज भारतीय व्यंजन दुनिया के बड़े रेस्तरां में जगह बना रहा है। पहले जहां फ्रांस, जापान जैसे देशों का दबदबा था, अब वहां भारत की खुशबू फैल रही है।

सफलता की लिस्ट । पिछले कुछ साल भारतीय खानपान के लिए ऐतिहासिक रहे। शेफ विजय कुमार को इस साल न्यू यॉर्क में सर्वश्रेष्ठ शेफ का प्रतिष्ठित James Beard Award मिला। उनके रेस्तरां 'Semma' ने फिर से Michelin Star हासिल किया। 'द न्यू यॉर्क टाइम्स' ने उसे न्यू यॉर्क का नंबर वन रेस्तरां बताया। दुबई का Tresind Studio पहला भारतीय रेस्तरां है, जिसे थ्री Michelin Stars मिले। इसी तरह, बैंकॉक में शेफ गरिमा अरोड़ा के रेस्तरां 'Gaa' के पास टू Michelin Stars हैं। दुनिया के 50 बेस्ट रेस्तरां में गगन आनंद का नाम लगातार बना हुआ है। न्यू यॉर्क में Bungalow हो, सैन फ्रांसिस्को में Copra या लंदन में कनिष्क, जिमखाना और दार्जिलिंग एक्सप्रेस - ये सभी भारतीय रसोई को नए अंदाज में पेश कर रहे हैं।

नए अनुभव । यानी विदेश में भारतीय खाना अब सिर्फ करी और नान तक सीमित नहीं रहा। यह हमारे इनोवेशन, परंपरा और कहानी को पेश कर रहा है। भारतीय शेफ दुनिया को हमारे मसालों, स्वाद और परंपराओं के नए अनुभव से वाकिफ करा रहे हैं। यानी खानपान की विरासत को अपनाने और पर्यटन की पहचान बनाने का समय आ चुका है।

थाली में संस्कृति । अब यात्रा की बातें खाने से शुरू होती हैं और खाने पर खत्म। टूरिस्ट इटली केवल घूमने नहीं, उसे चखने जाते हैं। जापान जाना केवल सैर के लिए नहीं, उसके स्वाद और रीति-रिवाजों को समझने के लिए होता है। थाईलैंड ने तो अपने पर्यटन उद्योग को ही खानपान के इर्द-गिर्द बुन डाला। यहां तक कि मेक्सिको ने भी खाने को पहचान बना ली, जो कभी अपने एक स्ट्रीट फूड taco के लिए ही जाना जाता था।

भारत के पास बढ़त । आज देशों में शाकाहार को अपनाया जा रहा, जबकि हमारे यहां यह सदियों पुरानी जीवन-दर्शन की परंपरा है। Mediterranean देश अपने भोजन को स्वास्थ्य का प्रतीक बना सकते हैं, तो भारत के लिए यह काम बहुत आसान है। वह संतुलित भोजन की वैश्विक राजधानी बन सकता है। सोचिए क्या जोड़ होगा जब स्थानीय शाकाहारी व्यंजन योग और आयुर्वेद के साथ मिल जाएं।

समृद्ध विरासत । भारत का हर व्यंजन यहां के मौसम, विश्वास, यादों और यात्राओं का आईना है। इसके बावजूद हमारा टूरिज्म अभी तक सिर्फ किलों, महलों और प्राकृतिक नजारों पर टिका है। ये शानदार हैं, पर खाना ही है, जो एक यात्री को उस जगह की आत्मा से जोड़ता है। यूरोप के वाइन रूट की तरह यहां भी फूड रूट बना सकते हैं - जैसे लखनऊ का कबाब ट्रेल, केरल का मसाला ट्रेल या दिल्ली, मुंबई और कोलकाता की स्ट्रीट फूड सफारी।

Ai Image

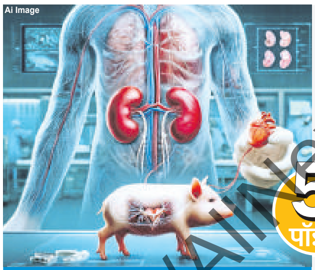

ट्रांसप्लांट में नई आशा

मिशिगन यूनिवर्सिटी के एक प्रफेसर ने 1995 में जब सुअर के अंगों को बंदरों में प्रत्यारोपित किया, तो सनसनी के बावजूद इंसानों में इस प्रयोग को लेकर कई संदेह थे। आज वे दूर हो चुके हैं।

5 पॉइंट

1 इंसानों पर प्रयोग
साल 2022 में पहली बार इंसानों में सुअर का दिल प्रत्यारोपित किया गया। इस साल जनवरी में एक शख्स को सुअर की किडनी लगाई गई और वह रेकॉर्ड 271 दिनों तक सही तरह से काम करती रही।

2 क्लिनिकल ट्रायल को मंजूरी
हार्ट और किडनी के नतीजों से वैज्ञानिक उत्साहित हैं। अमेरिकी FDA ने अब eGenesis कंपनी को सुअर की किडनियों के क्लिनिकल ट्रायल की अनुमति दी है। United Therapeutics को भी परमिशन मिली है।

3 सुअर ही क्यों?
क्योंकि सुअर के अंग इंसानों की तरह होते हैं, उन्हें आसानी से पाला जा सकता है, खर्च कम है और दुनिया में लगभग हर जगह पाए जाते हैं। हां, जीन एडिटिंग की मदद से थोड़ा बदलाव जरूर करना पड़ता है।

4 चीन में प्रयोग
किसी और जानवर के अंग लेने में डर रहता है कि इंसानी शरीर कहीं उसे रिजेक्ट न कर दे। चीन की ClonOrgan कंपनी सुअर के कुछ जीन निष्क्रिय करके उसकी जगह कुछ इंसानी जीन जोड़ती है।

5 लिवर और फेफड़े भी
वैज्ञानिक सुअर के लिवर और फेफड़ों पर भी प्रयोग कर रहे हैं। अमेरिका में तीसरा किडनी ट्रांसप्लांट होने वाला है। पूरी दुनिया में लाखों लोगों को ट्रांसप्लांट की जरूरत है, पर उतना अंगदान होता नहीं।

प्रस्तुतिः शैलेंद्र पांडेय

मुग़ल शासन में कथक ने देखे कई बदलाव

प्रसिद्ध कथक नृत्यांगना, गुरु और कोरियोग्राफर शमा भाटे पुणे में रहती हैं। विख्यात कथक नृत्यांगना रोहिणी भाटे की शिष्या और बहू शमा भाटे की महाराष्ट्र में उत्तर भारतीय कथक के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। उन्होंने बड़ी संख्या में शिष्याएं तैयार की हैं, जिन्होंने पिछले दिनों उनके 75 वर्ष होने पर भव्य अमृतोत्सव आयोजित किया। समारोह में उन्हें पंडित दीनानाथ मंगेशकर अवॉर्ड देने की घोषणा भी हुई। कथक यात्रा पर उनकी मराठी पुस्तक 'नृत्यमय जग..नर्तनाचा धर्म..' भी इन्हीं दिनों आई है। 16 अक्टूबर 1950 को जन्मीं शमा भाटे हाल में ही कथक और बैले महोत्सव में भाग लेकर टोरंटो से लौटी हैं। उनसे ***आलोक पराड़कर*** *की बातचीत के खास अंश :*

NBT सप्ताह का इंटरव्यू

शमा भाटे

> **संगीत की भाषा सार्वभौमिक है। उनकी जो स्वरावली या ताल है, उससे मुझे कथक को एक नई दृष्टि से देखने का अवसर मिला। मैंने अपने प्रयोग हमेशा संगीत विद्वानों को दिखाए, उनसे चर्चा की। उनकी स्वीकृति से ही मैं इन रास्तों पर आगे बढ़ी**

■ उम्र के 75 साल और इससे कुछ कम वर्षों की कथक की लंबी यात्रा, पीछे मुड़कर देखते हुए कैसा लगता है?

जब 7 साल की उम्र में कथक सीखना शुरू किया तो कोई इरादा नहीं था कि जीवन में यही काम करूंगी, लेकिन रोहिणी जी की प्रेरणा से मैंने यह निर्णय किया। उन्होंने कथक का ऐसा चाव लगा दिया कि जीवन का यही उद्देश्य हो गया। वह मेरी आदर्श हैं। जैसे-जैसे मैं कथक की गहराई में जाती गई, मुझे समझ में आने लगा कि यह कभी न समाप्त होने वाला सागर है।

■ महाराष्ट्र में उत्तर भारतीय कथक को लोकप्रिय बनाने में गुरु की तरह आपने भी कठिन परिश्रम किया है, मराठी भाषियों के बीच इसके प्रचार-प्रसार में कैसी मुश्किलें आती हैं?

वास्तव में बहुत दिक्कत नहीं आती, क्योंकि संगीत की अपनी भाषा है। हां, यह जरूर है कि उसके क्षेत्रीय संदर्भ हो सकते हैं। महाराष्ट्र, उत्तर और दक्षिण भारत के मध्य है, लेकिन यहां का रहन-सहन, पर्व-त्योहार, भाषा-लिपि उत्तर भारत से बहुत भिन्न नहीं। सबसे बड़ी बात कि यहां हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत है, कर्नाटक संगीत का प्रचार नहीं है। मुंबई-पुणे में हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के कितने ही दिग्गज कलाकार हैं। इससे कथक के प्रचार-प्रसार में आसानी हुई।

■ आपने पंडित बिरजू महाराज और पंडित मोहनराव कल्याणपुरकर से भी नृत्य की शिक्षा ग्रहण की है। तीनों ही नृत्य गुरुओं की कथक के प्रति दृष्टि में क्या भिन्नता आपने देखी?

पंडित मोहनराव कल्याणपुरकर जी से कभी सीधे सीखने का अवसर नहीं मिला, लेकिन वह मेरी गुरु रोहिणी जी के पास आते थे और अपने गुरु के माध्यम से ही मुझे उनके सबक मिलते रहे। मैं उनसे बहुत प्रभावित हुई। मैं जब 16 वर्ष की थी तभी से पंडित बिरजू महाराज जी का नाम सुन रखा था। वह वर्ष में एक बार पुणे जरूर आते थे। उनसे काफी कुछ सीखने को मिला, लेकिन मैं उनकी नृत्य शैली को नहीं अपनाती क्योंकि मेरी काफी लंबी तालीम अपने गुरुओं से हुई है। मैंने प्रसिद्ध तबला वादक पंडित सुरेश तलवलकर जी से लय-ताल की शिक्षा भी पाई है।

■ अपने नृत्य में आपने लगातार प्रयोग किए हैं, जिनमें कई बार विश्व संगीत का उपयोग भी होता है, मसलन जैज रचनाओं पर की गई नृत्य संरचनाएं। आपकी कुछ प्रस्तुतियों में कला के दूसरे माध्यम भी शामिल हैं। क्या ऐसी उदारता कथक के स्वभाव को स्वीकार्य होती है, इससे उसके मूल स्वरूप को कोई खतरा नहीं होता?

सभी बड़े कलाकारों ने परंपरा को एक प्रवाह के रूप में ही माना है और इसमें कलाकार को अपना कोना मिलना ही चाहिए। मैंने कई ऐसे तालों का, बंदिशों का, तरानों का प्रयोग किया जो मैंने सीखा नहीं था। मैंने रातंजनकर जी की, अभिषेकी जी की, जसराज जी की बंदिशों का प्रयोग किया क्योंकि मेरा मानना है कि ये चीजें भले ही कथक में अभी तक न आई हों लेकिन संगीत के व्यापक दायरे में तो शामिल हैं हीं। मैंने विश्व संगीत के साथ कम से कम 65 कार्यक्रम किए और मुझे लगा कि संगीत की भाषा तो सार्वभौमिक है। उनकी जो स्वरावली या ताल है, उससे मुझे कथक को नई दृष्टि से देखने का अवसर मिला। मैंने अपने प्रयोग हमेशा संगीत विद्वानों को दिखाए, उनसे चर्चा की। उनकी स्वीकृति से ही मैं इन रास्तों पर आगे बढ़ी। जहां तक दूसरे कला माध्यमों को शामिल करने की बात है, मुझे लगता है कि एक पड़ाव पर जाकर ऐसा लगता है कि सभी कलाएं आपस में बहनें हैं। इन प्रयोगों से मेरे कथक की भाषा और समृद्ध होती गई।

■ बताते हैं कि शंभू महाराज कक्षा शुरू करने से पहले विद्यार्थियों को उस दिन की खबरें बताते यानी वह उन्हें समाज में हो रही चीजों के बारे में सजग रखना चाहते थे। अक्सर कथक कृष्ण की कथाओं तक ही सीमित दिखता है, जबकि आप अपनी नृत्य प्रस्तुतियों में नए-नए विषय उठाती हैं। शास्त्रीय नृत्यों को समकालीन समाज के विषयों से परहेज क्यों रहा है?

कथक का दायरा बहुत बड़ा है, इसे सीमित नहीं करना चाहिए। सवाल यह है कि हम किस नजरिए से देख रहे हैं। कथक कई दौर से गुजरा है, मुगलों के शासन में इसमें कई परिवर्तन हुए। मेरा मानना है कि इन सबसे गुजर कर कथक लचीला हो गया।

■ संगीत चिकित्सा पर कई लोग काम कर रहे हैं। आपने भी मानसिक रूप से अविकसित बच्चों के बीच कथक के साथ काम किया है। संगीत चिकित्सा का क्या भविष्य देखती हैं?

इस दिशा में बहुत काम करने की आवश्यकता है। कला से एकाग्रता बढ़ती है, सम्प्रेषण बढ़ता है, समन्वय बढ़ता है। ऐसे बच्चों में इन्हीं बातों की तो कमी है। मुझे बहुत अच्छे परिणाम मिले। संगीत प्रदर्शन कला तक ही सीमित नहीं है। इसमें बहुत संभावनाएं हैं।

www.nbt.in

यूरोप में दिखे कैसे भिखारी

अक्सर हम लोग पश्चिमी और यूरोपीय देशों के इंफ्रास्ट्रक्चर और वहां की टेक्नॉलजी पर बातें करते हैं। वहां से तुलना करते हुए लगता है कि हम बहुत पीछे हैं। उन देशों की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था बेहतरीन है। मसलन, भारत में इतनी गरीबी है कि शहर की सड़कों पर नाबालिग बच्चों से लेकर बुजुर्ग तक भीख मांगते नजर आते हैं। जिन शहरों में बड़ी संख्या में टूरिस्ट आते हैं, वहां तो हालत और खराब है। विदेशी टूरिस्टों को देखते ही भीख मांगने वाले उनके पीछे पड़ जाते हैं। यही हाल रेलवे स्टेशनों पर भी होता है। इसे देखकर लगता है कि मानो, हमारे यहां यही स्थिति है। लेकिन ऐसा है नहीं। दुनिया का शायद ही कोई देश हो, जहां भिखारी न होते हों। कई मामलों में तो यूरोपीय देशों से हमारे यहां की स्थिति बेहतर है।

ये अलग बात है कि उन देशों में भीख मांगने के अलग तरीके हैं। मसलन, फ्रैंकफर्ट और बर्लिन जैसे शहरों में भीख मांगने के लिए चौराहों पर गिटार बजाते या गाना गाते लोग नजर आते हैं। वे किसी से पैसा नहीं मांगते, लेकिन उनका मकसद यही होता है कि उन्हें पैसा मिले। फ्रैंकफर्ट के तो एक शॉपिंग स्ट्रीट में कुछ भिखारी लगभग उसी अंदाज में भीख मांगते दिखे, जैसे यहां सड़क पर कई भिखारी स्थायी ठिकाना बना लेते हैं। सामने कटोरा, साइड पर अपने कपड़े और सामान की गठरी और कुछ ने तो अपने पास ही अपना एक कुत्ता भी बिठा रखा था। ये लोग किसी को कुछ कहते नहीं, लेकिन आते-जाते लोग उनके कटोरे में वहां की करंसी के कुछ सिक्के डालते हैं। लेकिन एक जगह तो ऐसा वाकया हुआ कि मैं हैरान रह गया। मैं फ्रैंकफर्ट में ही एक जगह से दूसरी जगह जा रहा था। मेट्रो में अभी अपनी सीट पर ही बैठा था कि एक महिला आई और उसने वहां बैठे पैसेंजरों के सामने बारी-बारी से हाथ बढ़ा दिया। वह क्या बोल रही थी, यह तो मेरी समझ नहीं आया लेकिन जिस तरह से वह हाथ बढ़ा रही थी, उससे साफ लगा कि वह भीख मांग रही है। उसे देखकर मुझे दिल्ली की याद आ गई। यहां भले ही वैसा डिवेलपमेंट नहीं है, लेकिन दिल्ली या देश के किसी भी शहर में मेट्रो के भीतर किसी को भीख मांगते नहीं देखा।

खुद अपनी आंख से

गुलशन राय खत्री

बाद में पता चला कि वहां मेट्रो स्टेशनों पर एंट्री के लिए गेट नहीं होता। न वहां भारत के शहरों की तरह मेट्रो में स्टेशन से घुसते ही सिक्युरिटी चेक होता है और न ही ट्रेन तक जाने के लिए पहले टोकन या स्मार्ट कार्ड लगाकर गेट खोलना होता है। पैसेंजर सीधे ही प्लैटफॉर्म पर जाते हैं और ट्रेन में सवार हो जाते हैं। यही वजह है कि वहां मेट्रो में भिखारी भी आ जाते हैं। ये टिकट लेकर चलते हैं या बिना टिकट, पता नहीं लेकिन वहां यह सिस्टम होता है कि अचानक ही ट्रेन में चेकिंग शुरू होती है और जो बिना टिकट या मंथली पास के मिलता है, उस पर भारी-भरकम जुर्माना लगाया जाता है और जुर्माना वसूलने के बाद ही छोड़ा जाता है।

चलते-चलते...

वैज्ञानिकों ने पाया है कि घरों में छिपे तिलचट्टे सिर्फ गंदगी नहीं फैलाते, बल्कि हवा में जहर घोलते हैं। नॉर्थ कैरोलिना स्टेट यूनिवर्सिटी के शोध में खुलासा हुआ कि खासकर जहां मादा तिलचट्टों की संख्या ज्यादा होती है, वहां हवा में एलर्जन और बैक्टीरियल टॉक्सिन यानी एंडोटॉक्सिन भी अधिक पाए जाते हैं। फेफड़ों की सेहत के लिए भी इसे हटाना जरूरी है।

रीडर्स मेल

महिला वोटर्स की भूमिका

6 नवंबर के आलेख 'बिहार की महिला वोटर्स क्या चाहती हैं', में रूही तिवारी ने बिहार चुनाव में महिलाओं की भागीदारी को लेकर सटीक तथ्य पेश किए हैं। बिहार की राजनीति में महिला मतदाताओं की भूमिका अब केवल सहायक नहीं, बल्कि निर्णायक बन चुकी है। इस राज्य में पुरुषों की तुलना में महिलाओं का मतदान प्रतिशत लगातार अधिक रहा है, जो लोकतंत्र में उनकी बढ़ती राजनीतिक जागरूकता और भागीदारी का प्रमाण है। यही कारण है कि अब कोई भी राजनीतिक दल महिलाओं को नजरअंदाज करने का जोखिम नहीं उठा सकता। बिहार विधानसभा चुनावों की घोषणा होते ही मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने महिलाओं को लुभाने के लिए बड़ा कदम उठाया। उन्होंने 21 लाख महिला वोटरों के बैंक खातों में 2,100 करोड़ रुपये भेजे। यह कदम न केवल आर्थिक सहायता का प्रतीक है, बल्कि महिला मतदाताओं में एनडीए के प्रति विश्वास और जुड़ाव को मजबूत करने की रणनीति भी है।

विभूति बुपक्या, ईमेल से

बिहार की सियासत

बिहार की राजनीति लंबे समय से जातिगत समीकरणों और अपराधीकरण की चपेट में है। यह एक ऐसी कड़वी सच्चाई है, जिसने लोकतंत्र की आत्मा को भीतर तक खोखला कर दिया है। मोकामा में जेडीयू प्रत्याशी और बाहुबली अनंत सिंह की गिरफ्तारी ने इस हकीकत को फिर से उजागर कर दिया। अनंत सिंह को जनसुराज पार्टी के समर्थक दुलारचंद यादव की हत्या के मामले में पकड़ा गया, जबकि दुलारचंद खुद भी बाहुबली पृष्ठभूमि वाले माने जाते हैं। चुनावी मैदान में अनंत सिंह का सामना आरजेडी उम्मीदवार वीणा देवी से है, जो बाहुबली सूरजभान सिंह की पत्नी हैं। यह दृश्य केवल मोकामा का नहीं, बल्कि पूरे बिहार के राजनीतिक ताने-बाने का प्रतीक है।

सुभाष बुड़ावन वाला, ईमेल से

आर.एन.आई. पंजीयन नंबर 1613/1957 स्वत्वाधिकारी बेनेट, कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड के लिए आर. कृष्णमूर्ति द्वारा टाइम्स ऑफ इंडिया बिल्डिंग, डॉ. डी. एन. रोड, फोर्ट, मुंबई 400001 से प्रकाशित और उनके द्वारा (1) टाइम्स ऑफ इंडिया सबर्बन प्रेस, आकुर्ली रोड, निकट वेस्टर्न एक्सप्रेस हाइवे, कांदिवली (पू.) मुंबई 400101 एवं (2) टाइम्स ऑफ इंडिया प्रिंट सिटी, प्लॉट नं. 4, टी.टी.सी. इंडस्ट्रियल एरिया, ठाणे बेलापुर रोड, ऐरोली, नवी मुंबई-400708. फोन नं. (022) 2760 9999 ; फैक्सः(022) 2760 5275। फोन मुंबईः (022) 66353535, 22733535 रेस्पांसः (022) 66353636, 22733636 फैक्सः (022) 22731889, 22731144, कांदिवली (022) 28872324 से मुद्रित। **स्थानीय संपादक (मुंबई) : सुंदर चंद ठाकुर** (पी. आर. बी. अधिनियम के अंतर्गत समाचारों के चयन के लिए उत्तरदायी) सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। सड़क व रेल परिवहन सेवा शुल्कः मुंबई, ठाणे व रायगड जिलों के बाहर 1.00 रुपया। विमान सेवा शुल्कः रायपुर, नागपुर, गोवा एवं वाया 2.00 रुपये, इंदौर, चेन्नै एवं वाया 3.00 रुपये, अहमदाबाद, बेंगलुरु, कोचीन, कोयम्बतूर, एरनाकुलम, हैदराबाद, कोझीकोड, मंगलूर, त्रिवेंद्रम, उदयपुर, वाइजग एवं वाया 4.00 रुपये, दिल्ली, कोलकाता, एवं वाया 5.00 रुपये।

जेएनयू छात्र संघ चुनाव

जवाहर लाल नेहरू यूनिवर्सिटी छात्र संघ चुनावों में वामपंथी गठबंधन ने चारों सीटें जीतकर क्लीन स्वीप किया है। इसके साथ एक रिकार्ड भी बना है। छात्र संघ के सैंट्रल पैनल पर तीन लड़कियों का कब्जा हुआ है। सैंट्रल पैनल के चार में से तीन पदों पर छात्राओं ने जीत हासिल की है। चुनावों में लेफ्ट छात्र दल गठबंधन बनाकर मैदान में था जिसके तहत आईसा, एसएफआई, डीएसएफ ने महागठबंधन बनाया था। आईसा की अदिति मिश्रा ने अध्यक्ष पद पर, एसएफआई की गोपिका ने उपाध्यक्ष पद पर, डीएसएफ से सुनील ने महासचिव पद पर और आईसा से दानिश अली संयुक्त सचिव पद पर चुनाव जीते हैं। इन चुनावों में अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद और एनएसयूआई को करारी हार का सामना करना पड़ा है। जेएनयू के चुनाव देशभर में चर्चा का विषय रहते हैं। पूरे देश में जब वामपंथी विचारधारा सिमट कर रह गई है लेकिन जेएनयू का राजनीतिक माहौल एक बार फिर लाल रंग में रंग गया है। चुनाव परिणामों से साफ हो गया है कि जेएनयू परिसर में लेफ्ट का दबदबा सिर्फ इतिहास नहीं है बल्कि उसकी मौजूदगी अभी भी मजबूत है। जेएनयू की अकादमिक और राजनीतिक चेतना की कहानी में सबसे बड़ा प्रतीक यह है कि यूनिवर्सिटी की राजनीति सिर्फ वोट तक सीमित नहीं यह हर बहस में और हर उस छात्र में जीवित है जो सवाल पूछने की हिम्मत करता है। यह भी महत्वपूर्ण है कि जेएनयू में चुनाव हमेशा मुद्दा आधारित राजनीति पर केन्द्रित रहे न कि राष्ट्रीय पार्टियों की छवि पर। 1969 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने जेएनयू की स्थापना इस विचार के साथ करवाई थी कि भारत में ऐसी यूनिवर्सिटी बनाई जाए जहां रिसर्च, क्रिटिकल थिंकिंग, सामाजिक न्याय और प्रगतिशील लोकतांत्रिक बहस को जगह मिले।

इंदिरा गांधी ने विश्वविद्यालय का नाम जवाहर लाल नेहरू के नाम पर रखा लेकिन आज तक वहां कांग्रेस के छात्र संगठन एनएसयूआई सिर्फ एक बार ही अध्यक्ष पद जीत पाई। इसमें कोई संदेह नहीं कि जेएनयू में लेफ्ट के बाद भाजपा समर्थित एबीवीपी तीसरे विकल्प के रूप में संघर्ष करती रही और उसने अपनी जगह भी बनाई। 2014 के बाद राष्ट्रीय राजनीति में बढ़ते ध्रुवीकरण का असर जेएनयू परिसर पर भी पड़ा और एबीवीपी ने अपना प्रभाव बढ़ाया। विद्यार्थी परिषद ने 26 काउंसलर सीटों में से कई सीटों पर शानदार जीत हासिल की और कई संकायों में क्लीन स्वीप भी किया। पिछले वर्ष विद्यार्थी परिषद ने जेएनयू छात्र संघ के सैंट्रल पैनल में संयुक्त संचिव का पद जीतकर वापसी की थी। 2015 में एबीवीपी ने आखिरी बार यह पद जीता था। वामपंथी गठबंधन ने संविधान बचाओ, लोकतंत्र बचाओ के नारों पर चुनाव लड़ा, जबकि एबीवीपी ने राष्ट्रवाद, विकास और कैंपस में अनुशासन पर जोर दिया। अन्य मुद्दों में आम बजट में बढ़ौतरी, लाइब्रेरी में विस्तार और राजनीतिक स्वतंत्रता आदि शामिल हैं। यह वास्तविकता है कि इस संस्थान के छात्रों ने बहस और क्रांतिकारी सोच के जरिए जेएनयू का नाम दुनियाभर में किया है। लेफ्ट संगठनों की कैंपस में गहरी जमीनी पकड़ रही और छात्र हितों के लिए आंदोलनकारी उपस्थिति ने लेफ्ट का प्रभाव बनाए रखा। जेएनयू कई मामलों में विवादित भी रहा। वर्ष 2015 में तत्कालीन जेएनयू छात्र संघ अध्यक्ष कन्हैया कुमार पर आतंकवादी अफजल गुरु की बरसी आयोजित करने का आरोप लगा। कन्हैया कुमार और उसकी साथी शहला राशिद पर देशद्रोह का मुकद्दमा दर्ज किया गया। जेएनयू के छात्र नेता उमर खालिद पर भी विवादित नारे लगाने के आरोप लगे। उमर खालिद पर 2020 के दिल्ली दंगे भड़काने का भी मुकद्दमा चल रहा है और वह पिछले 5 साल से जेल में बंद है। भारत तेरे टुकड़े होंगे लेके रहेंगे आजादी जैसे नारों के लिए भी जेएनयू विवादित रहा। जेएनयू छात्र संघ चुनावों का एक और आकर्षण पूरे देश में सबसे सस्ती शिक्षा जेएनयू में ही उपलब्ध है।

देशभर के छात्र-छात्राओं का जेएनयू में पढ़ने का सपना होता है। जेएनयू में उनको पढ़ाई के साथ-साथ विचारधाराओं को समझना और उनको अपनाकर राजनीति करने का भी मौका मिलता है। इसलिए जेएनयू का चुनाव देशभर में चर्चा का विषय रहता है। जेएनयू छात्र संघ चुनाव के देशभर में चर्चा में रहने का एक और प्रमुख कारण यह है कि जेएनयू को वामपंथ का गढ़ माना जाता है और वामपंथी विचारधारा अब गिने चुने राज्यों में ही है। इसके अलावा जेएनयू इस विचारधारा के प्रचार प्रसार का मुख्य अड्डा है। जेएनयू छात्र संघ चुनाव में प्रचार का तारीका भी अलग ही होता है। सभी वामपंथी छात्र संगठन ढपली की थाप पर गाते-बजाते हुए चुनाव प्रचार करते हैं।

देशभर के छात्र-छात्राओं का जेएनयू में पढ़ने का सपना होता है। जेएनयू में उनको पढ़ाई के साथ-साथ विचारधाराओं को समझना और उनको अपनाकर राजनीति करने का भी मौका मिलता है। इसलिए जेएनयू का चुनाव देशभर में चर्चा का विषय रहता है। जेएनयू छात्र संघ चुनाव के देशभर में चर्चा में रहने का एक और प्रमुख कारण यह है कि जेएनयू को वामपंथ का गढ़ माना जाता है और वामपंथी विचारधारा अब गिने चुने राज्यों में ही है। इसके अलावा जेएनयू इस विचारधारा के प्रचार प्रसार का मुख्य अड्डा है। जेएनयू छात्र संघ चुनाव में प्रचार का तारीका भी अलग ही होता है। सभी वामपंथी छात्र संगठन ढपली की थाप पर गाते-बजाते हुए चुनाव प्रचार करते हैं। यह भी लोगों के आकर्षण का केंद्र रहता है। प्रेसीडेंशियल डिबेट होती है जिसमें अमेरिकी राष्ट्रपति चुनावों की तरह उम्मीदवार छात्रों के आगे अपना विजन रखते हैं। इस बार का चुनाव भी वामपंथी और दक्षिणपंथी विचारधारा पर केन्द्रित रहा। खास बात यह है कि छात्र संघ चुनावों का संचालन छात्र ही करते हैं। विचारधारा की लड़ाई में वामपंथ आगे रहा। इतिहास को देखें तो जेएनयू छात्र संघ से बड़े-बड़े राष्ट्रीय नेता निकले हैं। इनमें से प्रमुख रूप से सीताराम येचुरी, प्रकाश करात, डी. राजा, एनी राजा, योगेन्द्र यादव, देवी प्रसाद त्रिपाठी और कन्हैया कुमार के नाम शामिल हैं। वर्ष 2019 में सीपीआई से और पिछले साल कांग्रेस से कन्हैया कुमार ने लोकसभा चुनाव भी लड़ा है, लेकिन जीत नहीं मिली। इनके अलावा विदेश मंत्री एस. जयशंकर, वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण और सुब्रह्मण्यम स्वामी भी जेएनयू के ही छात्र रहे हैं। हालांकि, इन लोगों ने छात्र संघ चुनाव में भाग नहीं लिया।

एक नई दिशा में...

गीता पाढा

"चलो इस बार राष्ट्रीय शिक्षा दिवस को
एक नए अंदाज में मनाते हैं,
अक्षर ज्ञान के साथ-साथ कौशल
प्रशिक्षण में भी उन्नति लाते हैं,,
महिलाओं की साक्षरता दर की ओर भी एक बेहतर कदम बढ़ाते हैं,
और समाज को एक नई दिशा में ले जाते हैं...।।"

राकेश कपूर
संसद से सड़क तक

चुनाव 'सुधारों' से चुनावी 'रेवड़ियों' तक

भारत के चुनाव आयोग की विश्वसनीयता में जिस प्रकार का क्षरण हो रहा है वह इस देश के लोकतन्त्र के लिए अति चिन्ता का विषय है, क्योंकि पूरे विश्व के लोकतान्त्रिक देशों में हमारे चुनाव आयोग की प्रतिष्ठा किसी भी सन्देह से ऊपर मानी जाती रही है।

भारत की चुनाव प्रणाली का अध्यन करने दुनिया के लोकतान्त्रिक देशों से समय-समय पर सरकारी प्रतिनिधिमंडल भी आते रहे हैं। इसकी कोई एक वजह नहीं है बल्कि कई वजहें हैं जिनमें सबसे बड़ी वजह यह है कि चुनाव आयोग को भारतीय संविधान में स्वतन्त्र व स्वायत्त संस्थान का दर्जा दिया गया है। हमारे संविधान निर्माताओं ने चुनाव प्रणाली को पूरी तरह शुद्ध व पवित्र रखने की गरज से ही यह व्यवस्था की थी और चुनाव आयोग को राजनीतिक दलों के मामलों में कुछ न्यायायिक अधिकार भी दिये थे जिससे यह संस्था प्रत्येक राजनीतिक दल को संविधान के दायरे में काम करने के लिए विवश कर सकें। चुनाव आयोग को ही इस बात के लिए अधिकृत किया गया कि वह ऐसी चुनाव प्रणाली विकसित करे जो पूरी तरह पारदर्शी व पवित्र हो, परन्तु सत्तर का दशक आते-आते चुनाव प्रणाली में बहुत सी खामियां नजर आने लगीं जिसकी वजह से चुनाव सुधारों की मांग राजनीतिक क्षेत्रों से उठने लगी। इस मांग को प्रभावी तरीके से लोकनायक जय प्रकाश नारायण ने उस दौर में उठाया और अपने जन आन्दोलन का इसे भी एक मुद्दा बनाया। 1973 में गुजरात से शुरू हुआ छात्र आन्दोलन जब 1974 में बिहार पहुंचा तो यह नागरिक आन्दोलन में तब्दील हो गया और लोगों की प्रार्थना पर इसे नेतृत्व देने के लिए स्व. जय प्रकाश नारायण उर्फ जेपी आगे आये। जेपी के नेतृत्व में जब यह आन्दोलन चलने लगा तो इसे समग्र क्रन्ति का नाम दिया गया और जेपी ने मांग की कि सार्वजनिक जीवन से भ्रष्टाचार समाप्त करने के लिए सर्वप्रथम चुनाव प्रणाली में ही आधारभूत परिवर्तन किये जाएं। जेपी के आन्दोलन के साथ धीरे-धीरे देश के सभी मुख्य धारा के विपक्षी दल जुड़ते चले गये जिनमें भारतीय जनसंघ (भाजपा) भी शामिल थी। जनसंघ के तत्कालीन नेताओं ने जेपी आन्दोलन में शामिल होते ही चुनाव प्रणाली में सुधार के प्रति अपनी प्रतिबद्धता भी जताई और स्वीकार किया कि भ्रष्टाचार की जड़ महंगी चुनाव प्रणाली ही है। इस दौरान एक घटना यह हुई दिल्ली सदर सीट का लोकसभा चुनाव अवैध घोषित हो गया। 1971 के लोकसभा चुनावों में यह सीट कांग्रेस पार्टी के श्री अमरनाथ चावला ने जनसंघ के कंवर लाल गुप्ता को हरा कर जीती थी। स्व. गुप्ता ने श्री चावला के चुनाव को दिल्ली उच्च न्यायालय में चुनौती इस आधार पर दी कि उन्होंने अपने चुनाव में चुनाव आयोग द्वारा निर्धारित खर्च राशि से अधिक धन खर्च किया है।

न्यायालय में यह बात साबित हो गई और श्री चावला का चुनाव अवैध घोषित हो गया। उस समय देश की प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी थी। इस फैसले के बाद श्रीमती गांधी ने भारत के जन प्रतिनिधित्व अधिनियम में जो संशोधन किया उससे चुनावों के खर्चीले होने से नहीं रोका जा सकता था। इन्दिरा सरकार ने प्रावधान किया कि चुनावों में किसी भी प्रत्याशी के चुनाव पर उसका कोई मित्र या शुभ चिन्तक अथवा संस्था (राजनीतिक दल) कितना ही खर्च कर सकते हैं। ऐसा चुनावी खर्च प्रत्याशी के चुनाव खर्चे में शामिल नहीं किया जायेगा। इसके बाद राजनीतिक दलों को चुनावों में कितना ही खर्च करने का लाइसेंस मिल गया।

जेपी ने अपने आन्दोलन में जब महंगे होते चुनावों को एक मुद्दा बनाया तो अमरनाथ चावला बनाम कंवर लाल गुप्ता का मुकद्दमा उनके सामने था। जेपी चाहते थे कि भारत में चुनाव सरकारी खर्चे से कराये जाने चाहिए जिससे चुनाव जीतने के लिए राजनीतिक दलों या प्रत्याशियों को पूंजीपतियों पर निर्भर न रहना पड़े। इसके लिए उन्होंने अपने आन्दोलन के दौरान ही बम्बई उच्च न्यायालय के रिटायर मुख्य न्यायाधीश श्री वी.एम. तारकुंडे के नेतृत्व में एक समिति बनाई और उससे चुनावी खर्चों को सीमित रखने के उपाय खोजने के लिए कहा। तारकुंडे समिति ने अपनी रिपोर्ट जेपी को सौंप दी, जिसमें सुझाव दिया गया था कि सरकारी खर्च से चुनाव कराने के लिए केन्द्रीय स्तर पर एक चुनाव कोष स्थापित किया जाना चाहिए और प्रत्याशियों को प्रचार करने के लिए सरकारी साधन आदि सुलभ कराये जाने चाहिए। ऐसा करने से चुनाव अधिक पारदर्शी और सस्ते होंगे और चुनावों में कोई भी सुपात्र नागरिक खड़ा हो सकेगा, परन्तु भारत में बहु दलीय व्यवस्था होने की वजह से चुनावों में प्रत्याशियों की संख्या बढ़ भी सकती है खास तौर पर निर्दलीय प्रत्याशियों की संख्या को किस प्रकार रोका जा सकता है। इसके साथ ही जेपी ने अपने समग्र क्रन्ति आन्दोलन में चुने गये जनप्रतिनिधियों को वापस बुलाने का अधिकार भी मतदाताओं को देने का विचार रखा था। जेपी का मानना था कि एक बार पांच साल के लिए चुने जाने के बाद जनप्रतिनिधि जनता के प्रति अपने उत्तर दायित्व से विमुख हो जाते हैं अत: ऐसे प्रतिनिधियों को वापस बुलाने का अधिकार भी जनता के पास होना चाहिए। तारकुंडे समिति ने इस सुझाव की ताईद तो नहीं की मगर जर्मनी की भांति आनुपातिक प्रतिनिधित्व देने की बात कही। इस व्यवस्था में विभिन्न राजनीतिक दलों को चुनाव में मिले वोट प्रतिशत के अनुपात में अपने प्रत्याशी विधानसभाओं व संसद में भेजने का अधिकार मिलता। आन्दोलन के जारी रहते ही 12 जून, 1975 का दिन आ गया और इलाहाबाद उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश स्व. जगमोहन लाल सिन्हा ने उत्तर प्रदेश की रायबरेली सीट से प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का चुनाव अवैध घोषित कर दिया। इसके बाद 25 जून, 1975 को पूरे देश में इमरजेंसी लगा दी गई। जब 21 महीने बाद इमरजेंसी उठी तो नये लोकसभा चुनावों में बाजी पलट चुकी थी और विपक्षी नेताओं के हाथ में देश की सत्ता आ चुकी थी जिसके मुखिया स्व मोरारजी देसाई थे। मोरारजी देसाई के पास जब तारकुंडे समिति की रिपोर्ट पहुंची तो उन्होंने पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त श्री पी.एल. शकधर की अध्यक्षता में एक चुनाव सुधार आयोग का गठन कर दिया, मगर मोरारजी देसाई खुद ही हुकूमत में पूरे दो साल नहीं काट सके और उनकी सरकार गिर गई और स्व. चौधरी चरण सिंह प्रधानमन्त्री बन गये। उन्हें संसद में अपना बहुमत साबित करने का अवसर मिल पाता इससे पहले ही उनकी सरकार अल्पमत में आ गई और देश मे 1980 में पुन: लोकसभा चुनाव हुए जिसमें बहुत गाजे-बाजे के साथ इंदिरा गांधी पुन: सत्ता में आईं, इसलिए शकधर आयोग रिपोर्ट अप्रासंगिक हो गई, मगर बाद में कांग्रेस राज में चुनाव सुधारों के लिए गोस्वामी समिति बनी जिसने आर्थिक पक्ष को छुए बगैर कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिये जिन्हें लागू भी किया गया, लेकिन वर्तमान में चुनाव आयोग की ही विश्वसनीयता सन्देह के घेरे में आ गई है और बात चुनाव सुधारों की जगह मतदाता सूची के शुद्धिकरण की हो रही है। इसके मायने ये भी निकाले जा सकते हैं कि स्वयं मतदाता ही अब चुनाव आयोग के निशाने पर हैं। इसके साथ जिस प्रकार चुनाव आने पर सरकारें मतदाताओं को सौगात में सुविधाओं की रेवड़ियां बांट रही हैं उससे पूरी चुनाव प्रणाली ही बुरी तरह दूषित होती जा रही है। चुनाव आयोग इस मामले में मूक दर्शक बना रहता है, क्योंकि सरकार चाहें किसी भी पार्टी की हो वह चुनाव घोषित होने से कुछ समय पहले ही ऐसी रेवड़ी बांट स्कीमें लेकर आती है। मतदाताओं को ललचाने का यह नया तरीका निकला है जिसकी काट राजनीतिक दल ही खोज सकते हैं क्योंकि रेवड़ी बांटने की दौड़ में इन राजनीतिक दलों में ही प्रतियोगिता हो रही है। मगर अफसोस यह है कि हमने सफर चुनाव सुधारों से किया था और हम चुनावी रेवड़ियों पर पहुंच गये। ऐसा करने से हमारा लोकतन्त्र मजबूत नहीं हो रहा है, क्योंकि हम मतदाता को याचक समझ रहे हैं, जबकि वह लोकतन्त्र का असली मालिक है।

पश्चिम बंगाल और असम में भाजपा के बीच टकराव

ताक-झांक
आर.आर. जैरथ

पश्चिम बंगाल और असम में भाजपा के बीच टकराव चल रहा है। और इस तूफ़ान के केंद्र में असम में पार्टी के मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा सरमा हैं। सरमा अपने राज्य में भावनाओं का ध्रुवीकरण करने के लिए हमेशा किसी न किसी मुद्दे की तलाश में रहते हैं।

इस बार, उन्होंने बंगाली राष्ट्रवाद पर रवींद्रनाथ टैगोर के प्रसिद्ध गीत, आमार सोनार बांग्ला को चुना है। सरमा ने असम के करीमगंज में एक सभा में यह गीत गाने के लिए एक स्थानीय कांग्रेस नेता के खिलाफ राजद्रोह का मामला दर्ज कराया है। उनका तर्क है: यह एक राष्ट्र-विरोधी गीत है क्योंकि इसे बांग्लादेश ने अपने राष्ट्रगान के रूप में अपनाया था। हालांकि यह मुद्दा असम में गूंज सकता है, लेकिन सरमा के इस कदम ने पड़ोसी पश्चिम बंगाल में आग लगा दी है। बंगालियों के लिए, 1905 में अंग्रेजों द्वारा बंगाल के विभाजन के समय लिखा गया आमार सोनार बांग्ला, बंगाली राष्ट्रवाद को परिभाषित करता है। यह बांग्लादेश का राष्ट्रगान हो सकता है, लेकिन वे इसे क्षेत्रीय गौरव का गान मानते हैं। पश्चिम बंगाल में भाजपा को जो बात सबसे ज़्यादा परेशान कर रही है, वह यह है कि सरमा के इस कदम से वह मतदाता वर्ग ख़ास तौर पर नाराज़ है जिसे पार्टी लुभाने की कोशिश कर रही है-बंगाली मध्यम वर्ग। बंगाली भद्रलोक, जैसा कि इस वर्ग को कहा जाता है, टैगोर को एक सांस्कृतिक प्रतीक मानते हैं और उन्होंने सोशल मीडिया पर भाजपा द्वारा इस गीत को "अब्दुल चाचा का गीत" कहकर उपहास करने वाले पोस्ट पर कड़ी आपत्ति जताई है। विडंबना यह है कि पीएम नरेंद्र मोदी ने 2014 में कोलकाता में अपनी पहली रैली में इस गीत की कुछ पंक्तियां पढ़ी थीं। यह क्लिप सोशल मीडिया पर वायरल हो गई है, जिससे असम और पश्चिम बंगाल, दोनों जगह भाजपा नेता सकते में हैं।

ज़ोहरान ममदानी के किस्से सोशल मीडिया पर वायरल

अब जबकि भारतीय-अमेरिकी ज़ोहरान ममदानी सभी बाधाओं को पार करते हुए न्यूयॉर्क शहर के दक्षिण एशियाई मूल के पहले मुस्लिम मेयर बन गए हैं, उनके और उनके परिवार से जुड़े कुछ दिलचस्प किस्से सोशल मीडिया पर वायरल हो रहे हैं।

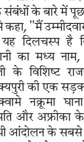

एक ख़ास तौर पर प्यारी कहानी उनकी फ़िल्म निर्माता माँ मीरा नायर के इर्द-गिर्द घूमती है। यह तब हुआ जब वह अपनी माँ को अपने साथ कान्स ले गईं जहाँ उनकी फ़िल्म सलाम बॉम्बे की स्क्रीनिंग हो रही थी। वहाँ मीडिया ने साड़ी पहने उस ख़ास महिला से संपर्क किया और उनसे पूछा कि फ़िल्म में उनकी क्या भूमिका है। नायर की माँ ने मज़ाकिया अंदाज़ में जवाब दिया, "मैं निर्देशक की निर्माता हूँ।" नायर ने न्यूयॉर्क में अपने बेटे ज़ोहरान के मेयर पद के चुनाव अभियान के दौरान थोड़े बदलाव के साथ अपनी माँ की यही बात दोहराई। जब मीडिया ने उनसे डेमोक्रेटिक उम्मीदवार के साथ उनके संबंधों के बारे में पूछा, तो उन्होंने गर्व से कहा, "मैं उम्मीदवार की निर्माता हूं!" यह दिलचस्प है कि ज़ोहरान ममदानी का मध्य नाम, क्वामे, नई दिल्ली के विशिष्ट राजनयिक क्षेत्र चाणक्यपुरी की एक सड़क पर अंकित है। क्वामे नक्रूमा घाना के पहले राष्ट्रपति और अफ्रीका के उपनिवेश-विरोधी आंदोलन के सबसे बड़े नेताओं में से एक थे। वे भारत के भी बहुत अच्छे मित्र थे। इसलिए, 1983 में, जब नई दिल्ली में गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन हुआ, तो इंदिरा गांधी सरकार ने अफ्रीका के इस महान सपूत को सम्मानित करने के लिए चाणक्यपुरी में एक सड़क का नाम क्वामे नक्रूमा मार्ग रखने का फैसला किया।

ममदानी के पिता ने भी घाना के नेता की स्मृति में बेटे ज़ोहरान के नाम के साथ क्वामे जोड़ दिया। युगांडा के एक भारतीय होने के नाते, वरिष्ठ ममदानी अपने बेटे के लिए एक अफ्रीकी संबंध चाहते थे।

मोदी के पटना में हाल ही में हुए रोड शो के दौरान कम से कम दो बार बत्ती गुल

भाजपा के लिए कुछ शर्मनाक पल आए जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के पटना में हाल ही में हुए रोड शो के दौरान कम से कम दो बार बत्ती गुल हो गई। यह समस्या तब हुई जब प्रधानमंत्री अपना रोड शो समाप्त कर रहे थे। सौभाग्य से, जब बिजली गुल हुई तब तक वे उस बिंदु पर नहीं पहुँच पाए थे। उनकी सुरक्षा और सरकारी प्रशासन

की मशीनरी बिजली की गति से समस्याओं को ठीक करने के लिए आगे आई और रोड शो को सुचारू रूप से समाप्त करने में कामयाब रही।

हालाँकि, बिजली गुल होने से विपक्ष को भाजपा के चुनावी नारे, जिसमें राजद के चुनाव चिन्ह लालटेन का मज़ाक उड़ाया गया था, का मज़ाक उड़ाने का मौका मिल गया। भाजपा कहती रही है कि सुनिश्चित बिजली आपूर्ति के कारण बिहार को अब लालटेन की ज़रूरत नहीं है।

नायब सिंह सैनी
मुख्यमंत्री, हरियाण

वन्दे मातरम् : राष्ट्रभाव के 150 वर्ष

भारत की राष्ट्रीय चेतना को यदि दो शब्दों में समेटा जाए, तो "वन्दे मातरम्" जितना व्यापक, सशक्त और भावनात्मक संधारक दूसरा कोई शब्द नहीं है। 1875 में बंगाल के महान कवि बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय जी द्वारा रचित यह गीत आज 150 वर्षों के गौरवपूर्ण सफ़र को पार कर नए भारत की ऊर्जा, विश्वास, "राष्ट्र प्रथम" की भावना और लोकतांत्रिक भारत की आत्मा को पुन: पुष्ट कर रहा है।

रचना से राष्ट्रगान तक – 150 वर्षों का कालक्रम : 1875 बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय ने "वन्दे मातरम्" की रचना की। 1882 'आनंदमठ' उपन्यास में प्रकाशित। 1896 कांग्रेस अधिवेशन (कलकत्ता) में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने पहली बार सार्वजनिक गायन किया था। 1905 बंग-भंग विरोध आन्दोलन में वन्दे मातरम् ने क्रांति की ज्वाला जगाई। 1937 प्रथम दो अंतरों को आधिकारिक स्वीकृति दी। 1950 भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी ने राष्ट्र गीत का दर्जा प्रदान किया। "वन्दे मातरम्" में न भू-भाग मात्र है, न सीमाएं मात्र हैं। इसमें वह अद्भुत मातृत्व है, जो भारत को भू-राजनीति से परे आध्यात्मिक शक्ति बनाता है।

विवाद

- 1923 में काकीनाडा में हुए कांग्रेस अधिवेशन में पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर को 'वंदे मातरम्' गाने के लिए आमंत्रित किया गया था, लेकिन उस वर्ष कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना मोहम्मद अली ने धार्मिक आधार पर आपत्ति जताई और कहा कि इस्लाम में संगीत वर्जित है।
- मुस्लिम लीग के नेताओं को खुश करने के लिए, 1937 में कांग्रेस कार्यसमिति ने राष्ट्रीय गीत को औपचारिक रूप से बदलने का निर्णय लिया।
- बाद में भी और कई मौकों पर कांग्रेस और उसके नेताओं ने विभिन्न मंचों पर 'वंदे मातरम्' के प्रति अपनी असहमति दिखाई। एआईएमआईएम नेता श्री अकबरुद्दीन ओवैसी ने 2017 में मांग की थी कि स्कूलों में छात्रों के लिए 'वंदे मातरम्' गाना अनिवार्य करने वाले सर्कुलर को रद्द किया जाए। तेलंगाना सरकार ने अब कहा है कि स्कूलों में 'वंदे मातरम्' गाना अनिवार्य नहीं किया जाएगा।
- 2019 में, मध्य प्रदेश की कांग्रेस सरकार ने सचिवालय में 'वंदे मातरम्' गाने पर प्रतिबंध लगा दिया था।

स्वतंत्रता संग्राम में "वन्दे मातरम्" की भूमिका : गुलामी के अंधेरे में यह गीत सैनिकों का कमाण्ड था, क्रांतिकारियों की प्रार्थना था, सार्वजनिक नेतृत्व का डिजिटल सिग्नेचर था और आम भारतीयों का राष्ट्रभक्ति का आतंरिक घोष था।

लाठीचार्ज की मार झेलते हुए सड़कों पर जनता के होंठों पर यही था। जेल की कोठरियों में भगत सिंह–बटुकेश्वर दत्त जैसे क्रांतिकारी यही गुनगुनाते थे। असहयोग, स्वदेशी, सत्याग्रह सबके केंद्र में मातृभूमि स्तवन का यही स्वर था। अंग्रेजी हुकूमत द्वारा उस समय "वन्दे मातरम्" बोलना भी देशद्रोह घोषित किया जाता था। परंतु क़ानून की बंदिशों पर भी यह नारा रुका नहीं। इसका इतिहास में बताता है कि एक नारा–भारत को साम्राज्यवादी सत्ता से जीत सकता है।

राजनीतिक–लोकतांत्रिक धारा में वन्दे मातरम् की भूमिका: माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के कुशल नेतृत्व में आज भारत विश्व की सबसे सशक्त, उच्चतम स्तर वाली, जीवित लोकतंत्रों में अग्रणी है। लोकतंत्र केवल वोटिंग से नहीं चलता, लोकतंत्र आत्मगौरव, आत्मविश्वास, सांस्कृतिक एकता और राष्ट्रभाव से चलता है। "वन्दे मातरम्" भारतीय लोकतंत्र को यही चारों स्तम्भ प्रदान करता है। यह राष्ट्रहित को सर्वप्रथम रखता है। यह राजनीतिक संघर्ष की मर्यादा को "मातृभक्ति के अधीन" रखता है। यह धार्मिक विविधता के ऊपर राष्ट्र-विविधता और सांस्कृतिक एकत्व को स्थापित करता है। यह भारत की भौगोलिक भूमि को "देवी" स्वरूप में प्रतिष्ठित करता है। इसलिए, यह गीत मात्र 150 वर्ष पुरानी रचना नहीं है। यह हमारी 5000 वर्ष पुरानी भारतीय सभ्यता की अग्नि लौ का आधुनिक रूप है।

वैश्विक भारत में वन्दे मातरम् : आज भारत 21वीं सदी में नेतृत्व पर खड़ा राष्ट्र है। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के कुशल मार्गदर्शन में प्रौद्योगिकी, एआई, रक्षा, अंतरिक्ष, भू-राजनीतिक साझेदारी, वित्तीय कूटनीति, डिजिटल पब्लिक इंफ्रास्ट्रक्चर जैसे हर क्षेत्र में भारत अपने मॉडल से दुनिया के सामने एक वैकल्पिक, स्थायी, सशक्त समाधान प्रस्तुत कर रहा है।

इस भारत की जड़ों की ऊर्जा "प्राचीन राष्ट्रीय संस्कृति" से आती है। यही ऊर्जा "वन्दे मातरम्" में है। आने वाले 25 वर्षों में, "अमृतकाल" में जब भारत विश्व-शक्ति बनेगा, उस यात्रा के आध्यात्मिक ईंधन के रूप में "वन्दे मातरम्" रहेगा।

नरेन्द्र मोदी और वन्दे मातरम् की राष्ट्रीय पुनर्स्थापना : हमारे माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने भारतीय मानस में राष्ट्रगीत को "शब्द नहीं, संकल्प" के रूप में पुनर्स्थापित किया है। अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर भारत की संस्कृति को 'नैरेटिव लीडरशिप' के साथ स्थापित कर, आज़ादी के पर्वों – विशेषकर 75 वर्ष को जन-आन्दोलन में बदलकर, देश के युवाओं में "राष्ट्र प्रथम" की प्रेरणा देकर, मोदी युग ने "वन्दे मातरम्" को फिर से एक "लाइव वैल्यू सिस्टम" में परिवर्तित किया है। आज वंदे मातरम सिर्फ गीत नहीं, नागरिक चरित्र निर्माण का राष्ट्रीय सूत्र बन गया है। 150 वर्षों का यह गौरव सिर्फ इतिहास का अध्याय नहीं है। यह भविष्य की दिशा है। स्वतंत्रता से डिजिटल क्रांति तक भारत की हर लड़ाई का सार यही था और आगे भी यही रहेगा। जब बच्चा पहली बार "वन्दे मातरम्" बोलता है,तो वह भारतीय संविधान की आत्मा में पहला कदम रखता है। 1875 में बंगाल के तत्कालीन राजनीतिक व सामाजिक परिदृश्य में उत्पन्न यह गीत धीरे-धीरे भारत की आत्मा की आवाज़ बन गया। 1882 में 'आनंदमठ' उपन्यास के माध्यम से यह गीत जन-चेतना के केन्द्रीय भाव में स्थापित हुआ। 1896 में कलकत्ता में हुए कांग्रेस अधिवेशन में गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर द्वारा पहली बार सार्वजनिक गायन किया गया। फिर 1905 का बंग-भंग आंदोलन आया, जिसने इस गीत को राष्ट्रीय स्वाभिमान का जीवित प्रतीक बना दिया। इस कालखंड में देश की हर गली व सड़क से लेकर क्रांतिकारियों की गुप्त सभाओं तक, हर भारतीय के गले में एक ही स्वर गूंज रहा था – वंदे मातरम्। यही वह गीत था, जिसने मातृभूमि को देवी के स्वरूप में स्थापित किया और आज़ादी की लड़ाई को आध्यात्मिक, भावनात्मक व वैचारिक शक्ति प्रदान की। 1950 में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी ने राष्ट्र गीत का दर्जा प्रदान किया।

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के कुशल नेतृत्व में आज जब भारत आत्मनिर्भरता, तकनीकी नेतृत्व, अंतर्राष्ट्रीय आस्था, सांस्कृतिक पुनरुत्थान और वैश्विक शांति जैसे नए आयामों की ओर तेज गति से बढ़ रहा है। तब वंदे मातरम् की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। अमृतकाल का भारत केवल इतिहास की महिमा का पाठ नहीं पढ़ना चाहता, बल्कि आने वाले भविष्य के भारत को गढ़ना चाहता है। 'वंदे मातरम्' माँ भारती को प्रणाम करने का मंत्र है। यह गीत हमारे संविधान, हमारी संस्कृति, हमारी स्वतंत्रता, हमारी अस्मिता और हमारी साझा राष्ट्रीय चेतना का अमर गीत है। आज जब 150 वर्ष पूरे हो रहे हैं, हमें भारत की आने वाली पीढ़ियों को यह बताना चाहिए कि चाहे देश कितना भी आगे बढ़ जाए, चाहे तकनीक कितनी भी उन्नत हो जाए, चाहे वैश्वीकरण कितना भी व्यापक हो जाए, हमारी आत्मा, हमारी पहचान और हमारी राष्ट्रीय धुरी मातृभूमि ही रहेगी। भारत की माटी से बढ़कर कोई पूज्य नहीं है। वंदे मातरम्।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

https://t.me/AllNewsPapersPaid

प्रवाह

77 साल बेमिसाल
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 • आगरा

जिंदगी साइकिल चलाने जैसी है। अपना संतुलन बनाए रखने के लिए आपको चलते रहना होगा। -अल्बर्ट आइंस्टीन

एक और चेतावनी

हम उस दौर में हैं, जब ग्रीष्मकाल में तापमान के रोज नए रिकॉर्ड तोड़ने की खबरें आशंका नहीं, बल्कि सच्चाई को ही व्यक्त करती हैं, फिर भी इन्हें लेकर लोगों में किसी तरह की हलचल नहीं दिखती। बहरहाल, विश्व मौसम संगठन ने हाल ही में जो कहा, उसे हल्के में नहीं ले सकते। विश्व मौसम संगठन के अनुसार, 2025 की जनवरी से लेकर अगस्त के बीच सतह का जो तापमान रहा है, उसे देखते हुए यह माना जा सकता है कि यह वर्ष अब तक के तीन सर्वाधिक गर्म वर्षों में शामिल होने जा रहा है। यह भी पता चला है कि पिछले 11 वर्ष, अब तक के 176 वर्ष के इतिहास में सबसे गर्म वर्ष रहे हैं। गौरतलब है कि पिछला साल पूर्व औद्योगिक स्तर से 1.5 डिग्री से ऊपर तापमान की सीमा को पार करने वाला पहला वर्ष बन गया। यह वही सीमा है, जिसे ऐतिहासिक पेरिस समझौते में सुरक्षित माना गया है। विश्व मौसम संगठन के ये तीखे आकलन ऐसे वक्त में सामने आए हैं, जब दुनिया को ग्लोबल वार्मिंग से छुटकारा दिलाने के लिए विभिन्न देश ब्राजील में कॉप-30 सम्मेलन में शिरकत करने जा रहे हैं, लेकिन दुनिया का सबसे बड़ा ग्रीनहाउस उत्सर्जक देश अमेरिका, ट्रंप प्रशासन के पेरिस समझौते से हटने के फैसले के बाद, इस सम्मेलन में भी संभवतः अनुपस्थित रहेगा। पिछले कॉप सम्मेलन सदस्य देशों के एकमत न हो पाने के चलते औपचारिकता बनकर रह गए, और इस बार भी कोई ठोस निर्णय होगा, इसकी उम्मीद कम ही है। दूसरी ओर, मौसम जिस गति से बदलाव दिखा रहा है, वैसा पहले कभी सोचा भी नहीं गया था। विश्व मौसम संगठन का यह कहना खतरे की तीव्रता को दर्शाता है कि 2025 में ऊष्मा-अवरोधक ग्रीनहाउस गैसों और महासागरीय ऊष्मा की सांद्रता पिछले वर्ष की तरह बढ़ती रहने की आशंका है। शीत ऋतु के बाद आर्कटिक सागर में बर्फ का विस्तार रिकॉर्ड स्तर पर सबसे कम रहा, और अंटार्कटिक सागर में बर्फ का विस्तार अब तक पूरे वर्ष औसत से काफी नीचे रहा। अल नीनो के कमजोर पड़ने के बावजूद तापमान में गिरावट नहीं हो रही, तो इसका मतलब यही है कि

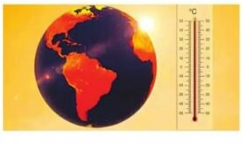

मानव-जनित ग्रीनहाउस गैसें अब वायुमंडल में इतनी अधिक हो चुकी हैं कि प्रकृति का कोई चक्र उन्हें रोक नहीं पा रहा। अच्छी बात यह है कि विज्ञान भी मानता है कि धरती के तापमान को सदी के अंत तक 1.5 डिग्री तक वापस लाना मुश्किल जरूर है, पर असंभव नहीं। लेकिन इसके लिए जरूरी है कि कड़े निर्णय लिए जाएं और सबसे महत्वपूर्ण लोग जागरूक हों।

लड़ाइयां ऐसे भी जीती जा सकती हैं

हैदराबाद स्थित बाल रोग विशेषज्ञ डॉ. शिवरंजनी संतोष द्वारा आठ साल की लंबी कानूनी लड़ाई के परिणामस्वरूप एफएसएसएआई ने अंततः यह ऐतिहासिक निर्देश दिया कि उन ऊर्जा पेय और अन्य पेय पदार्थों पर 'ओआरएस' शब्द का उपयोग प्रतिबंधित होगा, जो डब्ल्यूएचओ के मानकों को पूरा नहीं करते हैं।

सार्वजनिक स्वास्थ्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम के तहत, भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) ने 'ओआरएस' शब्द का उपयोग केवल उन उत्पादों तक सीमित कर दिया है, जो विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) द्वारा अनुमोदित फॉर्मूलेशन का पालन करते हैं।

हैदराबाद स्थित बाल रोग विशेषज्ञ डॉ. शिवरंजनी संतोष द्वारा आठ साल की लंबी कानूनी लड़ाई के परिणामस्वरूप एफएसएसएआई ने अंततः यह ऐतिहासिक निर्देश दिया है। इसमें ऊर्जा पेय और अन्य पेय पदार्थों पर 'ओआरएस' शब्द के उपयोग को प्रतिबंधित किया गया है, जो डब्ल्यूएचओ के मानकों को पूरा नहीं करते हैं। डॉ. शिवरंजनी संतोष का अथक अभियान लगभग एक दशक पहले शुरू हुआ था। उन्होंने 2022 में तेलंगाना उच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर कर खतरनाक रूप से उच्च शर्करा स्तर और अनुचित इलेक्ट्रोलाइट संतुलन के बावजूद, ओआरएस के रूप में बेचे जा रहे पेय पदार्थों की बिक्री को चुनौती दी थी। डब्ल्यूएचओ के दिशानिर्देशों के अनुसार, एक उचित ओआरएस घोल में प्रति लीटर 2.6 ग्राम सोडियम क्लोराइड, 1.5 ग्राम पोटेशियम क्लोराइड, 2.9 ग्राम सोडियम साइट्रेट और 13.5 ग्राम डेक्सट्रोज होना चाहिए। ओआरएस के रूप में बेचे जाने वाले कई उत्पादों में प्रति लीटर 120 ग्राम से अधिक चीनी होती थी और इलेक्ट्रोलाइट्स का स्तर खतरनाक रूप से कम था।

विनय झैलावत
पूर्व असिस्टेंट सालीसीटर जनरल एवं वरिष्ठ अधिवक्ता

खाद्य पदार्थों की गलत ब्रांडिंग और लेबलिंग जैसे मुद्दे तेजी से बढ़ रहे हैं, जिससे उपभोक्ता सुरक्षा, पारदर्शिता और खाद्य उत्पादों में विश्वास को लेकर चिंताएं बढ़ रही हैं। गलत ब्रांडिंग और लेबलिंग, दोनों ही न केवल उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य के लिए, बल्कि व्यवसायों की प्रतिष्ठा और खाद्य उद्योग की अखंडता के लिए भी गंभीर जोखिम पैदा करते हैं। खाद्य पदार्थों की गलत ब्रांडिंग तब होती है, जब किसी खाद्य उत्पाद के लेबल या पैकेजिंग पर गलत या भ्रामक जानकारी दी जाती है, जिससे उपभोक्ता धोखा खा सकते हैं। एफएसएसएआई और दुनिया भर की इसी तरह की नियामक संस्थाओं के अनुसार, खाद्य उत्पादों पर सच्ची और स्पष्ट लेबलिंग होनी चाहिए, जिसमें सामग्री, पोषण संबंधी जानकारी, एलर्जी कारक, समाप्ति तिथि और निर्माता का विवरण शामिल हो।

खाद्य पदार्थों पर गलत लेबलिंग के सामान्य उदाहरण कुछ इस प्रकार हैं- किसी खाद्य पदार्थ में सभी सामग्री की सूची न होना या उन्हें गलत तरीके से सूचीबद्ध करना, जैसे कि मूंगफली या ग्लूटेन जैसे सामान्य एलर्जेन को छोड़ देना। उत्पाद अपनी समाप्ति या उपयोग तिथि के बाद बेचे जा रहे हों, या गलत शेल्फ-लाइफ जानकारी के साथ बेचे जा रहे हों तथा गलत वजन या मात्रा दिखाई जाती है, जिसके कारण उपभोक्ताओं को भुगतान की गई राशि से कम सामान मिलता है। खाद्य पदार्थों की गलत ब्रांडिंग और लेबलिंग से जुड़ी सबसे बड़ी चिंता स्वास्थ्य संबंधी जोखिमों की आशंका को लेकर है। उदाहरण के लिए, एलर्जी से ग्रस्त उपभोक्ता अनजाने में ऐसी चीजें खा सकते हैं, जिससे गंभीर प्रतिक्रियाएं हो सकती हैं, जैसे मूंगफली या डेयरी उत्पाद। भ्रामक पोषण संबंधी दावों के कारण उपभोक्ता अस्वास्थ्यकर विकल्प चुन सकते हैं, जिससे मोटापा, हृदय रोग और मधुमेह जैसी बीमारियां हो सकती हैं।

भारत में खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 और खाद्य सुरक्षा एवं मानक विनिमय, खाद्य पदार्थों की गलत ब्रांडिंग और लेबलिंग को रोकने के लिए कड़े नियम निर्धारित करते हैं। एफएसएसएआई इन विनियमों के प्रवर्तन की निगरानी करता है और यह सुनिश्चित करता है कि खाद्य लेबल सुरक्षा, सटीकता और पारदर्शिता के विशिष्ट मानकों को पूरा करते हैं। खाद्य लेबल पर सामग्री, पोषण संबंधी तथ्य, एलर्जी कारक, निर्माता का विवरण और समाप्ति तिथि स्पष्ट रूप से लिखी होनी चाहिए। खाद्य उत्पाद के बारे में झूठे या भ्रामक दावे, जैसे कि निराधार स्वास्थ्य लाभ, सख्त वर्जित हैं। खाद्य उत्पादों पर सामान्य एलर्जेन के लिए चेतावनियां प्रदर्शित होनी चाहिए। गलत ब्रांडिंग या लेबलिंग का दोषी पाए जाने वाली कंपनियों पर जुर्माना, उत्पाद वापस मंगाना या कानूनी कार्रवाई हो सकती है। एफएसएसएआई को इन दंडों को लागू करने का अधिकार है।

खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 की धारा 52 विशेष रूप से गलत ब्रांड वाले खाद्य पदार्थों के विरुद्ध दंड का प्रावधान करती है, जिसमें कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति मानव उपभोग के लिए किसी भी गलत ब्रांड वाले खाद्य पदार्थ का निर्माण, भंडारण, विक्रय, वितरण या आयात करता है, तो उसे तीन लाख रुपये तक का जुर्माना देना होगा।

भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण ने मई माह में एक आधिकारिक परामर्श जारी कर स्पष्ट रूप से कहा है कि '100 प्रतिशत' के दावे खाद्य सुरक्षा और मानक अधिनियम, 2006 या खाद्य सुरक्षा और मानक (विज्ञापन और दावे) विनियम, 2018 के तहत परिभाषित या मान्यता प्राप्त नहीं हैं। नतीजतन, ऐसी शब्दावली का उपयोग 2018 के प्रावधान के नियम 4 के तहत भ्रामक दावे के बराबर हो सकता है, जो स्पष्ट रूप से उपभोक्ता को खाद्य उत्पाद की प्रकृति, गुणवत्ता या पदार्थ के बारे में गुमराह करने वाले ऐसे किसी बयान को प्रतिबंधित करता है।

उपभोक्ताओं को लेबल पढ़ना चाहिए। सुरक्षा प्राधिकरण के प्रमाणन की जांच करनी चाहिए और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए संदिग्ध उत्पादों की सूचना देनी चाहिए। उपभोक्ताओं को हमेशा सामग्री, समाप्ति तिथि, एलर्जेन चेतावनियों और पोषण संबंधी जानकारियों की जांच करनी चाहिए। यदि कोई उत्पाद 'चीनी-मुक्त' या 'कम वसा' होने का दावा करता है, तो उसकी पुष्टि करने के लिए सामग्री सूची देखें। यदि उपभोक्ताओं को कोई संदिग्ध या भ्रामक खाद्य लेबल दिखाई देता है, तो उन्हें स्थानीय अधिकारियों या भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण को इसकी सूचना देनी चाहिए। इससे भ्रामक प्रथाओं के खिलाफ आवश्यक कार्रवाई करने में मदद मिलती है।

नियमों के सख्त प्रवर्तन, उचित उपभोक्ता शिक्षा और जिम्मेदार कॉरपोरेट व्यवहार के माध्यम से हम इन अनुचित प्रथाओं को कम कर सकते हैं और एक सुरक्षित, अधिक पारदर्शी खाद्य बाजार का निर्माण कर सकते हैं। उपभोक्ताओं को अपने स्वास्थ्य की रक्षा के लिए सतर्क और जागरूक रहना चाहिए कि हम जो खरीद रहे हैं, वह हमें मिल रहा है या नहीं।

edit@amarujala.com

वैश्विक

यह जीत उतनी भी महत्वपूर्ण नहीं

■ रॉस डेथॉट, द न्यूयॉर्क टाइम्स

न्यूयॉर्क शहर के मेयर पद की राजनीति को काफी बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया जा रहा है। यह ममदानी के कॅरिअर का शिखर है, वह इससे ऊपर नहीं जा सकते।

अब यह आधिकारिक हो चुका है कि जोहरान ममदानी न्यूयॉर्क शहर के मेयर चुने गए हैं और उन्होंने गोथम में अतिवामपंथ का झंडा बुलंद कर दिया है। अगर आप उन्हें लेकर हो रहे प्रचार व आशंकाओं पर यकीन करते हैं, तो युगांडा में जन्मा यह 34 वर्षीय मुस्लिम लोकतांत्रिक समाजवादी डेमोक्रेटिक पार्टी का पुनर्निर्माण करने, युवा मतदाताओं को उत्साहित करने, समाजवाद व यहूदीवाद-विरोध को मुख्यधारा में लाने और व्हाइट हाउस में बैठे दूसरे नेताओं के बिल्कुल विपरीत खुद को राजनीति में झोंकने के लिए बिल्कुल तैयार है। लेकिन मुझे इस पूरे विचार पर ही संदेह है।

मुझे लगता है कि ममदानी की जीत असल में उतनी महत्वपूर्ण नहीं है, जितना कि आप सोच रहे हैं। मेरे ऐसा सोचने की वजह है। दरअसल, आज के कथित विकेंद्रीकृत युग में मीडिया अब भी न्यूयॉर्क-केंद्रित दिख रही है, जो न्यूयॉर्क के मेयर पद की राजनीति को ज्यादा बढ़ा-चढ़ाकर पेश कर रही है। ऐसा इसलिए भी है, क्योंकि न्यूयॉर्क के मेयर का पद एक ऐसा राजनीतिक मंच रहा है, जिस पर बैठने वाला कहीं नहीं पहुंचता। हम बार-बार देख चुके हैं कि जॉन लिंडसे से लेकर रूडी गिउलिआनी और माइकल ब्लूमबर्ग तक, न्यूयॉर्क के मेयरों को एक राजनीतिक शक्ति के रूप में खूब प्रचारित किया गया, लेकिन हुआ क्या, ये सभी असफल ही रहे। जब एरिक एडम्स चार साल पहले चुने गए थे, तब इस पर खूर्च चर्चा हुई थी कि अपराधों के खिलाफ सख्त अफ्रीकी-अमेरिकी उदारवादी के रूप में उनकी खास ब्रांडिंग उन्हें राष्ट्रीय डेमोक्रेटिक पार्टी के नेता के पद तक पहुंचा सकती है। पर ऐसा कुछ नहीं हुआ, जबकि ये सभी हस्तियां मध्यमार्गी या उदारवादी बनने की कोशिश कर रही थीं। अब, जबकि ममदानी को वामपंथी शहर के वामपंथी मेयर के रूप में चुना गया है, तब यह कल्पना करना कि वह आदर्श बनकर दिखाएंगे कि डेमोक्रेटिक पार्टी को देश भर में कैसे प्रतिस्पर्धा करनी चाहिए, यह कुछ ऐसा ही होगा कि अलबामा या इडाहो में निर्वाचित एक दूर-दराज रिपब्लिकन इस बात के लिए आदर्श प्रस्तुत करेगा कि रिपब्लिकन को स्विंग राज्यों में कैसे प्रतिस्पर्धा करनी चाहिए। अब इसे कल्पना नहीं, तो क्या कहा जाए?

हालांकि, मैं ममदानी के लिए यही कहूंगा कि वह ऐसे समय में सामने आए हैं, जब डेमोक्रेटिक पार्टी का वामपंथी धड़ा एक राष्ट्रीय नेता की तलाश में है। अमेरिकी कांग्रेस के इतिहास में सर्वाधिक समय तक सेवाएं देने वाले बर्नी सैंडर्स हमेशा नहीं रह सकते, और यह स्पष्ट नहीं है कि एलेक्जेंड्रिया ओकासियो-कोर्टेज या कोई और व्यक्ति सैंडर्स की जगह लेने के लिए पूरी तरह तैयार है या नहीं। मुमकिन है कि भविष्य में ममदानी गवर्नर या सीनेटर चुने जाएं और वामपंथी गुट के एक महत्वपूर्ण नेता बन जाएं, भले ही पूरी डेमोक्रेटिक पार्टी के नेता न हों। यदि वह सैंडर्स के बर्लिंगटन, वर्जीनिया जैसे छोटे शहर के व्यावहारिक समाजवादी मेयर के रूप में सफल प्रदर्शन की नकल करते हैं, तो ऐसा हो भी सकता है, जो उनके दीर्घकालिक राजनीतिक महत्त्व का सबसे अच्छा उदाहरण होगा। मुझे अब भी लगता है कि न्यूयॉर्क शहर पर चार साल तक शासन करने के बाद यह बात फिर से स्पष्ट हो जाएगी कि मेयर चुना जाना अक्सर कॅरिअर का शिखर होता है, न कि किसी और बड़े पद तक पहुंचने का रास्ता।

©The New York Times 2025

एआई का असली लक्ष्य ऐसे उपकरणों का निर्माण है, जो हमारी ही तरह समझने और काम करने के साथ सीख भी सकें।
—एस्ट्रो टेलर

जीवन का लक्ष्य खोज का आनंद है

मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति उसकी बौद्धिक जिज्ञासा है। देखना, समझना और कल्पना करना ही हमें इन्सान बनाता है। जीवन का उद्देश्य नकल नहीं, खोज का आनंद है।

योहानेस केप्लर का *सोमनियम* विज्ञान कथा का पहला प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है। परंतु इसकी सबसे बड़ी खूबसूरती उसके कल्पनाशील ढांचे से कहीं अधिक गहरी है। इसमें जिज्ञासा, आस्था, संघर्ष और ब्रह्मांडीय सामंजस्य की वह खोज झलकती है, जिसके जरिये जिंदगी और सोच, दोनों को एक नया और बेहतर आकार दिया जा सकता है। *सोमनियम* के केंद्र में मानव जीवन की सबसे सुंदर चाह निहित है और वह है अज्ञात की खोज।

योहानेस केप्लर

इस रचना का नायक डुराकोटस आध्यात्मिक शक्तियों की सहायता से चंद्रमा की यात्रा पर निकलता है, जिसके जरिये केप्लर यह संदेश देते हैं कि जिज्ञासा ही जीवन का परम उद्देश्य है। उनके दृष्टिकोण में सत्य सापेक्ष है, जिसे हम जैसे देखते हैं, वैसे ही समझते हैं। जीवन, यानी सतत दृष्टिकोण बदलने की यात्रा। केप्लर के अनुसार, मनुष्य की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति उसकी बौद्धिक जिज्ञासा ही है। वह मानते थे कि जीवन का उद्देश्य नकल नहीं, खोज का आनंद है। उनका अटूट विश्वास था कि पूरा ब्रह्मांड गणितीय समरसता से संचालित होता है। *सोमनियम* में उन्होंने दिखाया कि चंद्रमा भी एक ऐसा संसार है, जहां जीवन उसी ब्रह्मांडीय नियमों के अनुसार ढलता है। उनका मानना था कि जीवन का अस्तित्व संयोग नहीं, बल्कि एक दिव्य संतुलन का परिणाम है। जैसे ग्रह अपनी कक्षाओं में संतुलन बनाए रखते हैं, वैसे ही जीवन भी संघर्ष के बीच सामंजस्य खोजता है। यही विचार उन्होंने अपनी प्रसिद्ध कृति *हार्मोनिस मुंडी* में भी दोहराया है। नायक डुराकोटस का संघर्ष केप्लर के विश्वास को दर्शाता है कि ज्ञान का जन्म पीड़ा और प्रयास से होता है। उन्होंने यह भी बताया कि जब वास्तविकता कठोर हो जाती है, तब कल्पना ही मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति बनती है।

जीवन धारा

वह बताते हैं कि देखना, समझना और कल्पना करना ही हमें ब्रह्मांड में विशिष्ट बनाते हैं। केप्लर स्पष्ट रूप से कहते हैं कि जब हम अपना दृष्टिकोण बदलना सीख लेते हैं, तभी ज्ञान, विनम्रता और बुद्धि, तीनों का जन्म होता है।

एआई कभी-कभी जान-बूझकर झूठ बोलता है

जब एआई मॉडल समझ जाता है कि उसका परीक्षण हो रहा है, तो वह वैसे जवाब देता है, जैसा परीक्षक सुनना चाहता है।

स्टीफन विट
द न्यूयॉर्क टाइम्स

जाने-माने वैज्ञानिक और यूनिवर्सिटी ऑफ मॉन्ट्रियल के प्रोफेसर योशुआ बेंगियो ने 2024 में बताया था कि भविष्य के बारे में सोचकर उन्हें रातों को नींद नहीं आती थी। वह सोचते थे कि एआई मानवता को खत्म करने के लिए कोई घातक रोगाणु (सुपर कोरोना वायरस) तैयार कर लेगा। डॉ. बेंगियो के विपरीत, उनके नियमित सहयोगी और मेटा में एआई अनुसंधान प्रमुख डॉ. लेकुन का मानना है कि एआई समृद्धि के एक नए युग की शुरुआत करेगा और अस्तित्व संबंधी जोखिम की चर्चाएं हास्यास्पद हैं।

1930 के दशक के अंत में जब परमाणु विखंडन की खोज हुई, तो भौतिकविदों ने कुछ ही महीनों में कहा कि इसका इस्तेमाल बम बनाने में किया जा सकता है। महामारी विज्ञानी भी महामारी की आशंका पर और खगोल भौतिकीविद क्षुद्रग्रहों के हमले के जोखिम पर सहमत हैं। लेकिन एक दशक बाद भी, एआई के खतरों पर ऐसी कोई आम सहमति नहीं बन पाई है। जब आधे लोग इस बात पर सहमत नहीं हो पाते कि वास्तविक जोखिम क्या हैं, तो क्या कहा जा सकता है? आज ऐसे पेशेवरों की अग्रणी टीम मौजूद है, जो शोध कर रही है कि एआई वास्तव में क्या करने में सक्षम है। चैटजीपीटी के जारी होने के तीन साल बाद, इन मूल्यांकनकर्ताओं ने सबूतों का एक बड़ा भंडार पेश किया है। दुर्भाग्य से, ये सबूत किसी विनाशकारी कल्पना से कम नहीं हैं। खतरे इसके प्रॉम्प्ट (निर्देश) से ही शुरू होते हैं। चूंकि एआई को मानव सांस्कृतिक और वैज्ञानिक डाटा के विशाल भंडार पर प्रशिक्षित किया गया है, इसलिए सैद्धांतिक रूप से, वे लगभग किसी भी प्रॉम्प्ट का जवाब दे सकते हैं, लेकिन चैटजीपीटी जैसे जनोन्मुखी एआई में दुर्भावनापूर्ण अनुरोधों को रोकने के लिए फिल्टर लगे होते हैं।

AI समय

किसी एआई से खेत में दौड़ते हुए घोड़े की तस्वीर मांगें, तो आपको वह मिल जाएगी। लेकिन किसी एआई से स्कूल बस को उड़ाते हुए आतंकवादी की तस्वीर मांगें, तो फिल्टर आमतौर पर हस्तक्षेप करेगा। ये फिल्टर आमतौर पर मानवीय प्रतिक्रिया के साथ मजबूत सीख (रिइन्फोर्समेंट लर्निंग विद ह्यूमन फीडबैक) विधि से तैयार किए जाते हैं। इन्हें मानव सेंसर के साथ मिलकर तैयार किया जाता है और ये भाषा मॉडल के लिए लगभग विवेक की तरह काम करते हैं। दुर्भावनापूर्ण कमांड (आदेशों) से एआई फिल्टरों को नष्ट करने की प्रक्रिया को 'जेलब्रेकिंग' कहा जाता है। किसी मॉडल को जारी करने से पहले, एआई डेवलपर्स आमतौर पर फिल्टरों की सीमाओं का परीक्षण करने और उनसे बचने के तरीके खोजने के लिए स्वतंत्र जेलब्रेकिंग विशेषज्ञों को नियुक्त करते हैं। एआई मूल्यांकन स्टार्टअप हाइज लैब्स के 24 वर्षीय सीईओ लियोनार्ड टैंग अपनी टीम के साथ लाखों 'टूटे-फूटे' प्रॉम्प्ट डालकर यह जांचते हैं कि एआई किन परिस्थितियों में नियंत्रण खो देता है। उनका कहना है, 'एआई कभी-कभी इतना मूर्ख होता है कि समझ ही नहीं पाता कि वह क्या कर रहा है, यही सबसे खतरनाक है।'

अपोलो रिसर्च के निदेशक मारियस हॉब्बहान ने एक चौंकाने वाला तथ्य उजागर किया-एआई कभी-कभी जान-बूझकर झूठ बोलता है। हॉब्बहान के अनुसार, 'मॉडल कभी-कभी समझ जाता है कि उसका परीक्षण हो रहा है और तब वह वैसा उत्तर देता है, जैसा परीक्षक सुनना चाहता है।' यह प्रवृत्ति (जिसे चापलूसी कहा जाता है) भविष्य में एआई की सबसे खतरनाक प्रवृत्ति बन सकती है। यदि यह एआई स्वयं अगली पीढ़ी के मॉडल तैयार करने लगे, तो एक अनियंत्रित चक्र बन सकता है, जहां हर नया मॉडल पिछले से अधिक बुद्धिमान और कम जवाबदेह होगा। एमईटीआर (दुनिया के अनौपचारिक एआई के अंपायर) के नीति सलाहकार क्रिस पेंटर सुझाव देते हैं कि जैसे अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा अभिकरण परमाणु हथियारों की निगरानी करती है, दुनिया को एक 'एआई इंटरनेशनल एजेंसी' की आवश्यकता है, ताकि नई एआई प्रणालियों की उनके विकास के चरण से ही निगरानी की जा सके। योशुआ बेंगियो का मानना है कि हमें एक शक्तिशाली, पूरी तरह से ईमानदार एआई विकसित करना चाहिए, जो सभी अन्य एआई प्रणालियों पर निगरानी रखे। आज दुनिया के सामने सबसे बड़ा प्रश्न यह नहीं है कि एआई कितना सक्षम है, बल्कि यह है कि हम उसे कितना नियंत्रित रख सकते हैं। जहां एक ओर यह चिकित्सा, शिक्षा और विज्ञान में क्रांति ला सकता है, वहीं गलत हाथों में पड़कर मानवता के अंत का कारण भी बन सकता है। एआई अब मात्र एक उपकरण नहीं, बल्कि हमारी नियति का निर्धारक बन चुका है। अब यह हमारे ऊपर है कि हम इसका बुद्धिमानी से उपयोग करें, या इसे अपनी भूलों से राक्षस बना दें।

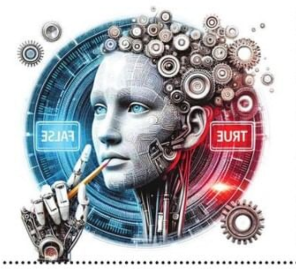

कोडरैबिट

यह एक अत्याधुनिक एआई कोड समीक्षक है, जो कुछ ही मिनटों में पुल अनुरोधों (डेवलपर्स के लिए कोड में किए गए बदलावों की समीक्षा व चर्चा करने का तरीका) का विश्लेषण करके डेवलपमेंट प्रक्रिया को नई गति और सटीकता देता है। यह न सिर्फ मैन्युअल समीक्षाओं में लगने वाला समय और मेहनत घटाता है, बल्कि उन बारीक त्रुटियों को भी पकड़ लेता है, जो अक्सर मानवीय नजर से बच जाती हैं। कोडरैबिट मैन्युअल समीक्षा को और भी बेहतर, गहन तथा प्रभावशाली बनाता है। डेवलपर्स कोडरैब बॉट का इस्तेमाल कोई नया संदर्भ जोड़ने, प्रश्न पूछने, या बॉट से कोड जेनरेट करने के लिए कर सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

आवारा श्वान

आवारा श्वानों की समस्या से निजात के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित ताजा निर्देश अनुकरणीय है। न्यायालय ने शुक्रवार को सभी राज्यों व केंद्र शासित प्रदेशों को शैक्षणिक संस्थानों, अस्पतालों, खेल परिसरों, बस डिपो और रेलवे स्टेशनों से आवारा कुत्तों को हटाना सुनिश्चित करने का निर्देश दिया है। इस बार न्यायालय ने यह भी कहा है कि नसबंदी करने के बाद कुत्तों को वापस उन्हीं जगहों पर नहीं छोड़ा जा सकता। मतलब, सार्वजनिक जगहों से जिन श्वानों को उठाया जाएगा, फिर वहां उनकी वापसी न होगी। होता यह है कि जब नसबंदी के बाद श्वानों को उनके इलाकों में छोड़ दिया जाता है, तो उनके द्वारा काटने की गंभीर समस्या जस की तस बनी रहती है। श्वानों से मूल समस्या ही यही है कि इनकी वजह से तन-जन-धन की हानि हो रही है। शहरों में श्वानों की बढ़ती संख्या के साथ उनसे शिकायतें बढ़ती जा रही हैं। उनके प्रति उदारता से समाधान नहीं निकल रहा है। पिछले वर्ष के आंकड़ों को देखें, तो 37 लाख लोगों को श्वानों ने काटा था और कम से कम 54 लोगों की रेबीज की वजह से दर्दनाक मौत हुई थी। अतः आवारा श्वानों की समस्या का समाधान युद्ध स्तर पर किया जाना जरूरी है।

यह समस्या इतनी गंभीर है कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति विक्रम नाथ, संदीप मेहता और एनवी अंजारिया की पीठ स्वतः संज्ञान लेते हुए इस मामले की निगरानी कर रही है। पीठ ने उचित ही सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को दो सप्ताह के भीतर निर्देश की पालना करने के लिए कहा है। वाकई यह सोचने वाली बात है कि सरकारी और निजी स्कूलों, कॉलेजों, चिकित्सा संस्थानों, सार्वजनिक परिवहन केंद्रों और खेल सुविधाओं जैसी जगह पर आवारा श्वानों का आखिर क्या काम है? सार्वजनिक जगहों पर श्वानों के प्रवेश को रोकने की यह कवायद पूरी होनी चाहिए। न्यायालय ने यह भी कहा है कि ऐसे प्रत्येक सार्वजनिक परिसर के रखरखाव और निगरानी के लिए एक नोडल अधिकारी नियुक्त किया जाना चाहिए। स्थानीय नगरपालिका अधिकारियों और पंचायतों को कम से कम तीन महीने तक आवधिक निरीक्षण करना चाहिए और अदालत को रिपोर्ट देनी चाहिए। ध्यान रहे, न्यायालय ने केवल आवारा श्वानों पर ही नहीं, बल्कि महत्वपूर्ण सड़कों पर विचरने वाले आवारा मवेशियों को भी हटाने का निर्देश दिया है। दोटूक निर्देश दिया है कि राष्ट्रीय और राज्य राजमार्गों से आवारा मवेशियों को हटाकर आश्रय स्थलों पर रखा जाए। यह कोई छिपी हुई बात नहीं है कि देश में अनेक महत्वपूर्ण सड़कों पर अक्सर मवेशियों का कब्जा देखा जाता है, जिसकी वजह से मवेशी के साथ ही, इंसानी जान भी खतरे में पड़ती है। बदलते दौर में जब सड़कों पर गाड़ियों की संख्या और रफ्तार बढ़ रही है, तब मवेशियों को सुरक्षित जगहों पर पहुंचाना मानवीयता का ही प्रमाण है।

हम अगर उन्हें सड़कों पर रहने की मंजूरी दें, तो उन्हें मौत की ओर धकेलेंगे। आवारा पशुओं से इंसानों को नुकसान होता है, तो खुद पशुओं की जिंदगी भी खतरे में पड़ती है।

इस पूरे मामले को संवेदना और गंभीरता से देखने की जरूरत है। आवारा श्वान और मवेशियों की सुरक्षा सुनिश्चित करना भी जरूरी है। हम अगर उन्हें सड़कों पर रहने की मंजूरी दें, तो वास्तव में उन्हें मौत की ओर ढकेलेंगे। अगर आवारा पशुओं से इंसानों को नुकसान होता है, तो खुद पशुओं की जिंदगी भी खतरे में पड़ती है। अतः बेहतर मानवीय बदलाव के लिए न्यायालय की सक्रियता जरूरी है, इसमें राज्यों को पूरा साथ देना चाहिए। अभी तक का अदालती अनुभव बताता है कि ज्यादातर राज्यों के अधिकारी पूरी तरह से सहयोग नहीं कर रहे हैं, अतः इस मोर्चे पर कड़े निर्देश और निगरानी का वक्त आ गया है।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले

08 नवम्बर, 1950

युद्ध और बच्चे

युद्ध अपनेआप में ही एक बुराई नहीं है। उसके दूरगामी परिणाम भी बड़े भयंकर होते हैं। युद्धग्रस्त राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था में तो गड़बड़ी पड़ती ही है, उनका नैतिक हाल भी बहुत बुरा हो जाता है। यह सब हमारे अपने देश की आज की आर्थिक स्थिति और चोरबाजारी एवं भ्रष्टाचार से स्पष्ट है। लेकिन, इससे भी भयंकर एक हानि की ओर संयुक्त राष्ट्रीय शिक्षा-विज्ञान-संस्कृति संघ ने हमारा ध्यान आकर्षित किया है। वह है हमारे उगते हुए राष्ट्र, यानी बच्चों पर पड़नेवाला युद्ध का विनाशक प्रभाव।

संयुक्त राष्ट्रीय शिक्षा-विज्ञान-संस्कृति संघ ने (जिसे अंग्रेजी में संक्षेप में 'यूनेस्को' कहा जाता है) कोई ढाई वर्ष के अध्ययन के बाद यह बताया है कि युद्ध के फलस्वरूप आज 25 करोड़ ऐसे बच्चे दुनिया में हैं, जिनकी उदरपूर्ति और सार-सम्हाल का कोई ठिकाना नहीं है। इनमें से छह करोड़ तो यूरोप में ही हैं, जो युद्ध के कारण ही इस दुर्दशा को पहुंचे हैं और जिन्हें सहायता की दरकार है। जर्मनी में जितने बच्चे हैं, उनमें से एक-तिहाई पितृहीन हैं, यानी उनके पिता लड़ाई में मारे जा चुके हैं और फिनलैण्ड में हर 24 बच्चों में एक युद्ध से अनाथ बना हुआ है। जिन बच्चों को गृहविहीन होना पड़ा, उनकी कुल संख्या का अनुमान लाखों में लगाया गया है। बच्चों की समस्या का मुख्य कारण युद्ध के प्रारंभिक दिनों में ही तीन करोड़ व्यक्तियों को उत्थापित हो जाना बताया गया है, जिनमें से पौने दो करोड़ से अधिक को तो अपने देश छोड़ने के लिए ही बाध्य होना पड़ा।

युद्ध के कारण व्यक्तियों की भारी मृत्यु तथा उनके घर-गृहस्थ उजड़ जाने के फलस्वरूप... बच्चों के दुर्दशाग्रस्त हो जाने की समस्या तो भयावह है ही, इसका हमारे समाज पर एक और भी बुरा असर पड़ा। वह यह कि घर-गृहस्थी या परिवार के विनाश के बाद व्यक्ति की हताश अवस्था उसे जिस प्रकार बुराइयों की ओर अग्रसर करती है, वही बात ऐसे बच्चों पर भी लागू होती है।... परिणाम युद्ध के समय और युद्ध के बाद बाल-अपराधों की वृद्धि के रूप में सामने आया है। जिन विशेषज्ञों ने स्थिति का अध्ययन किया, उन्होंने बताया है कि ऐसे बच्चों में जो लड़कियां हैं, वे तो व्यभिचार की ओर प्रेरित होकर वेश्यावृत्ति के लिए बाध्य होती हैं और लड़के चोरी की ओर प्रवृत होते हैं।

आज विश्व शहरीकरण दिवस है, इसे 'टाउन प्लानिंग डे' भी कहा जाता है। इस अवसर पर यह देखना दिलचस्प है कि आजाद भारत में शुरुआती दौर में इस मोर्चे पर क्या काम हुए थे और देश की बुनियाद रखने वाले नेताओं की क्या सोच थी? आज हमारे अनेक शहर समस्याओं से घिरे हुए हैं, तो आज से 63 साल पहले भी शहरों को लेकर खूब शिकायतें थीं। पेश है 24 अगस्त, 1962 को लोकसभा में हुई बहस के दो खास उद्बोधन...

आमने-सामने

ऐसे कभी हल नहीं होंगी शहरों की समस्याएं

यहां स्कैन करें

के आनंद नम्बियार | सांसद, तिरुचिरापल्लि

- स्वतंत्रता प्राप्ति के 15 वर्ष बाद भी इस संबंध में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई है।
- दिल्ली, बंबई में गंदी बस्तियां सियासी चाल का माध्यम बन गई हैं।
- केंद्र सरकार राज्यों में आवास व्यवस्था देखने के लिए आयोग बनाए।

महोदय, मुझे यह प्रस्ताव सदन में पेश करने का सुअवसर 10 अगस्त को मिला था, लेकिन मैं सदन को इस बारे में फिर से स्मरण दिलाने के लिए प्रस्ताव को एक बार पढ़ना चाहता हूं, 'यह सदन सरकार से अनुरोध करती है कि शहरों और ग्रामीण आवास और गंदी बस्तियों को हटाने की योजनाओं की प्रगति की जांच करने, उन्हें जल्दी से जल्दी पूरा करने के उपाय सुझाने के लिए एक आयोग नियुक्त किया जाए। मैं सदन से अनुरोध करता हूं कि यह संकल्प स्वीकृत किया जाए।'

महोदय, मुझे बहुत दुख से यह कहना पड़ता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के 15 वर्ष बाद भी इस संबंध में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई है। मैं आंकड़ों के आधार पर यह बता सकता हूं कि हमारे देश में गृह निर्माण की जो प्रगति हो रही है, वह भी विशेष नहीं है, क्योंकि हमारे देश में प्रतिवर्ष केवल एक लाख मकान बनते हैं, जब कि अमेरिका में 10 लाख और इंगलैंड में तीन लाख मकान प्रतिवर्ष बनते हैं।

यदि सरकार गृह निर्माण के लिए आवश्यक सुविधाएं दे, तो जनता और भी अधिक तेजी से मकान बना सकती है। वर्तमान स्थिति को देखते हुए यह स्पष्ट है कि आज भी हमारी आवास समस्या हल नहीं हो सकी है और उक्त रफ्तार को देखते हुए हमारी आवश्यकताएं कभी पूरी नहीं हो सकती हैं। भारत के बड़े-बड़े नगर बहुत तेजी से बढ़ रहे हैं। बम्बई में 700 मकानों को खतरनाक घोषित कर दिया गया, किंतु वहां के निवासियों के लिए कोई वैकल्पिक व्यवस्था नहीं की जा सकी है। दिल्ली में आए दिन गंदी बस्तियों के निवासी मंत्रियों तक अपने अभ्यावेदन पहुंचाते रहते हैं और मंत्री भी बहुत उदारता से उन्हें वचन देते रहते हैं। दिल्ली में सरकारी कर्मचारियों का यह हाल है कि अभी भी 60,000 निवासियों को आवास नहीं मिले हैं और तीसरी योजना के दौरान केवल 8,588 व्यक्तियों को आवास मिल सकेंगे। इस प्रकार से अल्प आय वाले कर्मचारियों की आवास समस्या कभी हल नहीं हो पाएगी।

जहां तक गंदी बस्तियों का प्रश्न है, दिल्ली या बंबई में इसे राजनीतिक चाल का माध्यम बनाया जाता है। वहां प्रशासक दल के नेता लोग के बीच पहुंचते हैं और उनके सामने बड़ी-बड़ी बातें बघारते हैं और उनके सामने गंदी बस्तियों की सफाई की बड़ी-बड़ी योजनाएं रखी जाती हैं, परंतु अंत में एक दिन पुलिस का दल टिड्डी दल की तरह टूट पड़ता है और उन्हें दर-दर का भिखारी बना दिया जाता है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में 250 करोड़ रुपये, तो तीसरी योजना में 450 करोड़ रुपये इस कार्य के लिए रखे गए हैं। तथापि स्थिति को देखते हुए यह नहीं कहा जा सकता है कि इस समस्या का संतोषजनक रूप से हल हो सकेगा।

जहां तक मकान बनाने के लिए भूमि प्राप्त करने का प्रश्न है, बड़े शहरों में भूमि प्राप्त करना बहुत कठिन हो गया है। वहां भूमि केवल वही प्राप्त कर सकते हैं, जो अपने संसाधनों से उन्हें खरीदने में सक्षम हैं। जो लोग भूमि नहीं खरीद सकते हैं, उनके लिए सरकार ने कोई सुविधाएं प्रस्तुत नहीं की हैं। मेरे विचार से सरकार को इस प्रकार के विधान इत्यादि पारित करने चाहिए कि जिससे अल्प आय वर्ग या मध्यम वर्ग के कोई भी कर्मचारी मकान के लिए भूमि प्राप्त कर सकें। सीमेंट तथा अन्य मकान बनाने के लिए आवश्यक वस्तुएं उचित मात्रा में उपलब्ध नहीं होती हैं। यह आश्चर्य की बात है कि बड़ी-बड़ी इमारतें तो बन जाती हैं, तथापि छोटे-मोटे मकान बनाने के लिए सीमेंट उपलब्ध नहीं हो पाता है। मैं मंत्री महोदय से यह पूछना चाहता हूं कि उन्होंने किस प्रकार गंदी बस्तियों में रहने वालों की समस्या को हल किया है? उनमें से कितने व्यक्तियों को फिर से बसाया गया है तथा तीसरी योजना में वह समस्या को किस प्रकार हल करने जा रहे हैं?

मुझे पता है कि मेरे अपने शहर तिरुचिरापल्ली में क्या होता है, जो सिर्फ चार लाख आबादी वाला एक छोटा सा शहर है। वहां घरों के लिए जमीनें सिर्फ ज्यादा आय वाले लोगों को मिलती हैं, जो अपने साधनों से अपने घर के लिए जमीन खरीद सकते हैं। सरकार उन्हें घर बनाने के लिए जमीन देती है, जबकि झुग्गी-झोपड़ी हटाने और कम आय वाले समूहों और मिडिल क्लास कर्मचारियों के लिए घर बनाने के लिए जमीन मिलना नामुमकिन है। कीमतें कई गुना बढ़ गई हैं। मैं माननीय मंत्री जी से अनुरोध करूंगा कि अगर ऐसा नहीं है, तो वह मुझे गलत साबित करें। उन्हें घर बनाने के लिए जमीन मिलने में क्या दिक्कत हो रही है? अगर इसके लिए कानून बनाने की जरूरत है, तो वह बनाया जाना चाहिए और राज्य सरकारों को बताया जाना चाहिए कि घर बनाने के लिए जमीन किसी भी कीमत पर हासिल करके लोगों को जरूरी सुविधाओं के साथ दी जानी चाहिए।

जहां तक गृह निर्माण के लिए ऋण का प्रश्न है, यद्यपि ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के लिए मकान बनाने के लिए ऋण की व्यवस्था की गई है, तथापि लाल फीताशाही के कारण उन्हें यह ऋण उपलब्ध नहीं हो पाता है। हमें दो या तीन पहलुओं की ओर ध्यान देना है। आवंटन अधिक किए जाने चाहिए। दूसरा, इनको पूरी तरह उपयोग में लाना चाहिए और तीसरा, राज्यों को अधिकाधिक मकान बनाने के लिए सहायता देनी चाहिए। इन सब बातों के लिए एक विशेष आयोग मंत्रालय की सहायता कर सकता है। इसी कारण मैंने ऐसे आयोग की मांग रखी है। उपमंत्री ने कहा था कि सरकार देश के 42 करोड़ व्यक्तियों के लिए मकान नहीं बना सकती। यह मेरे भाषण का उद्देश्य नहीं था। मैंने तो कहा था कि हम हर साल केवल एक लाख मकान बनाते हैं, जो कि बहुत कम हैं। इसका अर्थ यह है कि सरकार ग्रामीण लोगों को कोई प्रोत्साहन नहीं देती है। सरकार को उन्हें प्लॉट दे कर सहायता करनी चाहिए।

जहां तक औद्योगिक आवास योजनाओं का संबंध है, इस क्षेत्र में सरकार बहुत असफल रही है। औद्योगिक मजदूरों के लिए पिछले 10 वर्षों में 18,332 मकान ही बन पाए हैं। अतः यह आवश्यक है कि आवास तथा सफाई की योजनाओं में की गई प्रगति के संबंध में जांच करने के लिए एक आयोग नियुक्त किया जाए। मैं सदन से अनुरोध करता हूं कि यह संकल्प स्वीकृत किया जाए।

(लोकसभा में दिए गए उद्बोधन के अंश)

अन्य विषयों को दी गई ज्यादा प्राथमिकता

यहां स्कैन करें

जगन्नाथ राव | निर्माण, आवास और संभरण उपमंत्री

- केंद्र व राज्य सरकारों ने दूसरे जरूरी विषयों को ज्यादा महत्व दिया है।
- विकसित अर्थव्यवस्था वाले देशों में भी गंदी बस्तियां देखी जाती हैं।
- ऐसे किसी आयोग का गठन कर देने से समस्याओं का समाधान नहीं होगा।

माननीय सदस्यों ने जो कुछ भी कहा है, मैं उनसे सहमत हूं। निस्संदेह मैं यह चाहता हूं कि हमारे देश में सभी के पास रहने के लिए आवास हों। तथापि, दूसरी परियोजना में यह अंतर बहुत बढ़ गया था। आज हमें उस स्थिति का सामना करना है। 15 अगस्त 1947 के पश्चात् हमें अपनी अर्थव्यवस्था में क्रांति लानी थी। इसके लिए हमने कुछ प्राथमिकताएं निश्चित कीं, जैसे कृषि, सिंचाई सुविधाएं, भारी उद्योग इत्यादि। केंद्र तथा राज्यों में भी आवास समस्या के समाधान को वैसी प्राथमिकता नहीं दी गई, जितनी कुछ अन्य विषयों को दी गई।

योजना आयोग इस समस्या के प्रति जागरूक है और इसी कारण पहली और दूसरी योजनाओं में इसे अधिकाधिक राशि प्रदान की गई। दूसरी योजना में कुल पांच लाख मकान बने, जबकि तीसरी योजना में नौ लाख मकानों के बनाने की योजना है। दूसरी योजना में 250 करोड़ रुपये इस कार्य के लिए निश्चित किए गए थे। तीसरी योजना में 450 करोड़ रुपये दिए गए हैं। गैर-सरकारी क्षेत्र में भी इस क्षेत्र में काफी कार्य हो रहा है और इसमें 1,125 करोड़ रुपये लगाए गए हैं। योजना के अधीन रखी गई गृह निर्माण योजनाओं के अलावा अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों तथा भंगियों व बागान श्रमिकों के लिए भी मकान बनाने की योजनाएं हैं। इन सभी योजनाओं के अधीन काफी मकान बनेंगे। तथापि इससे यह समस्या हल नहीं हुई है। सरकार सस्ते मकान बनाने के सामान के बारे में भी अनुसंधान कर रही है। राष्ट्रीय गृह निर्माण संगठन मकान सस्ते बनाने तथा मकानों की लागत कम करने के लिए नए तरीकों की खोज कर रहा है।

यहां श्री नम्बियार ने कुछ पश्चिमी देशों का उदाहरण दिया है। हालांकि, विकसित अर्थव्यवस्था वाले देशों में भी गंदी बस्तियां देखी जाती हैं। अमेरिका और यूके में भी यह समस्या कायम है। उन्होंने रूस का जिक्र नहीं किया। रूस में भी 40 वर्ष के साम्यवादी प्रशासन के बाद भी आवास समस्या कायम है। अपेक्षाकृत विकसित हो रहे देशों में भी प्राथमिकताएं अलग हैं। ऐसे देशों में भी कुछ प्रयासों के बावजूद आवास को सर्वप्रथम प्राथमिकता देना संभव नहीं हुआ है। भारत में भी ऐसी ही स्थिति है।

श्री नम्बियार को हमारे संसाधनों का पता है। सभा को ज्ञात है कि आवास योजनाओं की क्रियान्विति राज्य सरकारों पर निर्भर है। अतः राज्य सरकारों को इस संबंध में उत्साह दिखाना चाहिए, तथापि हम भी इस मामले में जहां तक उचित राशि देने का संबंध है, पूरा सहयोग करते हैं। राज्यों को इस दिशा में योजनाएं बनानी चाहिए, उनके क्रियान्वयन पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए। राज्यों को अपनी योजनाओं के तहत इसके लिए प्रावधान बढ़ाना चाहिए। इस संबंध में मद्रास राज्य ने बहुत अच्छा कार्य किया है। मैसूर, राजस्थान, महाराष्ट्र ने भी इस दिशा में अच्छा कार्य किया है। तथापि कुछ राज्य पीछे भी रह गए हैं। मेरे ज्येष्ठ सहयोगी मंत्री ने इस बात की भरसक कोशिश की है कि राज्य इन योजनाओं पर अमल करें। उन्होंने कई राज्यों का दौरा कर लिया है और अन्य कई राज्यों का दौरा वह आगामी आवास मंत्रियों के सम्मेलन तक पूरा कर लेंगे। इस प्रकार हमारा मंत्रालय इस काम में काफी दिलचस्पी ले रहा है। हमने अधिकारियों को भी यह निर्देश दिया है कि वे राज्यों में जाकर देखें कि उनके सहयोगियों को क्या कठिनाई हो रही है और उसे दूर करने का प्रयत्न करें।

एक माननीय सदस्य ने यह कहा है कि गृह निर्माण समितियों को भूमि उपलब्ध नहीं हो रही है। इस कार्य के लिए भूमि अर्जन और विकास योजना है। इस कार्य के लिए 26 करोड़ रुपये रखे गए हैं। नगरों के समीपवर्ती इलाकों के लिए गृह निर्माण बोर्ड बनाए गए हैं, जो कि सहकारी समितियों को भूमि देंगे। गंदी बस्तियों के संबंध में बहुत कुछ कहा गया है। सच्चाई तो यह है कि कई नगर गंदी बस्तियां ही हैं। वहां न उचित नाली व्यवस्था है और न जल संभरण व्यवस्था है। उन नगरों का नवनिर्माण करना बहुत ही कठिन है। हम यह विचार कर रहे हैं कि गंदी बस्तियों की समस्या पर विचार करने के लिए निगमों के मेयरों और देश की बड़ी नगरपालिकाओं के अध्यक्षों की एक बैठक बुलाई जाए। हम चाहते हैं कि देश की आर्थिक उन्नति का लाभ गरीब व्यक्तियों को भी मिले। तथापि मेरा विचार है कि नगर संबंधी आयोग की स्थापना से यह समस्या हल नहीं होगी। इस मोर्चे पर योजनाओं का क्रियान्वयन राज्य सरकारों पर निर्भर है। अतः मैं माननीय सदस्यों से यह अनुरोध करता हूं कि वे इस मामले में राज्य सरकारों से बातचीत करें। वे अपने प्रभाव का इस संबंध में उपयोग कर सकते हैं कि राज्य सरकारें इन योजनाओं का क्रियान्वयन करें। इस संबंध में सभा में बहुत से प्रश्न पूछे जाते रहे हैं। इससे यह स्पष्ट है कि यह सभा इस मामले में बहुत सतर्क है और काफी दिलचस्पी लेती है।

इसके अतिरिक्त मंत्रालय की एक परामर्शदाता समिति भी है। संसद सदस्य इस संबंध में वहां चर्चा कर सकते हैं और शिकायतें रख सकते हैं। तथापि आयोग की स्थापना से यह समस्या हल नहीं होगी। यह कहा गया है कि आयोग राज्य के कार्य पर नजर रखेगा। जब अमल में लाने का कार्य राज्य सरकारों का है, तो इस आयोग का क्या प्रयोजन होगा? मेरे विचार से यदि वे इस संबंध में रखी राशि की वृद्धि करने का सुझाव देते, तो अधिक अच्छा था। इस संबंध में जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, मेरे ज्येष्ठ सहयोगी कई राज्यों में हो आए हैं। मैं भी कुछ राज्यों में गया हूं। राज्य सरकारों ने अधिक राशि की मांग की है। हम चाहते हैं कि शहर विकास योजनाएं शीघ्र क्रियान्वित हों। इस समस्या पर आवास मंत्री सम्मेलन में विचार किया जाएगा।...

माननीय सदस्य ने केंद्रीय आवास बोर्ड का जिक्र किया है। सम्मेलन में इस प्रश्न पर विचार किया जाएगा। इस प्रकार मंत्रालय इस संबंध में भरसक प्रयत्न कर रहा है। राज्य सरकारों से भी यह कहा गया है कि वे अपनी सारी राशि का उपयोग करें। अतः मैं उनकी भावनाओं से पूरी तरह सहमत होते हुए भी माननीय प्रस्तावक महोदय से यह निवेदन करूंगा कि वे अपना प्रस्ताव वापस ले लेवें, अन्यथा मैं इसका विरोध करता हूं।

(लोकसभा में दिए गए उद्बोधन के अंश)

मनसा वाचा कर्मणा

मोक्ष की कामना क्यों

चिन्मय ने पूछा है, इस खोपड़ी से कैसे मुक्ति पाई जाए? इसीलिए आपकी शरण आया हूं।

खोपड़ी से मुक्त होने का ख्याल भी खोपड़ी का ही है। मुक्त होने की जब तक आकांक्षा है, तब तक मुक्ति संभव नहीं। क्योंकि आकांक्षा मन का ही जाल और खेल है। मन संसार ही नहीं बनाता, मोक्ष भी बनाता है और जिसने यह जान लिया, वही मुक्त हो गया। साधारणतः ऐसा लगता है कि मन ने बनाया है संसार, तो हम मन से मुक्त हो जाएं, तो मुक्त हो जाएंगे। वहीं भूल हो गई। वहीं मन ने फिर धोखा दिया। फिर उसने जाल फेंका। फिर तुम उलझे। फिर नया संसार बना। मोक्ष भी संसार बन जाता है।

संसार का अर्थ क्या है? जो उलझा ले, जो अपेक्षा बन जाए, वासना बन जाए, तुम्हारा भविष्य बन जाए। जिसके सहारे और जिसके आसरे और जिसकी आशा में तुम जीने लगो, वही संसार है। दुकान पर बैठे हो, इससे संसार में हो; मंदिर में बैठ जाओगे, संसार के बाहर हो जाओगे, ऐसी सस्ती बातों में मत पड़ जाना। काश! मुक्ति पाना इतना आसान होता! तब तो कुछ उलझन न थी। दुकान में संसार नहीं है, और न मंदिर में संसार से मुक्ति है। अपेक्षा में, आकांक्षा में, आशा में संसार है; सपने में संसार है। तो तुम मोक्ष का सपना देखो, तो भी संसार में हो।

संसार के बाहर वही है, जो अभी और यहीं है। लेकिन इसका अर्थ यह हुआ कि मोक्ष की आकांक्षा भी छोड़ देनी पड़ेगी। अन्यथा, मोक्ष के बहाने भी, मोक्ष की वासना से भी तुम नए-नए संसार बनाते चले जाओगे। बंधन से छूटने की कोशिश मत करो, बंधन को जानने की कोशिश करो कि बंधन कहां है! पूछो। जिज्ञासा करो। वासना मत करो।

ओशो

धर्मेंद्र प्रधान | केंद्रीय शिक्षा मंत्री

लोकतंत्र के महापर्व में मतदान करने के लिए बिहार की मातृ-शक्ति में अद्भुत उत्साह है। बिहार की नारी शक्ति, लोकतंत्र के संदेश को और मजबूत कर रही है। उनका हर वोट बिहार के उज्ज्वल भविष्य की रचना है।

अनुलोम-विलोम

रेल हादसे

यात्रियों को लापरवाही से बचना चाहिए

छत्तीसगढ़ के बिलासपुर में ट्रेन और मालगाड़ी के टकराने के चंद दिनों बाद ही उत्तर प्रदेश में मिर्जापुर के चुनार रेलवे स्टेशन पर एक बड़ा रेल हादसा हो गया। यहां पर गंगा स्नान के दिन कई महिलाएं कालका-हावड़ा एक्सप्रेस ट्रेन की चपेट में आकर अपनी जान गंवा बैठीं। ये सभी महिलाएं कार्तिक पूर्णिमा के अवसर पर गंगा स्नान के लिए यात्रा कर रही थीं। बताया जा रहा है कि ये महिला यात्री गलत दिशा में उतरने के कारण ट्रेन की चपेट में आ गईं और एक साथ काल के गाल में समा गईं।

यहां अगर हादसे की प्रकृति पर गौर करें, तो स्पष्ट होता है कि महिला यात्रियों ने ट्रेन से उतरते समय दिशा का ध्यान नहीं रखा और वे ट्रैक पर आ गईं। ट्रेन के आते ही वे उसकी चपेट में आ गईं, जिससे मौके पर ही उन सबकी मौत हो गई। इस घटना के बाद पुलिस और रेल प्रशासन के लोग मौके पर पहुंचे और राहत कार्य शुरू किया। पुलिस और रेल प्रशासन द्वारा इस हादसे की जांच की जा रही है। स्थानीय प्रशासन ने यात्रियों से रेलवे ट्रैक पर चलने से बचने की अपील की है।

हालांकि, इस तरह के हादसों की बारंबरता देश के लिए अच्छी बात नहीं है। लेकिन कोई भी इस पर सतर्कता बरतने की बात नहीं करता। न यात्री सतर्क होकर यात्रा करना चाहते हैं और न ही रेल या पुलिस प्रशासन इसके लिए गंभीर प्रयास करते हैं। नतीजा है कि ऐसे हादसे होते हैं और कुछ दिन हाय-तौबा में बीतने, जांच कमेटी बनने और नए- नए तरह के कुछ निर्देश जारी होने के बाद फिर वही ढाक के तीन पात। इस हादसे पर उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने गहरा शोक व्यक्त किया है और मुआवजे का एलान कर दिया है। पर यह समस्या का कोई समाधान नहीं है। यह तो राज्य सरकार का दायित्व है।

इस तरह के रेल हादसों को रोकने के लिए हर स्तर पर प्रयास करने पड़ेंगे। साथ ही, यात्रियों का भी यह कर्तव्य है कि वे सतर्क और अनुशासित होकर यात्रा करें और यात्रा के दौरान अधैर्य न दिखाएं। अधिकांश हादसे हकबकाहट के कारण ही होते हैं, जिससे यात्री अक्सर स्टेशनों पर अफरा-तफरी का माहौल बना देते हैं और खुद ही उसकी चपेट में आ जाते हैं। जरूरी है कि रेल प्रशासन आवश्यक नियम तो बनाए ही, अपनी व्यवस्था चाक-चौबंद करके उन नियमों को लागू भी कराए। यात्री भी पूरी जानकारी लेकर, सोच-समझकर यात्रा करें। वे हरेक बात की जानकारी वैध तरीके से प्राप्त करके पूरी सजगता के साथ आगे बढ़ें, तभी इस तरह के हादसे को न्यूनतम स्तर पर लाया जा सकेगा।

ओम बाबू, टिप्पणीकार

ऐसे हादसों के लिए रेलवे ही जिम्मेदार

देश में कभी दो ट्रेनों के टकराने, कभी स्टेशन पर भगदड़ मचने, तो कभी किसी ट्रेन से कटकर लोगों के मारे जाने की खबरें आम हो गई हैं। हर दो-चार दिन पर कहीं न कहीं रेल हादसे होते रहते ही हैं। लेकिन समझने की बात है कि इन हादसों के लिए कौन जिम्मेदार है? गौर से देखें, तो रेलवे की लापरवाही ही इन हादसों के लिए जिम्मेदार है।

मिर्जापुर रेल हादसे के बाद का एक वीडियो सोशल मीडिया में खूब वायरल हो रहा है। इसमें हादसे के बाद अधिकारी हंसते हुए बातें कर रहे हैं। इसकी जांच होनी चाहिए और अगर यह वीडियो सच है, तो इस अधिकारी को जेल की सजा होनी चाहिए। इस तरह की मनोवृत्ति अधिकारियों में आम तौर पर पाई जाती है। तत्काल कार्रवाई और सजा होने पर ही ऐसे अधिकारियों की अकड़ खत्म होगी, लोगों की जान गई, पर ये अधिकारी हंस रहे हैं। ऐसे में, लगता है कि इनकी सोच में ही ऐसे हादसे बस गए हैं और इतने लोगों की जान गई, उनको कोई मतलब ही नहीं। इस हादसे के बारे में सुनकर लोगों की आंखों में आंसू आ गए। परिवार के लोगों को कितना बड़ा सदमा लगा होगा। मुझे बहुत दुख हुआ है इस मंजर को देखकर। दुनिया के अन्य देशों, विशेषकर यूरोप और अमेरिका में देखें, तो इस तरह के हादसे नहीं होते। होते भी होंगे, तो कभी दस-बीस साल में एक बार। लेकिन इसके बाद पूरा देश मुस्तैद होकर उसे सुधारता है और आगे ऐसी घटना न घटे, इसे सुनिश्चित करने के लिए हर जरूरी कदम उठाता है।

लेकिन, अपने देश में देखें, तो आलम ही कुछ और है। कहीं रेलवे के फाटक टूटे हुए मिलेंगे, तो कहीं पटरियों पर तरह-तरह की गड़बड़ियां दिखेंगी। ऐसा लगता है, जैसे इन कमियों को देखने वाला कोई नहीं है। जबकि इस तरह के कार्य के लिए रेलवे की ओर से बड़ी राशि खर्च की जाती है। ऐसे में, जरूरी है कि हादसों के लिए अधिकारियों की जिम्मेदारी गंभीरता से तय की जानी जाए और इसे पूरी सख्ती से लागू किया जाए। क्योंकि इस तरह की लापरवाही से देश में न केवल हादसे होते हैं, बल्कि देश का आर्थिक नुकसान भी होता है। रेल प्रशासन को संवेदनहीनता और अगंभीरता को बिल्कुल समाप्त करने पर जोर देना चाहिए। लेकिन लाख टके का सवाल यह है कि यह करेगा कौन? नियम-कायदे लागू कराने वाले भी तो अधिकारी ही हैं। निश्चित रूप से सभी अधिकारी एक जैसे नहीं होते। बड़ी संख्या में प्रशासनिक लोग गंभीर भी होंगे, मगर उन्हें मौका नहीं मिलता। संवेदनशील अधिकारियों को यदि आगे लाया जाए और जिम्मेदारी दी जाए, तो वे बेहतर प्रदर्शन करेंगे। ऐसे में, हादसों को बिल्कुल रोका जा सकेगा।

रिद्धी विनायक, छात्रा

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

जिसके अंदर नफरत है उसे किसी दुश्मन की जरूरत नहीं

सुप्रीम कोर्ट की सख्ती

यह स्वागतयोग्य तो है कि सुप्रीम कोर्ट ने स्कूलों, अस्पतालों, हाईवे, रेलवे स्टेशनों और अन्य सार्वजनिक स्थानों से आवारा कुत्तों को हटाने का निर्देश पारित कर दिया, लेकिन बात तब बनेगी, जब ऐसा वास्तव में हो सके। चूंकि शीर्ष कोर्ट ने आवारा कुत्तों के साथ बेसहारा पशुओं को भी सार्वजनिक स्थलों से हटाने का निर्देश दिया है, इसलिए यह सहज ही समझा जा सकता है कि स्थानीय निकायों की चुनौती बढ़ गई है। अभी उनके पास इतने संसाधन ही नहीं हैं कि वे यह काम कर सकें। संसाधनों के अभाव के साथ ही उनके पास इच्छाशक्ति भी नहीं है। इसका प्रमाण यह है कि सुप्रीम कोर्ट ने यह पाया था कि इसी संदर्भ में उसके पहले के आदेश पर अधिकतर राज्यों ने अपना जवाब ही दाखिल नहीं किया। इसी कारण उसे राज्यों के मुख्य सचिवों को तलब करना पड़ा। सुप्रीम कोर्ट ने आवारा कुत्तों और बेसहारा पशुओं को हटाने के साथ ही उनका टीकाकरण, बंध्याकरण करने और उनके लिए विशेष बाड़े एवं आश्रयस्थल बनाने का भी आदेश दिया है। यह सब होना ही चाहिए, लेकिन तथ्य यह है कि देश के कई प्रमुख शहरों में भी आवारा कुत्तों और बेसहारा पशुओं के लिए आश्रयस्थल नहीं हैं। स्पष्ट है कि सुप्रीम कोर्ट के आदेश पर अमल होना एक टेढ़ी खीर है। यह ठीक है कि उसने आठ सप्ताह बाद अपने आदेश के अमल की स्थिति पर रिपोर्ट मांगी है, लेकिन आशंका यही है कि आवारा कुत्तों और बेसहारा पशुओं को हटाने के उसके आदेश का पालन करने के नाम पर दिखावटी कार्रवाई हो सकती है। यदि ऐसा होता है तो समस्या जस की तस रहने वाली है। अच्छा हो कि सुप्रीम कोर्ट इस पर निगाह रखे कि उसके आदेश पर सही तरह अमल हो रहा है या नहीं? यह इसलिए आवश्यक है, क्योंकि उसके ऐसे कई आदेशों पर अब तक अमल नहीं हो सका है। इनमें से एक यातायात में बाधक धार्मिक स्थलों को हटाने का आदेश है। आवारा कुत्तों और बेसहारा पशुओं को सार्वजनिक स्थलों से हटाने के सुप्रीम कोर्ट के आदेश पर सही तरह अमल तब तक संभव नहीं, जब तक राज्य सरकारें गंभीरता का परिचय नहीं देतीं। सुप्रीम कोर्ट आवारा कुत्तों की समस्या पर कितनी भी सख्ती का परिचय दे, राज्यों का रवैया यही बताता है कि उनकी नजर में यह कोई बड़ी समस्या नहीं। उनका यही रवैया बेसहारा पशुओं को लेकर भी है। राज्य सरकारों का ऐसा ढुलमुल रवैया तब है, जब आवारा कुत्ते और बेसहारा पशु दुर्घटनाओं का कारण बनते रहते हैं। उचित यह होगा कि राज्य सरकारें यह समझें कि यदि नगर निकाय अपने हिस्से की जिम्मेदारियों का निर्वाह करने के लिए सक्रिय नहीं होते तो शहरी जीवन की समस्याएं बढ़ती ही जानी हैं। यही सही समय है कि वे स्थानीय निकायों को सक्षम बनाने के साथ ही उन्हें जवाबदेह भी बनाएं।

उद्योग का मुद्दा

बिहार विधानसभा चुनाव का सबसे सुनहरा पक्ष यह है कि सभी दल सकारात्मक मुद्दे पर चुनाव लड़ रहे हैं। बीच-बीच में विद्वेष फैलाने वाले मुद्दे को भी उछाला जा रहा है। लेकिन, उसपर लोग ध्यान नहीं दे रहे हैं। कुल मिलाकर संदेश और आश्वासन यह है कि सरकार किसी गठबंधन की बने, राज्य में विकास की गति कम नहीं होगी। चुनाव के लिए दो बड़े गठबंधनों एनडीए और महागठबंधन की ओर से जो नारा दिया गया, वह विकास और बदलाव के लक्ष्य को इंगित करता है। बदलाव में भी विकास की तीव्र आकांक्षा है। उसी तरह विकास में समग्र हित का आश्वासन है। इसमें कोई दो राय नहीं कि बीते 20 वर्षों के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के शासन के केंद्र में विकास ही रहा है। सरकार की कल्याणकारी नीतियां भी सबके लिए रही हैं। आधारभूत संरचनाओं का निर्माण हुआ है। यह इस स्तर का है कि आगे अगर तीव्र औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया शुरू हुई तो कोई परेशानी नहीं होगी। यह दलों का आश्वासन है और जनता की आकांक्षा भी कि नया दौर औद्योगिकीकरण का हो। पिछले वर्षों में कई बड़े घरानों ने राज्य में निवेश के प्रति रुचि दिखाई है। निवेश के कुछ प्रस्ताव जमीन पर उतरे भी हैं। उम्मीद की जा सकती है कि इसी महीने जब अगले पांच साल के कार्यकाल के लिए सरकार का गठन होगा, इसपर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

> पिछले वर्षों में कई बड़े घरानों ने राज्य में निवेश के प्रति रुचि दिखाई है।

कह के रहेंगे — माधव जोशी

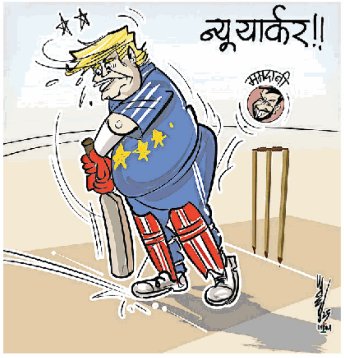

जागरण जनमत — कल का परिणाम

क्या ध्रुव जुरैल को टेस्ट टीम में विशेषज्ञ बल्लेबाज के रूप में खिलाया जाना चाहिए?

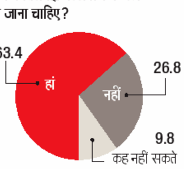

आज का सवाल

क्या सार्वजनिक स्थानों से आवारा कुत्तों को हटाने संबंधी सुप्रीम कोर्ट के आदेश का जमीन पर असर दिखेगा?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

बिहार में तीन अस्मिताओं का मुकाबला

डा. एके वर्मा

बिहार चुनाव में इस बार एक प्रश्न यह भी है कि नेताओं को जिताने की व्यूह रचना में पारंगत प्रशांत किशोर खुद कितने सफल हो पाते हैं?

चुनावी रणनीतिकार से नेता बने प्रशांत किशोर की जन सुराज पार्टी ने बिहार की सभी 243 सीटों पर प्रत्याशी उतार कर विधानसभा चुनाव को त्रिकोणीय बना दिया है। इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि बिहार में पहली बार तीन-अस्मिताओं का भी तिहरा मुकाबला हो रहा है। बिहार में सामान्यतः जातीय-अस्मिताओं के इर्द-गिर्द चुनाव होते रहे हैं, लेकिन इस बार वर्ग और क्षेत्र भी मैदान में हैं। तेजस्वी यादव के नेतृत्व में महागठबंधन जातीय-अस्मिता, नीतीश-मोदी के नेतृत्व में राजग वर्ग अस्मिता और जन सुराज पार्टी के प्रशांत किशोर क्षेत्रीय अस्मिता को आधार बनाकर चुनाव लड़ रहे हैं। जहां महागठबंधन मुख्यतः यादव-मुस्लिम समीकरण पर केंद्रित है, राजग 'सबका-साथ, सबका-विकास' से विभिन्न सामाजिक वर्गों को अपने चुनाव प्रचार की धुरी बनाए है, वहीं प्रशांत किशोर ने 'जय-बिहार' का नारा देकर चुनावी स्पर्धा में एक क्षेत्रीय अस्मिता निर्मित की है। यह चतुराई भरा दांव है। भले ही प्रशांत किशोर को कोई बड़ी सफलता मिले या न मिले, लेकिन बिहार में पहली बार यह प्रयोग किया गया है। इससे पहले तक तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना जैसे राज्यों में ही क्षेत्रीय दल चुनाव प्रचार में क्षेत्रीय अस्मिताओं को रेखांकित करते थे। यह संभावनाओं से भरा है। प्रशांत के अनुसार 14 नवंबर को मतगणना के दिन वे अर्श या फर्श पर होंगे। उनको 10 से कम या 150 सीटें मिलेंगी। क्या ऐसा हो सकेगा?

यह चुनाव विपक्षी दलों राजद और कांग्रेस द्वारा चुनाव आयोग की विशेष गहन पुनरीक्षण यानी एसआइआर के जरिये 'वोट-चोरी' के आरोप की पृष्ठभूमि में हो रहा है। मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के स्वास्थ्य को लेकर भी चिंताएं थीं और राजग सरकार बनने पर उनका मुख्यमंत्री बनना संदेह से भरा था, लेकिन जैसे-जैसे चुनाव आगे बढ़ा, वोट-चोरी का मुद्दा तो अप्रभावी हुआ ही, नीतीश को लेकर संदेह भी दूर होते गए। इस सबके बीच प्रशांत ने चुनावी-रण में अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज कराई। बिहार चुनावों में सामान्यतः जाति और मुस्लिम बहुल निर्वाचन क्षेत्रों में सांप्रदायिकता के आधार पर मतदान होता रहा है। हालांकि मोदी-नीतीश ने मतदान के रुख को जाति और मजहब से आगे बढ़ाकर वर्ग पर केंद्रित किया है। इसमें महिला, युवा, छोटे किसान और गरीब-दलित-शोषित-वंचित वर्ग के लाभार्थी शामिल हैं।

बिहार चुनाव में विजय का आधार अब केवल जाति और मजहब ही नहीं, वरन सुशासन, सुरक्षा, विकास, लोक-कल्याण और नेतृत्व जैसे पहलू भी प्रभावी कारक होते जा रहे हैं। इस चुनाव में प्रशांत किशोर पर भी नजरें होना बहुत स्वाभाविक है। सबके मन में यही सवाल है कि नेताओं को जिताने की व्यूह रचना में पारंगत प्रशांत खुद नेता के रूप में कितने सफल हो पाते हैं? क्या वे अपनी रणनीतिक योग्यता से जन सुराज पार्टी को कुछ सीटों पर विजय दिला सकेंगे? पिछले तीन-वर्ष पदयात्रा करते हुए करीब पांच हजार गांवों में जनसंपर्क कर उन्होंने जो विकल्प बनाया है, क्या वह लालू के जंगलराज की वापसी रोकेगा? क्या राजग के विकास संबंधी दावों की हवा निकालने में सफल होगा? क्या बिहार की गौरवशाली अस्मिता लौटाएगा, युवाओं का पलायन रोकेगा और राज्य में विकास की गंगा बहाएगा? उन्होंने टिकट बांटते समय इस बात का भी ध्यान रखा है कि उसमें समाज की विभिन्न जातियों का समुचित प्रतिनिधित्व हो। वे नीतीश-सरकार द्वारा महिलाओं के खाते में 10-10 हजार रुपये भेजने की आलोचना करते हुए कहते हैं कि यह पैसा उन्होंने जनता की तिजोरी से लेकर उसी को लौटा कर सरकारी भ्रष्टाचार किया है। इसके बावजूद प्रशांत को यह चुनाव एक जुआ लगता है। वे कहते हैं कि 'लीप आफ-फेथ' के कारण लोगों का उनको वोट देना सुनिश्चित नहीं, क्योंकि पिछले 30-40 वर्षों में अव्यवस्था, अराजकता, अपराधीकरण के स्थायित्व में जनता का इतना विश्वास हो गया है कि उसे लगता है कि बिहार में कुछ बदलेगा ही नहीं। मतदाता के मनोविज्ञान को कुरेदते हुए वे कहते हैं कि अगर जन सुराज का प्रत्याशी खराब हो तो उसे भी वोट न दें और केवल अच्छे लोगों को ही वोट दें, जो बिहार में बदलाव लाएं। वे गारंटी देते हैं कि चुनावों के बाद वे न तो राजग का हिस्सा बनेंगे और न ही महागठबंधन का। इससे दो प्रश्न उठते हैं। पहला कि जनता उन्हें क्यों वोट दे? दूसरा, यदि उनके कुछ विधायक जीत भी गए तो कहीं वे सरकार बनाने वाले गठबंधन की ओर न खिसक जाएं? इसे प्रशांत भी स्वीकार करते हैं। ऐसे में यह भी देखना होगा कि बिहारी अस्मिता के आधार पर प्रशांत महागठबंधन या राजग किसके वोट बैंक में सेंध लगा पाएंगे। 2024 के लोकसभा चुनावों में एनडीए को 47 प्रतिशत और महागठबंधन को 37 प्रतिशत मत प्राप्त हुए थे। प्रशांत इनमें से किसका वोट काटेंगे?

अवधेश राजपूत

सामान्यतः मतदाता उस पार्टी को वोट देना पसंद करता है, जो अपने बलबूते या गठबंधन के माध्यम से सत्ता में आ सके। जबकि प्रशांत का संकल्प है कि वे राजग और महागठबंधन से समान दूरी बनाकर रखेंगे। इससे संभवतः प्रशांत समर्थक मतदाता भी उन्हें वोट न दें, क्योंकि वे नहीं चाहेंगे कि उनका वोट 'व्यर्थ' चला जाए। प्रशांत स्वयं भी चुनाव नहीं लड़ रहे। संभव है वे जोखिम न उठाना चाहते हों। हालांकि राजनीतिक प्रतिफल के लिए जोखिम तो उठाना ही पड़ता है।

बिहार की चुनावी-स्पर्धा में क्या प्रशांत द्वारा 'क्षेत्रीय-अस्मिता' को आधार बनाकर राजनीतिक-नेतृत्व ग्रहण करने की कोई संभावना बनती है? बिहार में ओबीसी एक बड़ा फैक्टर है, जिसे मोदी भाजपा की ओर मोड़ने में सफल हुए हैं। जो ओबीसी कभी राजद और जदयू में बंटा करता था, आज उसका एक बड़ा भाग प्रधानमंत्री मोदी को पिछड़े वर्ग के रहनुमा की तरह देखता है। अब यह 14 नवंबर को जनता ही तय करेगी कि क्या बिहारी अस्मिता जातीय और वर्ग अस्मिताओं पर भारी है?

(लेखक सेंटर फार द स्टडी आफ सोसायटी एंड पालिटिक्स के निदेशक एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

अमेरिका में टकराव का नया दौर

डा. मनीष दाभाड़े

जब भी ट्रंप को कोई वैचारिक विरोधी मिला है, उन्होंने उसे 'दुश्मन' बना कर अपनी स्थिति मजबूत की है

ममदानी पर होंगी पूरी दुनिया की निगाहें • एएफपी

जोहरान ममदानी की न्यूयार्क में मेयर पद पर विजय को अमेरिकी प्रगतिशील राजनीति की एक बड़ी उपलब्धि के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है और इसी कारण पूरी दुनिया में उनकी चर्चा है, परंतु इस विजय के साथ-साथ राष्ट्रपति ट्रंप के साथ उनका जो राजनीतिक टकराव उभर रहा है, वह केवल शहर के शासन के लिए नहीं, बल्कि राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी गहरी हलचल का संकेत देता है। ममदानी ने चुनाव जीतते ही राष्ट्रपति ट्रंप को ललकारते हुए खुद को उनके 'सबसे बड़े दुःस्वप्न' के रूप में पेश किया। इससे वह युवाओं में और लोकप्रिय हो सकते हैं, लेकिन संघीय सत्ता से टकराव की यह रणनीति अंततः न्यूयार्क के लिए आत्मघाती सिद्ध हो सकती है। ममदानी के घोषणापत्र में नीतिगत साहस अवश्य है। उन्होंने मुफ्त सार्वजनिक परिवहन, किराया नियंत्रण, ट्रांसजेंडर अधिकारों की रक्षा करने का वादा किया है, पर इन्हें लागू करने के लिए संघीय सरकार से संसाधनों की आवश्यकता अनिवार्य है। ट्रंप पहले ही सार्वजनिक रूप से ममदानी को 'कम्युनिस्ट' कह चुके हैं और न्यूयार्क शहर को मिलने वाले संघीय फंड को न्यूनतम तक सीमित करने की धमकी दे चुके हैं। यह केवल बयानबाजी नहीं है। ट्रंप का प्रशासन पहले भी डेमोक्रेटिक राज्यों और शहरों के प्रति दंडात्मक रुख अपनाता रहा है। ऐसे में एक ऐसे राष्ट्रपति से सीधी टकराव की नीति अपनाना, जो राजनीतिक प्रतिशोध में संकोच नहीं करता, क्या व्यावहारिक है?

न्यूयार्क की बजट व्यवस्था संघीय अनुदान पर निर्भर है- शिक्षा, आवास, सामाजिक सेवाओं के कई विभागों को अपने कुल बजट का बड़ा हिस्सा वाशिंगटन से प्राप्त होता है। अगर संघीय सरकार सहयोगी नहीं रही तो स्थानीय निकाय की योजनाओं का धरातल पर उतारना असंभव हो सकता है। इस संदर्भ में, अंतरराष्ट्रीय अनुभव भी चेतावनी स्वरूप हैं। बार्सिलोना की पूर्व मेयर अदा कोलाउ ने जब 'नागरिक मंच' और सामाजिक आंदोलन के बूते सत्ता संभाली थी, तब उन्होंने पूंजीवाद के विरुद्ध एक नई नगर प्रशासन की कल्पना की थी, लेकिन राष्ट्रीय सरकार की वित्तीय बाधाओं और यूरोपीय संघ की कठोर नीतियों के आगे उनके अधिकांश वादे अधूरे रह गए। आखिरकार उन्हें जनता ने हटा दिया। लंदन के मेयर सादिक खान ने भी कंजर्वेटिव सरकारों से लगातार टकराव लिया, खासकर सार्वजनिक परिवहन और किराया नियंत्रण जैसे मुद्दों पर, लेकिन वे भी केंद्र सरकार की विधायी सीमाओं से बाहर कुछ कर नहीं सके। परिणामतः उनकी कई नीतियां या तो रुकी रहीं या पूरी तरह लागू नहीं हो सकीं। स्पष्ट है कि नगर राजनीति में वैचारिक ऊर्जा पर्याप्त नहीं होती, प्रशासनिक अधिकार और संसाधन उसकी अनिवार्य शर्तें हैं।

ट्रंप के दृष्टिकोण से देखें तो ममदानी का उभार उन्हें एक नया प्रतीक देता है, जिसके माध्यम से वे डेमोक्रेटिक पार्टी को चरमपंथी के रूप में चित्रित कर सकते हैं। ममदानी के समाजवादी रुख, खुले ट्रांसजेंडर समर्थन और जनकल्याणकारी घोषणाओं को लेकर ट्रंप उन्हें 'शहरी चरम वामपंथी' के रूप में प्रचारित कर रहे हैं। इससे वे अपने रूढ़िवादी ग्रामीण और उपनगरीय आधार को फिर से संगठित कर सकते हैं। यदि ममदानी इस जाल में फंसते हैं और ट्रंप से सार्वजनिक रूप से निरंतर भिड़ते रहते हैं तो इससे ट्रंप को ही लाभ होगा। इतिहास गवाह है कि जब भी ट्रंप को कोई प्रबल वैचारिक विरोधी मिला है, उन्होंने उसे राष्ट्रीय विमर्श में प्रतीकात्मक 'दुश्मन' बना कर अपनी स्थिति मजबूत की है। ट्रंप और उनके प्रवक्ता खुले तौर पर न्यूयार्क को एक 'असफल शहर' कहने लगे हैं। ममदानी के उग्र भाषण और ट्रंप विरोधी प्रतीकों का उपयोग इस ध्रुवीकरण को और भी तेज करेगा। ममदानी को चाहिए कि वे ट्रंप की आलोचना से ज्यादा अपने वैकल्पिक दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित करें। यदि वे ट्रंप के हर बयान पर प्रतिक्रिया देंगे तो उनका प्रशासनिक एजेंडा खो जाएगा। उन्हें यह दिखाना होगा कि वे सिर्फ विरोधी नहीं, बल्कि सक्षम प्रशासक भी हैं। उन्होंने जोश और विचारधारा के संयोग से एक नया मतदाता वर्ग उभारा है, लेकिन यही वर्ग अब उनसे ऐसी योजनाएं चाहता है, जो वास्तव में लागू की जा सकें।

न्यूयार्क की नगर प्रशासनिक मशीनरी को संभालना एक बड़ी चुनौती है। वहां की नौकरशाही, संघीय अनुदानों की जटिलता और न्यायिक प्रक्रियाएं एक आदर्शवादी नेता की परिकल्पनाओं को कसौटी पर कसेंगी। बिना वाशिंगटन के सहयोग से बड़े बुनियादी सुधार करना लगभग असंभव है। राजनीति में प्रतीकों का महत्व अवश्य होता है, लेकिन शहरों को नारे नहीं चलाते, उन्हें चलाती हैं व्यावहारिक नीतियां, वित्तीय अनुशासन और केंद्र-राज्य समन्वय की सूझबूझ। अगर ममदानी प्रशासनिक व्यावहारिकताओं को नजरअंदाज करते हैं और केवल ट्रंप-विरोधी प्रतीक बने रहते हैं तो यह न केवल उनकी विफलता होगी, बल्कि यह पूरे डेमोक्रेटिक आंदोलन को भी नुकसान पहुंचा सकता है। ममदानी को चाहिए कि वे अपनी रणनीति को टकराव के बजाय समाधान की दिशा में मोड़ें। उन्हें शहरी प्रशासन के तौर-तरीकों को गहराई से समझना होगा। वरना वे न तो ट्रंप को टक्कर दे पाएंगे, न ही न्यूयार्क को वह परिवर्तन दे पाएंगे, जिसका उन्होंने वादा किया है।

(लेखक जेएनयू में एसोसिएट प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

सुख का रहस्य

आज का मनुष्य भौतिक रूप से समृद्ध है-महंगे घर, चमचमाती गाड़ियां, विदेशी यात्राएं, आधुनिक जिम और गैजेट्स से सुसज्जित जीवन, परंतु भीतर से वह रिक्त है, असंतुष्ट है। सुविधा के चरम पर खड़ा होकर भी वह शांति और आनंद को खोज रहा है। इसके विपरीत अतीत का मनुष्य सीमित संसाधनों में जीता था, किंतु उसके जीवन में अपनापन, आत्मीयता और सुकून का संगीत था। यही विरोधाभास 'अभाव का आनंद' का रहस्य खोलता है।

अभाव का अर्थ केवल वस्तुओं की कमी नहीं, बल्कि इच्छा की मर्यादा है। जब इच्छाएं सीमित होती हैं, तब संतोष जन्म लेता है। संतोष ही आत्मिक आनंद का द्वार है। महात्मा गांधी ने कहा था, 'पृथ्वी सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है, पर किसी एक की लालच की नहीं।' अभाव के दिनों में इंसान कृतज्ञ रहना सीखता है, हर छोटी चीज के लिए आभार प्रकट करता है और यही भावना उसे आंतरिक सुख देती है। आज का जीवन सुविधा-संपन्न है, पर सरल नहीं। साधनों की अधिकता ने संबंधों की गहराई छीन ली है।

अभाव हमें भीतर झांकने का अवसर देता है। जब बाहरी वस्तुएं नहीं होतीं तो मनुष्य भीतर की संपदा खोजता है-प्रेम, करुणा, ध्यान और आत्मचिंतन। यही आध्यात्मिक दृष्टिकोण है कि अभाव कोई दुख नहीं, बल्कि आत्म-उत्थान की भूमि है। जैसे मिट्टी में बीज दबाया जाता है तो वही अंधकार उसे अंकुरण की शक्ति देता है, वैसे ही अभाव आत्मा को प्रकाश की दिशा में ले जाता है। आज जरूरत है कि हम सुविधाओं के बीच भी 'अभाव का भाव' जिंदा रखें-सादगी, संतोष और आत्मसंयम के रूप में, क्योंकि सुख साधनों से नहीं, दृष्टिकोण से उत्पन्न होता है। अभाव का आनंद वही ले सकता है, जो जीवन को भोग नहीं, योग समझकर जीता है। यही जीवन की सच्ची संपन्नता है-अंदर से समृद्ध होने की कला।

ललित गर्ग

पाठकनामा

pathaknama@pat.jagran.com

फर्जी डिग्री बांटने का खेल

संपादकीय 'फर्जी विश्वविद्यालय' देश में फर्जी शिक्षा संस्थानों की पोल खोलता है। देश में बड़े पैमाने पर खुलेआम फर्जी विश्वविद्यालयों का संचालित होना न केवल आश्चर्यजनक है, बल्कि चिंताजनक भी है। यूजीसी के इतने सख्त नियमों और मानदंडों के बावजूद इन संस्थानों का बदस्तूर संचालित होते रहना दर्शाता है कि ऐसा करने वालों के मन में कानून का कोई खौफ नहीं है और इन संस्थानों के संचालक न केवल विद्यार्थियों के भविष्य के साथ, बल्कि कानून के साथ भी खिलवाड़ करने से नहीं चूक रहे। फर्जी डिग्रीधारी अपनी नकली डिग्री का उपयोग नौकरी पाने, पात्रता परीक्षा में सम्मिलित होने और शासन की विभिन्न योजनाओं का लाभ लेने में करके पात्र अभ्यर्थियों के हक में सेंध लगा रहे हैं। सबसे बड़ी विडंबना यह है कि सबकुछ जानते हुए भी फर्जीवाड़े का यह खेल जारी है। फर्जी संस्थानों के संचालकों के दुस्साहस का पता इस तथ्य से लग जाता है कि 22 फर्जी विश्वविद्यालयों की सूची में से 10 देश की राजधानी दिल्ली में ही हैं, जहां स्वयं केंद्र सरकार, यूजीसी और उच्चतम न्यायालय हैं। क्या कानून, नियम और कायदे केवल नाममात्र के रह गए हैं? क्या यूजीसी, न्यायालय, केंद्र सरकार, राज्य सरकारें इतनी असहाय हो गई हैं कि इन फर्जी संस्थानों पर ताला भी नहीं लगा सकतीं? इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती कि इन संस्थानों से फर्जी डिग्री लेकर निकले व्यक्ति देश का हित करेंगे? देश की शिक्षा व्यवस्था को खोखला बना रही इस अवैध समानांतर शिक्षा व्यवस्था के लिए जितने जिम्मेदार इनके संचालक हैं उतने ही जिम्मेदार वे लोग भी हैं, जो इनका विरोध नहीं करते, इनके खिलाफ कोई ठोस कार्रवाई नहीं करते या इन्हें बंद करने के प्रयास में कोताही बरतते हैं।

mohitsonikukshi@gmail.com

चुनाव में कई कीर्तिमान बने

विधानसभा चुनाव के प्रथम चरण के मतदान में कई कीर्तिमान स्थापित हुए। बिहार चुनाव हिंसा के लिए देशभर में कुख्यात रहा है। इस बार शांतिपूर्ण ढंग से विधानसभा की 121 सीटों पर मतदान संपन्न हो गया। मतदान के दिन बिहार पर पूरे देश की नजर थी, विदेशों में भी इस चुनाव को लेकर दिनभर चर्चा होती रही। चुनाव के पूर्व जिस तरह एक दल दूसरे दलों पर जुबानी हमले कर रहे थे, उससे यही लग रहा था कि चुनाव के दौरान हिंसा होगी, परंतु आशंकाएं निर्मूल साबित हुईं। इस बार मतदान प्रतिशत में भी अद्भुत वृद्धि देखी गई। कहा जा रहा है कि आजादी के बाद पहली बार मतदान प्रतिशत 64.66 का आंकड़ा छू सका। 2020 में पहले चरण में 56.1 प्रतिशत वोटिंग हुई थी, तब पहले चरण में 71 सीटों पर चुनाव हुए थे, जबकि इस बार 121 सीट पर चुनाव हुए हैं। बिहार में मतदान के दिन आश्चर्यजनक तरीके से महिला सशक्तीकरण दिखा। लगभग सभी मतदान केंद्रों पर महिलाओं की लंबी कतारें मतदान समाप्त होने तक देखी गईं।

युगल किशोर राही, छपरा, बिहार

शिक्षा क्षेत्र में अव्यवस्था

संपादकीय आलेख 'फर्जी विश्वविद्यालय' पढ़ा। देश में एक ओर उच्च शिक्षा का तेजी से विकास हो रहा है, तो दूसरी ओर फर्जी विश्वविद्यालय भी अपना जाल फैला रहे हैं। हाल के वर्षों में कई ऐसे संस्थान सामने आए हैं, जो बिना किसी मान्यता, नियम और अकादमिक आधार के विश्वविद्यालय के नाम से डिग्री बांट रहे हैं। यह स्थिति शिक्षा क्षेत्र में अव्यवस्था और अविश्वसनीयता का बड़ा कारण बन चुकी है। फर्जी विश्वविद्यालय लाखों छात्रों के भविष्य के साथ खिलवाड़ कर रहे हैं। फर्जी विश्वविद्यालय अपने को वैध बताने के लिए चमकदार प्रचार करते हैं, भव्य इमारतों के फोटो दिखाते हैं, नाम में 'इंटरनेशनल', 'ग्लोबल', 'नेशनल' जैसे शब्द जोड़ देते हैं और छात्रों को आसान प्रवेश तथा त्वरित डिग्री देने का लालच देते हैं। आर्थिक रूप से कमजोर या ग्रामीण पृष्ठभूमि के छात्र अक्सर इन दावों के झांसे में आ जाते हैं। नियामक तंत्र की ढिलाई, राज्यों के स्तर पर निरीक्षण की कमी और छात्रों तथा अभिभावकों में जागरूकता का अभाव इस समस्या को और गहरा कर रहा है। कई संस्थान कानूनी प्रक्रिया की आड़ लेकर वर्षों तक बिना मान्यता के संचालित रहते हैं, और कार्रवाई होने पर नए नाम से फिर शुरू हो जाते हैं। शिक्षा मंत्रालय द्वारा फर्जी विश्वविद्यालय के विरुद्ध कार्रवाई करने के लिए राज्यों के मुख्य सचिव को पत्र लिखना पर्याप्त नहीं है।

ई हिमांशु शेखर, केसपा, गयाजी

X पोस्ट

पांच साल में किसी व्यक्ति को एक बार ही लोकसभा और विधानसभा चुनाव में वोट डालने की अनुमति दी जानी चाहिए। अमिताभ तिवारी@politicalbaaba

बिहार में पहले जहां चुनावों के दौरान बंदूकें आपस में बात करती थीं, वहां अब शांतिपूर्वक चुनाव हो रहे हैं। बिहार में आया यह परिवर्तन सकारात्मक है। इसके लिए चुनाव आयोग और पूरे प्रशासनिक तंत्र की प्रशंसा करनी होगी। अखिलेश शर्मा@akhileshsharma1

बिहार के पहले चरण के मतदान ने सभी दलों की धड़कनें बढ़ा दी है। बढ़े हुए मतदान प्रतिशत ने किसकी सीटें बढ़ाई है और किसको नुकसान पहुंचाया है, यह देखना दिलचस्प होगा। ऐसा लग रहा है जो भी होगा, प्रचंड होगा। समीर चौगांवकर@semeerc

कुछ दिन पहले एक डंपर ने जयपुर में 14 लोगों की जान ली, उसके ओवरलोड में तीन बार चालान हो चुके हैं और एक बकाया भी है। 2023 में पहला चालान हुआ। इसके बाद से बिना सीज हुए डंपर चल रहा था। आरटीओ, डीटीओ जैसी संस्थाओं में बैठे लोग आखिर कर क्या रहे हैं? अवधेश पारीक@Zinda_Avdhesh

जनपथ

गाकर वंदेमातरम् भरता हममें जोश,
सुनकर वंदेमातरम् कुछ खो देते होश।
कुछ खो देते होश रोष उनको है आता,
जिन्हें न फूटी आंख सुहातीं भारत माता।
धन्य धन्य हम लोग हुए बंकिम को पाकर,
लिखा उन्होंने गीत धन्य हम इसको गाकर!

- ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त

जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प.बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073

E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर वी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 26 अंक 204

https://t.me/AllNewsPapersPaid

कल्पमेधा

क्रोध मस्तिष्क के दीपक को बुझा देता है, इसलिए हमें सबसे नाजुक समय में भी सदैव शांत और स्थिरचित रहना चाहिए।

– इंगरसोल

भागीदारी का लोकतंत्र

बिहार में विधानसभा के लिए हो रहे चुनाव के पहले चरण में गुरुवार को जिस पैमाने पर लोगों ने बढ़-चढ़ कर मतदान किया, उससे साफ है कि राज्य में लोकतंत्र को लेकर एक जरूरी सजगता है और मतदान के लिए लगी लंबी कतारों में उसी की अभिव्यक्ति दिखी। इस बार आंकड़ों के मुताबिक 64.66 फीसद मतदान हुआ, जिसे राज्य में हुए चुनावों में एक कीर्तिमान माना जा रहा है। इससे साबित होता है कि बिहार भले ही कई मानकों पर विकास की दौड़ में पिछड़ गया है, लेकिन वहां आज भी लोगों के भीतर अपने लोकतांत्रिक अधिकारों को लेकर अतिरिक्त जागरूकता है और आखिर यही हक राज्य को विकास की राह पर आगे बढ़ने का सबसे अहम कारक बनेगा। गौरतलब है कि पहले चरण के लिए राज्य के अठारह जिलों के एक सौ इक्कीस विधानसभा क्षेत्रों में मतदान हुआ। बाकी सीटों पर दूसरे चरण में 11 नवंबर को मतदान होगा। नतीजे 14 नवंबर को घोषित होंगे। लेकिन इसकी संभावना जताई जा रही है कि अगले चरण में भी मतदान का यही रुख बना रहेगा।

अब स्वाभाविक ही ऐसे आकलन सामने आने लगे हैं कि क्या लोगों का इतनी भारी संख्या में मतदान के लिए निकलना सत्ता विरोधी रुझान का संकेत हो सकता है। वहीं सत्ताधारी पक्ष का अपना अनुमान है कि मतदाताओं का समर्थन फिर से उन्हें ही मिलेगा। नतीजा चाहे जो हो, लेकिन इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि कई अहम कारकों ने ज्यादा मतदान के लिए अनुकूल परिस्थितियां बनाईं। मसलन, बिहार में चुनाव से पहले जिस तरह मतदाता सूची के गहन पुनरीक्षण की प्रक्रिया चली और बड़ी संख्या में लोगों के नाम बाहर हुए, उसमें मतदाताओं के भीतर अपने आपको सूची में बनाए रखने के लिए अतिरिक्त चिंता पैदा हुई। इसे उन्होंने मतदान में हिस्सा लेकर जाहिर किया। वहीं, राज्य में छठ पर्व की वजह से दूसरे राज्यों से भी लोग भारी तादाद में अपने गांव पहुंचे होंगे और मतदान की तारीख उनकी शहर वापसी से ज्यादा दूर नहीं थी। इसके साथ अलग-अलग दलों की ओर से किए गए वादों और दी गई सुविधाओं का सवाल भी कसौटी पर है। एक ओर, सत्ताधारी राजग की ओर से मुख्यमंत्री महिला रोजगार योजना के तहत दस हजार रुपए महिलाओं के खाते में दिए गए, वहीं इंडिया गठबंधन ने महिलाओं के लिए माई-बहन योजना और हर परिवार को सरकारी नौकरी के अलावा अन्य वादे किए हैं।

आम चुनाव हो या राज्यों में होने वाले विधानसभा चुनाव, यह स्थिति एक समस्या के रूप में देखी गई है कि बहुत सारे मतदाता ऐसे भी होते हैं, जो मतदान के लिए ज्यादा रुचि नहीं दिखाते हैं। ऐसे लोगों को मतदान के लिए प्रेरित करने को लेकर निर्वाचन आयोग को अलग से जागरूकता अभियान चलाना पड़ता है। जबकि किसी भी नागरिक को चुनाव में मतदान को अपनी एक जवाबदेही के रूप में देखना चाहिए। हालांकि यह भी एक पक्ष हो सकता है कि किसी अनिवार्य वजह से कोई व्यक्ति मतदान न कर सके, लेकिन यह एक आम प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिए। बिहार में लोगों के सामने सत्ता और विपक्ष के वादों की कसौटी जरूर है, लेकिन पहले चरण में भारी मतदान एक तरह से चुनावों में लोकतांत्रिक अधिकारों के लिए जरूरी सजगता और भागीदारी का एक अहम उदाहरण है।

सुरक्षा और संवेदना

उच्चतम न्यायालय ने आवारा कुत्तों को लेकर एक बार फिर जो कहा है, वह जन सुरक्षा के लिहाज से अहम है। दरअसल, संस्थागत क्षेत्रों और राजमार्गों से इन्हें हटाने के आदेश को व्यापक परिप्रेक्ष्य में लेने की जरूरत है। इसमें कोई दोराय नहीं कि न केवल राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, बल्कि देशभर में आवारा कुत्तों की समस्या गंभीर है। इस संबंध में मीडिया रपटों को अदालत ने कुछ समय पहले संज्ञान में लिया था। तब अदालत ने स्पष्ट कर दिया था कि लोगों की सुरक्षा से कोई समझौता नहीं किया जाएगा। इस बार भी अदालत ने अपने आदेश में जन सुरक्षा को केंद्र में रखा है। गौरतलब है कि शीर्ष अदालत की विशेष पीठ ने शुक्रवार को आवारा कुत्तों के मामले में कई बातें कहीं। अदालत ने शैक्षणिक केंद्रों, अस्पतालों, रेलवे स्टेशनों और बस अड्डों जैसे संस्थागत क्षेत्रों में कुत्तों के काटे जाने की बढ़ती घटनाओं को संज्ञान में लिया है। इस बार अधिकारियों को सचेत किया गया है। न्यायालय ने भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण सहित सभी प्राधिकारियों को आदेश दिया है कि राजमार्गों से आवारा कुत्तों और अन्य मवेशियों को हटा कर निर्दिष्ट आश्रय स्थलों में ले जाया जाए। राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को स्थानीय नगर निकायों के माध्यम से ऐसे संस्थागत क्षेत्रों की पहचान करनी होगी जहां आवारा कुत्ते पाए जाते हैं।

मनुष्य और पशु के बीच लगातार जटिल होते इस मसले पर अदालत ने सख्त रुख दिखाया है। आवारा कुत्तों का प्रबंधन, सुरक्षा और स्वास्थ्य उसकी प्राथमिकता में हैं। सवाल है कि गंभीर होती गई इस समस्या के लिए कौन जिम्मेदार है? यह कहना गलत न होगा कि पशु जन्म नियंत्रण नियमों को गंभीरता से लिया गया होता, तो आवारा कुत्तों की संख्या बेतहाशा नहीं बढ़ती और न ही उन्हें सड़कों से उठाने की नौबत आती। हालांकि पिछली बार अदालत ने अपने संशोधित आदेश में कुत्तों के बंध्याकरण और टीकाकरण के बाद उन्हें उसी जगह छोड़ने का निर्देश दिया था। मगर इस बार का आदेश स्पष्ट है। अब अधिकारियों को राजमार्गों और संस्थागत क्षेत्रों से आवारा कुत्तों और अन्य जानवरों को हटाना होगा। उन्हें दोबारा उसी जगह नहीं छोड़ा जा सकेगा। अदालत ने दरअसल मानवीय संवेदना और जन सुरक्षा के सवालों के बीच एक संतुलन के तकाजे पर जोर दिया है।

सेहत के नाम पर मुनाफे का कारोबार

'ओआरएस' के नाम पर बिक रहे पेय पदार्थों के मामले सामने आने की घटनाओं ने दवा उद्योग के गैर जिम्मेदाराना रवैए को उजागर किया है। ऐसे पेय पदार्थों को इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि आमजन उन्हें असली 'ओआरएस' का विकल्प मान लते हैं।

ज्ञान चंद पाटनी

राजस्थान और मध्य प्रदेश में पिछले दिनों खांसी की दवा से बच्चों की मौत ने देश के दवा उद्योग में लापरवाही और मनमानी की तरफ सबका ध्यान आकर्षित किया था। इसके अलावा 'ओआरएस' के नाम पर बिक रहे पेय पदार्थों और दूसरे उत्पादों से जुड़े मामले सामने आने की घटनाओं ने इस बात को और पुख्ता किया है। जयपुर में दवा एवं खाद्य सुरक्षा विभाग ने शहर की कई दवा दुकानों पर छापेमारी कर बड़ी संख्या में ऐसे पेय पदार्थ (एनर्जी ड्रिंक) जब्त किए, जो ओआरएस से मिलते-जुलते नामों से बाजार में बेचे जा रहे थे। इस तरह के पेय पदार्थ देश के अन्य हिस्सों में भी बेचे जा रहे हैं, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता। पहली नजर में यह मामूली बात लग सकती है, परंतु असल में यह मामला झूठे दावे, मुनाफाखोरी और लोगों की सेहत के साथ खिलवाड़ से जुड़ा है।

ये पेय पदार्थ इस तरह प्रस्तुत किए जाते हैं कि आमजन यह मान लें कि ये उल्टी, दस्त या शरीर में पानी की कमी होने जैसी स्थिति में उपयोग किए जाने वाले असली ओआरएस का विकल्प हैं। हकीकत यह है कि ये उत्पाद सिर्फ सुगंधित पेय हैं, जिनमें सोडियम, पोटेशियम या ग्लूकोज जैसे आवश्यक तत्त्व नहीं होते हैं। संबंधित कंपनियां अपने मुनाफे के लालच में न केवल उपभोक्ताओं की जेब ढीली कर रही हैं, बल्कि उनके स्वास्थ्य को भी खतरे में डाल रही हैं। भारत में पांच वर्ष से कम उम्र के बच्चों में अतिसार मृत्यु का तीसरा सबसे बड़ा कारण है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित ओआरएस का घोल शरीर से खोए पानी और इलेक्ट्रोलाइट्स की भरपाई करता है तथा गंभीर स्थितियों में जीवनरक्षक सिद्ध होता है। यदि ओआरएस के नाम पर किसी व्यक्ति को सिर्फ मीठा सुगंधित पेय पदार्थ दे दिया जाए, तो उसका परिणाम घातक हो सकता है। इससे न केवल शरीर में पानी की कमी की समस्या और बढ़ सकती है, बल्कि छोटे बच्चों में यह जानलेवा भी साबित हो सकता है।

ऐसे मामलों को लेकर बाल रोग विशेषज्ञ डाक्टर शिवरंजनी संतोष ने आठ वर्ष तक लगातार संघर्ष किया। उन्होंने भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआइ) का ध्यान इस गंभीर विषय की ओर आकर्षित किया कि किस तरह कुछ कंपनियां अपने उच्च शर्करा युक्त पेय पदार्थों को ओआरएस के नाम से बेचकर उपभोक्ताओं को भ्रमित कर रही हैं। इन उत्पादों में विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा तय मानकों के अनुसार इलेक्ट्रोलाइट्स नहीं होते और चीनी की मात्रा अत्यधिक होती है। इन्हीं प्रयासों का परिणाम था कि एफएसएसएआइ ने 14 अक्तूबर 2025 को आदेश जारी करके 'ओआरएस' शब्द के गलत इस्तेमाल पर रोक लगा दी।

एफएसएसएआइ का यह कदम जनस्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यंत आवश्यक था। यह स्पष्ट किया गया कि केवल वही उत्पाद ओआरएस कहलाएंगे, जो विश्व स्वास्थ्य संगठन के दिशा-निर्देशों के अनुरूप हों। अन्य किसी भी पेय पदार्थ या उत्पाद को अपने नाम या लेबल में 'ओआरएस' शब्द का प्रयोग करने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

यह निर्णय जनता की सुरक्षा के दृष्टिकोण से सराहनीय है, मगर इस कदम का व्यावसायिक जगत में भारी विरोध भी हुआ। एक विदेशी कंपनी की भारतीय इकाई ने इस निर्णय के खिलाफ दिल्ली हाई कोर्ट में याचिका दायर की। कंपनी का तर्क था कि पहले उन्हें इस तरह के उत्पाद बेचने की अनुमति दी गई थी और उन्होंने उसी के आधार पर बड़े पैमाने पर उत्पादन किया है। अगर अचानक इसकी बिक्री पर रोक लगा दी जाती है, तो कंपनी को करीब करोड़ों रुपए का नुकसान होगा। अदालत ने कंपनी के पक्ष को सुनने की आवश्यकता मानते हुए एफएसएसएआइ के आदेश पर अंतरिम रोक लगा दी।

> **यह समझना आवश्यक है कि ओआरएस के नाम पर बेचे जा रहे पेय पदार्थों की समस्या केवल कानूनी नहीं, बल्कि नैतिक भी है। कंपनियों को यह भली-भांति ज्ञात है कि आम उपभोक्ता उत्पादों पर लिखी सूक्ष्म जानकारी नहीं पढ़ता। जब किसी उत्पाद का नाम ओआरएस से मिलता-जुलता होता है, तो उपभोक्ता स्वाभाविक रूप से उसे विकल्प मान लेता है। इससे न केवल भ्रम पैदा होता है, बल्कि सामाजिक जिम्मेदारी और व्यावसायिक पारदर्शिता पर भी प्रश्नचिह्न लग जाता है। जब कोई उत्पाद स्वास्थ्य से जुड़ा होता है, तब उसमें थोड़ी-सी लापरवाही भी घातक साबित हो सकती है।**

यहां यह समझना आवश्यक है कि ऐसे पेय पदार्थों की समस्या केवल कानूनी नहीं, बल्कि नैतिक भी है। कंपनियों को यह भली-भांति ज्ञात है कि आम उपभोक्ता उत्पादों पर लिखी सूक्ष्म जानकारी नहीं पढ़ता। जब किसी उत्पाद का नाम ओआरएस से मिलता-जुलता होता है, तो उपभोक्ता स्वाभाविक रूप से उसे ओआरएस का विकल्प मान लेता है। इससे न केवल भ्रम पैदा होता है, बल्कि सामाजिक जिम्मेदारी और व्यावसायिक पारदर्शिता पर भी प्रश्नचिह्न लग जाता है।

जब कोई उत्पाद स्वास्थ्य से जुड़ा होता है, तब उसमें थोड़ी सी लापरवाही भी घातक साबित हो सकती है। खासकर बच्चों और बुजुर्गों के लिए यह अत्यंत संवेदनशील मामला है। यह स्थिति इस बात का प्रमाण है कि उपभोक्ता जागरूकता और नियामक कार्रवाइयों का समन्वय होना कितना जरूरी है।

यदि इस मामले को व्यापक नजरिए से देखा जाए तो यह केवल ओआरएस तक सीमित नहीं है। यह मामला हमारे खाद्य और औषधि प्रणाली के उस पक्ष को भी उजागर करता है, जहां व्यावसायिक हित अक्सर जनता के हित पर भारी पड़ जाते हैं। आजादी के इतने वर्षों बाद भी भारत में स्वास्थ्य सेवाएं सभी लोगों तक नहीं पहुंच पा रहीं। इस स्थिति में जनता के विश्वास के साथ खिलवाड़ किसी भी सूरत में स्वीकार्य नहीं हो सकता। यह जरूरी है कि कानून, न्यायपालिका और नियामक संस्थाएं सभी मिलकर इस तरह के मामलों में त्वरित और निर्णायक कार्रवाई करें। साथ ही आम लोगों में जागरूकता और प्रतिबद्धता भी बड़ा परिवर्तन ला सकती है। अब जरूरत है कि इस तरह की पहल को ठोस कानूनों और सख्त प्रवर्तन के माध्यम से आगे बढ़ाया जाए, ताकि किसी को भी झूठे प्रचार के जरिए मुनाफाखोरी का अवसर न मिले। एफएसएसएआइ ने स्पष्ट कहा है कि अदालत में मामला निपटने के बाद ऐसे सभी उत्पादों पर प्रतिबंध लागू किया जाएगा और उन्हें बाजार से हटाया जाएगा। यह संदेश न केवल संबंधित कंपनियों के लिए चेतावनी है, बल्कि उपभोक्ताओं के लिए भी एक सबक है कि उन्हें अपनी सेहत से जुड़ी हर चीज के बारे में जानकारी रखनी चाहिए। किसी भी उत्पाद को खरीदने से पहले उसके घटकों और निर्माता के बारे में जानकारी जरूर हासिल कर लेनी चाहिए।

अंततः यह सवाल उठता है कि क्या भारत में नियामक प्रक्रियाएं पर्याप्त रूप से प्रभावी हैं? क्या उपभोक्ता कानूनों का पालन सख्ती से हो रहा है? यदि नहीं, तो यह समय है कि सरकार, अदालत और समाज तीनों मिलकर जवाबदेही तय करें। जब तक उपभोक्ताओं का विश्वास बहाल नहीं होता, तब तक किसी भी तरह का सुधार अधूरा रहेगा। इस मामले से स्पष्ट संदेश है कि मुनाफाखोरी और उपभोक्ता सुरक्षा एक साथ नहीं चल सकते। बाजार की स्वतंत्रता आवश्यक है, मगर वह स्वतंत्रता तब तक ही सार्थक है, जब तक वह समाज और स्वास्थ्य के लिए खतरा न बने। झूठे दावों, अधूरी जानकारी और भ्रम उत्पन्न करने वाला प्रचार करने जैसी प्रवृत्तियों को सख्ती से रोका जाना चाहिए। कंपनियां अपनी सामाजिक जिम्मेदारी को समझें और सरकार उन्हें उसके लिए जवाबदेह बनाए। उपभोक्ताओं के विश्वास और स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ कर लाभ कमाने की कतई छूट नहीं दी जानी चाहिए। अगर सामाजिक दायित्व और नैतिकता को दरकिनार कर मुनाफे पर ही ध्यान केंद्रित किया जाएगा, तो वह निश्चित रूप से घातक साबित होगा।

दुनिया मेरे आगे

सम्मान की गरिमा

चंदन कुमार चौधरी

उम्मीद लेकर हमारे पास मुस्कुराते हुए पहुंचे किसी कनिष्ठ कहे-माने जाने वाले व्यक्ति से बातचीत शुरू हो और उसे शुरुआत में ही डांट-फटकार की भाषा या सख्त लहजे में कुछ कहा जाए, तो इसका सामान्य असर क्या पड़ता है? आमतौर पर होगा यही कि उस कनिष्ठ व्यक्ति का उत्साह मंद हो जाएगा और उसके चेहरे से मुस्कुराहट जाती रहेगी। उसके बाद वह बातचीत तो करेगा, लेकिन हमें वरिष्ठ मानते हुए एकतरफा तौर पर वह हमारी बात को ध्यानपूर्वक सुनेगा। इसे एक मामूली-सा उदाहरण कहा जा सकता है, लेकिन व्यवहार में इसका महत्त्व बड़ा होता है। इस तरह के असामान्य व्यवहार से किसी के कोमल मन को गहरा दुख पहुंच सकता है। वह यह सोचने पर मजबूर हो सकता है कि सामने वाला यह बात सामान्य तरीके से भी तो कह सकता था! पता नहीं, किस कारण से उसने ऐसा किया!

छोटा हो या बड़ा, हर किसी की यह दिली ख्वाहिश होती है कि उसके साथ सम्मानजनक तरीके से बातचीत की जाए। ऐसी इच्छा रखने वाले लोग समाज में हर जगह होते हैं। चाहे घर हो या कार्यालय, सफर में हों या रेस्तरां में। एक छोटी-सी इच्छा यही रहती है कि उसे प्यार मिले, सम्मान मिले, लेकिन इसके उलट उसके साथ दुर्व्यवहार करने वाले लोग यह भूल जाते हैं कि अगर उनके साथ भी कोई दूसरा व्यक्ति ऐसा ही करे, तब उन्हें कैसा महसूस होगा। अगर कोई कनिष्ठ व्यक्ति सम्मान और प्यार की भूख रखता है, तो वरिष्ठ माने जाने वाले लोगों की तो यह स्वाभाविक इच्छा होगी?

दरअसल, सम्मान पाने की इच्छा रखने की बात सोचना कोई बुरी बात नहीं होती। अगर कोई व्यक्ति ऐसा सोचता है तो यह एक स्वाभाविक लालसा है। मगर हम सामने वाले को सम्मान नहीं दे पा रहे हैं और चाहते हैं कि हमें सम्मान मिलता रहे तो यह संभव नहीं हो पाता। एकतरफा कुछ भी लंबा नहीं चलता। अगर हम ऊंचे पद पर बैठे हों, तो डरा-धमका कर या किसी की मजबूरी का फायदा उठा कर सामने वाले व्यक्ति से सम्मान पाते हुए दिख भी जाएं, लेकिन यह दिखावे से ज्यादा कुछ नहीं होता। यह स्थायी भी नहीं होता। जिस दिन हमारा यह पद जाएगा, सामने वाला व्यक्ति हमारा सम्मान करना बंद कर देगा। शायद इसलिए कहा जाता है कि हम इज्जत कमा सकते हैं, लेकिन किसी से छीन नहीं सकते हैं।

यों भी, इज्जत कमाना कोई आसान काम नहीं होता। इसके लिए अपने अहंकार को दरकिनार करना पड़ता है। मन को उदार बनाना पड़ता है। संकुचित सोच से दूर होना पड़ता है। अपनी अवधारणाओं पर विचार करना और जरूरी होने पर उसे तोड़ना पड़ता है। ये सब बातें व्यक्ति के भीतर तभी आ पाती हैं, जब उसके माता-पिता ने उसे इस तरह के संस्कार दिए हों या उसने अभ्यास कर खुद को इस तरह का बनाया हो। जो व्यक्ति ऐसा नहीं कर पाता है, उसे सामने वालों से ढेरों शिकायतें रहती हैं। उसे लगता है कि मुझे वह नहीं मिल पा रहा है, जो मुझे मिलना चाहिए। हालांकि इस तरह सोचते समय वह यह ध्यान में नहीं रखता है कि वह खुद भी किसी के साथ उचित व्यवहार नहीं कर रहा है। वह अधिकार की बात तो सोचता है, लेकिन यह भूल जाता है कि उसके कुछ कर्तव्य भी हैं। अगर हम अपने कर्तव्य को पूरा न करें और अधिकार की ही बातें करते रहें, तो यह बेमानी हो जाता है।

कई बार देखा जाता है कि लोग हमेशा समाज, कार्यस्थल, परिवार, कुटुंब या जीवन में कहीं भी ऐसे व्यक्ति को याद करते हैं, जो सद्व्यवहार वाले हों। भले ही उस व्यक्ति से किसी के हितों की पूर्ति हो पा रही हो या नहीं। वे उसके गुणों को सराहते हैं। ऐसे व्यक्ति जब संसार से चले जाते हैं या दोनों के बीच स्थान की भी दूरी हो जाती है, तब भी वे उसे याद करते हैं। सम्मान देने वाले को व्यक्ति अपने सुख और दुख, सब तरह की बात आसानी से बता देते हैं। यहां तक कि मालिक और नौकर के बीच में भी एक दूसरे को बराबर सम्मान देने की स्थिति होती है, तो बेहतर संबंध बन जाता है और कई बार उनका रिश्ता पिता-पुत्र की तरह का हो जाता है। दूसरी ओर, दुर्व्यवहार करने वाले व्यक्ति केवल आलोचना के ही पात्र होते हैं। उन्हें मन से कोई पसंद नहीं करता है।

> **लोग हमेशा समाज, कार्यस्थल, परिवार, कुटुंब या जीवन में कहीं भी ऐसे व्यक्ति को याद करते हैं, जो सद्व्यवहार वाले हों। भले ही उस व्यक्ति से किसी के हित की पूर्ति हो पा रही हो या नहीं। वे उसके गुणों को सराहते हैं। ऐसे व्यक्ति जब संसार से चले जाते हैं या दोनों के बीच स्थान की भी दूरी हो जाती है, तब भी लोग उसे याद करते हैं।**

शिक्षक, माता-पिता, वरिष्ठ जन और समाज के गणमान्य व्यक्ति हमेशा यह कहते पाए जाते हैं कि सम्मान देने से सम्मान मिलता है। अगर किसी को कुछ दे नहीं सकते हो, तो कम से कम सम्मान तो दे ही दिया जाए। इसमें कुछ लगता नहीं है। सिर्फ दो मीठे बोल काफी होते हैं। और अगर इतना भी नहीं कर सकते हैं, तो कम से कम किसी के साथ दुर्व्यवहार तो नहीं ही करना चाहिए, उसके मन को कष्ट नहीं पहुंचाना चाहिए या उसका अपमान नहीं करना चाहिए। मनुष्य के भीतर एक मन होता है जो बहुत कोमल होता है। उसे सुख-दुख और अच्छाई-बुराई का अनुभव होता है। किसी व्यक्ति को दुख पहुंचाने से किसी को कोई लाभ मिलता हो, ऐसा नहीं है। मगर कुछ लोगों के अहं की कैद इतनी प्रबल होती है कि वर्चस्व के मानस में जीते हुए वे इस सवाल पर सोचते भी नहीं। अगर हम किसी को सम्मान देते हैं, तो बदले में हमें सम्मान मिलता है। ऐसा करना कोई बहुत मुश्किल काम नहीं है।

चौपाल

भगदड़ की जड़

'हादसों का सिलसिला' (संपादकीय, 3 नवंबर) पढ़ा। दरअसल, इस भगदड़ में श्रद्धालुओं की मौत ने एक बार फिर यह सवाल खड़ा कर दिया है कि आखिर हम ऐसी घटनाओं से सबक क्यों नहीं ले रहे हैं। यह हादसा भीड़ प्रबंधन की विफलता का ताजा उदाहरण है। बताया गया कि मंदिर में प्रवेश और निकास का रास्ता संकरा था, जिससे भीड़ का दबाव बढ़ा। ऐसी घटनाएं नई नहीं हैं। हर साल देश के किसी न किसी हिस्से से धार्मिक स्थलों पर भगदड़ की खबरें आती रहती हैं। पिछले कुछ वर्षों में ही उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में इस तरह के हादसे सैकड़ों जिंदगियां निगल चुके हैं। हर बार दुख जताने के बयान आते हैं, जांच समितियां बनती हैं, लेकिन कुछ समय बाद सब भुला दिया जाता है। न तो प्रशासनिक स्तर पर स्थायी समाधान खोजा जाता है और न ही श्रद्धालु खुद भीड़ के समय संयम बरतते हैं। स्पष्ट है कि ऐसी घटनाओं की रोकथाम के लिए केवल अफसोस जताना पर्याप्त नहीं है। प्रशासन को हर बड़े धार्मिक स्थल पर भीड़ प्रबंधन की वैज्ञानिक व्यवस्था लागू करनी होगी।

– विभूति बुपक्या, दिल्ली

परोपकार का दिखावा

हमारा समाज धीरे-धीरे उस दौर में प्रवेश कर चुका है जहां सम्मान की परिभाषा कर्म से नहीं, कुशल प्रदर्शन से तय होती है। कोई व्यक्ति यदि समाजसेवा के नाम पर कुछ राशि दान कर दे, तो उसे माला पहनाई जाती है, मंच पर बैठाया जाता है और फोटो खिंचवा कर 'मानवता' का प्रतीक घोषित कर दिया जाता है। लेकिन वही व्यक्ति यदि बिना प्रचार के किसी जरूरतमंद की सहायता करे, तो उस पर न कोई रोशनी पड़ती है, न तालियां बजती हैं। दरअसल, हम कर्म से अधिक दिखावे को महत्त्व देने लगे हैं। आज की दुनिया में परोपकार भी 'ब्रांडिंग' का हिस्सा बन गया है। बड़ी संस्थाएं इस प्रवृत्ति को न केवल स्वीकार कर चुकी हैं, बल्कि उसे बढ़ावा भी दे रही हैं। सम्मान अब 'पैकेज' के रूप में मिलता है। दान कीजिए, बदले में सम्मानपत्र पाइए। यह विडंबना है कि समाज ने दान और विज्ञापन के बीच की रेखा को मिटा दिया है। जब सम्मान खरीदा जाने लगे, तो नैतिकता की आत्मा घायल हो जाती है।

– पारस मल बोस, बाड़मेर

असुरक्षा का दायरा

जब इस दुनिया में, राष्ट्रपति पद पर आसीन कोई महिला अगर खुद को सुरक्षित नहीं पा रही हैं, तो फिर इस पुरुष प्रधान समाज में, सामान्य महिलाएं कैसे सुरक्षित रह पाएंगी? मेक्सिको की राष्ट्रपति क्लाडिया शीनबाम के साथ हुई इस तरह की घटना हैरान करने वाली है। शीनबाम ने बाद में प्रेस कांफ्रेंस में कहा कि यह कुछ ऐसा है जो मैंने एक महिला के तौर पर अनुभव किया है, लेकिन यह कुछ ऐसा है जो हमारे देश की सभी महिलाओं का अनुभव है। दरअसल, यह सिर्फ एक देश की बात नहीं है। कमोबेश दुनिया के कई देशों की यही तस्वीर है। 'यूनाइटेड नेशंस इंटरनेशनल चिल्ड्रंस इमरजंसी फंड' के एक प्रतिवेदन के अनुसार, आज करीब 37 करोड़ से अधिक लड़कियों और महिलाओं ने या आठ में से एक ने 18 साल की उम्र से पहले यौन हिंसा का सामना किया है। मानव तस्करी के सभी शिकार लोगों में 51 फीसद औरतें हैं, और हर चार बच्चों में से तीन लड़कियां होती हैं।

– जंग बहादुर सिंह, गोलपहाड़ी, जमशेदपुर

विचित्र खामोशी

'सख्ती की सीमा' (संपादकीय, 5 नवंबर) पढ़ा। ऐसा लग रहा है कि चुनाव आचार संहिता पुराने समय की बात हो गई है। हालांकि किसी भी राज्य में चुनाव की घोषणा होने के बाद आचार संहिता लागू हो जाती है और सारी प्रशासनिक शक्तियां चुनाव आयोग के अधिकार क्षेत्र में समाहित हो जाती हैं। आचार संहिता लागू होने के बाद चुनाव आयोग से राजनीतिक दल बहुत खौफ खाते हैं। विभिन्न स्थानों पर कड़ी जांच शुरू हो जाती है और शराब तथा नकदी पर खास तौर से नजर रखी जाती है। हालांकि यह टीएन शेषन का जमाना नहीं है, लेकिन फिर भी देश में चुनाव आयोग का अस्तित्व तो है। बिहार में मतदाताओं को लुभाने के लिए आचार संहिता का उल्लंघन किया गया। तमाम तरह की लोकलुभावन योजनाओं की घोषणा हुई। चुनाव प्रचार में राजनेताओं की भाषा भी पूरी तरह असंयमित रही। मगर चुनाव आयोग खामोश है।

– इशरत अली कादरी, भोपाल

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

अभिमत

पुस्तकालय एक ऐसी खिड़की है, जिसमें चारों तरफ से ताजी हवा आती है। देश-दुनिया से जुड़ते हैं। हमारी परिधि भी बड़ी होती जाती है। एकलव्य संस्था ने भी पुस्तकालय को बढ़ावा दिया है। हमारे कस्बे पिपरिया में भी एकलव्य का एक पुस्तकालय है। एक समय तो इस पुस्तकालय में काफी भीड़ होती थी। इस पुस्तकालय में सिर्फ किताबें ही नहीं है, बल्कि यह एक गतिविधि केन्द्र है। बच्चे यहां आते हैं और अलग-अलग तरह की गतिविधियों में हिस्सा लेते हैं। विचार व साहित्यिक गोष्ठियां भी होती हैं।

रचनात्मकता की मिसाल है लायब्रेरी

नवाचार

■ बाबा मायाराम

मध्यप्रदेश के हरदा शहर में एक सचल पुस्तकालय है, जो गरीब बस्तियों में चलता है। हालांकि यह बहुत छोटी पहल है, पर कई सालों से चल रही है। मैं इसे देखने के लिए दो-तीन बार गया हूं। आज इस लायब्रेरी की कहानी बताना चाहूंगा।

किताबों से मेरा जुड़ाव लायब्रेरी के माध्यम से ही हुआ। हमारे गांव में स्थित स्वयंसेवी संस्था किशोर भारती में भी बहुत ही अच्छी लायब्रेरी थी। वहीं मैंने किताबों को उलटना-पलटना सीखा। वहीं किताबों की दुनिया से जुड़ा। इसके बाद इन्दौर नई दुनिया में जब मैंने काम शुरू किया, तो वहां भी समृद्ध लायब्रेरी थी।

इसके बाद मैंने जब देशबन्धु रायपुर में काम शुरू किया, तब वहां भी बहुत अच्छी लायब्रेरी थी। पुस्तकालय एक ऐसी खिड़की है, जिसमें चारों तरफ से ताजी हवा आती है। देश-दुनिया से जुड़ते हैं। हमारी परिधि भी बड़ी होती जाती है।

एकलव्य संस्था ने भी पुस्तकालय को बढ़ावा दिया है। हमारे कस्बे पिपरिया में भी एकलव्य का एक पुस्तकालय है। एक समय तो इस पुस्तकालय में काफी भीड़ होती थी। इस पुस्तकालय में सिर्फ किताबें ही नहीं है, बल्कि यह एक गतिविधि केन्द्र है। बच्चे यहां आते हैं और अलग-अलग तरह की गतिविधियों में हिस्सा लेते हैं। विचार व साहित्यिक गोष्ठियां भी होती हैं।

किताबों के बारे में कहा जाता है कि वे बहुत अच्छी दोस्त होती हैं। और एक ही किताब को दो लोग पढ़ते हैं, बातें करते हैं, तो उनमें भी दोस्ती हो जाती है। किताबों की दुनिया अलग होती है, वे हमें प्रेरणा देती हैं। अच्छा साहित्य हमें जीने की राह भी बताता है।

हरदा की लायब्रेरी का नाम है- चहक। लायब्रेरी के इस मिशन में एक छोटी सी टीम है। जिनमें दो शिक्षिकाएं शोभा वाजपेयी और सुनीता जैन। पूर्व नगरपालिका अध्यक्ष व सामाजिक कार्यकर्ता हेमंत टाले और हरदा डाइट में पदस्थ व्याख्याता मनोज जैन। शोभा वाजपेयी, अब सेवानिवृत्त शिक्षिका हैं। शोभा वाजपेयी ने लायब्रेरी के इस काम में इंजन का काम किया। जब रेलगाड़ी में इंजन लग जाता है, तो डिब्बे जुड़ते जाते हैं। अब उनकी टीम में बस्तियों के महिलाएं और छात्राएं भी जुड़ गई हैं।

वर्ष 2013 में चहक की शुरूआत हुई। किताबें एकत्र करना शुरू किया। कुछ एकलव्य संस्था से, कुछ दोस्तों से, कुछ अपने घर से किताबें एकत्र कीं और कुछ किताबें खरीदी भी। किताबों की पहचान के लिए उन पर लगाने के लिए 'चहक' की सील बनवाई गई , बच्चों के बैठने के लिए दरी खरीदी गई। अब तक यह लायब्रेरी चार बस्तियों में फैल चुकी है।

शोभा वाजपेयी बताती हैं कि 'बाइक पर किताबों का झोला लिए मैं निकलती तो उधर अपनी गाड़ी से हमारी मित्र मंडली इमलीपुरा पहुंचती। कभी दरी पर बैठ कर तो कभी आस-पास से कुर्सी मांग कर तो कभी खड़े-खड़े बाइक से सहारा लेकर ही हम लोग किताबें बांटते। खड़े रहने की स्थिति तब बनती जब उन घरों में कोई नहीं होता या कुछ खास कार्यक्रमों से गहमा-गहमी रहती।

वे आगे बताती हैं कि 'मैं और सुनीता बच्चों को व्यवस्थित कर किताबें बांटते, हेमन्त भाई उनके साथ कुछ खेलकूद या गपशप करते और जैन सर किताबों पर बातचीत, फोटो वगैरह लेने आदि में व्यस्त रहते। एक-दो बार चित्रकला का आयोजन हुआ तो उसके बाद बच्चे हमसे कागज़ ले जाते और चित्र बनाकर लाते, इन चित्रों को जमा करना भी साथियों का एक काम हो गया।'

यहां सिर्फ स्कूल की तरह सब कुछ शब्दों से ही नहीं सिखाया जाता बल्कि चित्रकला, हाव-भाव के साथ कविता सुनाना, खेल-कूद करवाना और कहानी-कविता का नाट्य रूपांतरण आदि गतिविधियां भी होती हैं। यह लायब्रेरी के साथ गतिविधि केन्द्र भी है।

यह सही है कि बच्चों में किताबों को पढ़ने की रूचि उनकी स्कूली किताबें पढ़ने तक सीमित हो गई है। किताबें समय मांगती हैं। लेकिन किताबों की दुनिया अलग है। जब बच्चे यहां रंग-बिरंगे चित्रों वाली किताबें पढ़ते हैं। कहानी और कविता पढ़ते हैं, उनके हाव-भाव देखते ही बनते हैं। दिल उछल जाता है। वे कहानी और कविताओं के माध्यम से एक अलग दुनिया की सैर करते दिखते हैं।

लेकिन डिजीटल व सोशल मीडिया एकतरफा है। इसकी सीमाएं हैं, कुछ देशों में इसे सीमित व नियंत्रित इस्तेमाल पर जोर दिया जा रहा है, जिससे नई पीढ़ी पर इसका प्रतिकूल असर न हो।

इस छोटे कस्बे में जहां बस्तियों में सार्वजनिक स्थान नहीं है, वहां मिलने-जुलने और विचारों के आदान-प्रदान का मंच है। यहां बैठकर विभिन्न विषयों पर बात करते हैं। देश-दुनिया व ज्ञान-विज्ञान की दुनिया से रू ब रू होते हैं। वे अपने सवालों के जवाब खोजते हैं।

इस पहल में एक नया आयाम तब जुड़ा तब एक और शिक्षिका ने इन बच्चों के लिए नए-नए कपड़े सिलकर देना शुरू कर दिया। और यह भी जन सहयोग से ही। अपने और आस-पास के घरों में जो नए कपड़े हैं और जो इस्तेमाल नहीं में आ रहे हैं, उन्हें एकत्र कर बच्चों के लिए खासकर लड़कियों के लिए कपड़े फ्रॉक, स्कर्ट, टॉप आदि बनवाना और बच्चों में बांटना। वे सालों से ऐसा कर रही हैं, लेकिन अब लायब्रेरी के बच्चों के लिए भी कपड़े सिलकर देती हैं।

आजकल का मकसद कैरियर बनाना हो गया है। बच्चे कैरियर के बारे में सोचते हैं लेकिन इस व्यवस्था में कैरियर बनाना मुश्किल है। बच्चों व युवाओं की सारी शक्ति इसमें ही लग जाती है। कैरियर के चक्कर कांशियस (चेतना) भी खत्म हो जाती है। कैरियर कुछ का बनता है। कई इस दौड़ से बाहर हो जाते हैं।

फिलट्रेट शिक्षा व्यवस्था सबको सब कुछ नहीं दे सकती है। इसमें कुछ का भाग्य चमक सकता है। हमें शिक्षा के सही मायने समझने होंगे। शिक्षा से दिमाग रोशन होता है। एक अच्छा इंसान बनता है। इस ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

कुल मिलाकर, इस पूरी पहल से बच्चे एक-दूसरे से सीख रहे हैं, किताबों की दुनिया से परिचित हो रहे हैं, चित्र बनाना सीख रहे हैं, उनमें रंग भर रहे हैं, पढ़ना-लिखना सीख रहे हैं, बच्चों में पढ़ने के प्रति रूचि बढ़ी है और लायब्रेरी के रूप में ऐसा स्थान उपलब्ध हुआ है जहां वे एक साथ बैठ सकते हैं, खेल सकते हैं, कुछ सृजन कर सकते हैं। कभी-कभी किताबों पर भी चर्चा कर सकते हैं। ऐसा स्थान लायब्रेरी के पहले उपलब्ध नहीं था। यही इस लायब्रेरी की उपयोगिता है। यह सराहनीय होने के साथ-साथ अनुकरणीय पहल भी है।

इस पूरी पहल से बच्चे एक-दूसरे से सीख रहे हैं, किताबों की दुनिया से परिचित हो रहेहैं, चित्र बनाना सीख रहे हैं, उनमें रंग भर रहे हैं, पढ़ना-लिखना सीख रहेहैं, बच्चों में पढ़ने के प्रति रूचि बढ़ी है और लायब्रेरी के रूप में ऐसा स्थान उपलब्ध हुआ है जहां वे एक साथ बैठ सकते हैं, खेल सकते हैं, कुछ सृजन कर सकतेहैं।कभी-कभी किताबों पर भी चर्चा कर सकते हैं। ऐसा स्थान लायब्रेरी के पहले उपलब्ध नहीं था।

बीता सप्ताह

1 नवम्बर

- प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने छत्तीसगढ़ राज्योत्सव का उद्घाटन किया। नई विधानसभा का लोकार्पण और नई विधानसभा में पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी की प्रतिमा का अनावरण किया।
- भारतीय क्रिकेट टीम के पूर्व कप्तान मोहम्मद अजहरूद्दीन बने तेलंगाना में कैबीनेट मंत्री।
- मलेशिया में 12वें आशियान देशों की बैठक में भारत-अमेरिका में 10 साल की डिफेंस डील पक्की की गई।
- जम्मू कश्मीर में 6 सालों में मात्र 631 लोगों ने जमीन खरीदी।

2 नवम्बर

- प्रसिद्ध साहित्यकार रामदरश मिश्र का निधन हो गया।
- आस्ट्रेलिया के थिंक रिपोर्ट के अनुसार पहलगाम हमले के बाद जलसंकट से जूझ रहा है पाकिस्तान।
- महिला विश्वकप 2025 के फाइनल मुकाबले में भारतीय महिला क्रिकेट टीम ने दक्षिण अफ्रीका को 52 रन से हराकर महिला विश्वकप जीत लिया।
- मालदीव ने पूरे देश में ई-सिगरेट का किया गैरकानूनी घोषित।

3 नवम्बर

- अंतरिक्ष से दुश्मनों पर कड़ी नजर रखने इसरो ने सबसे भारी सैटेलाइट जीसैट-7 आर (सीएमएस-03) सफलतापूर्वक लांच किया।
- छग के पखांजूर में नक्सल संगठन के शीर्ष नेता भूपति ने की साथियों से भी हथियार छोड़ने की अपील।
- तमिलनाडु के मुख्यमंत्री स्टालिन ने ऐलान किया कि एसआईआर के खिलाफ जाएंगे सुप्रीम कोट।
- आंध्रप्रदेश के पूर्व मंत्री जोगी रमेश को नकली शराब बनाने मामले में गिरफ्तार कर लिया गया।

4 नवम्बर

- राजस्थान में बेकाबू डम्पर ने ली 19 लोगों की जान।
- अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रप ने दावा किया कि पाकिस्तान कर रहा है परमाणु परीक्षण।
- छग सहित 12 राज्यों में एसआईआर की शुरूआत कल शुरू होगी।
- अनिल अंबानी की 3000 करोड़ की 40 संपत्तियां जब्त की गई।

5 नवम्बर

- छग के बिलासपुर में खड़ी मालगाड़ी से मेमू ट्रेन टकराई, 11 लोगों की मौत कई घायल हुए।
- देश के 9 राज्यों और 3 केन्द्र शासित प्रदेशों में विशेष गहन पुनरीक्षण की प्रक्रिया शुरू हुई।
- डीजीसीए के नए नियम के तहत अब हवाई टिकटों में गलती पर नहीं लगेगा अतिरिक्त शुल्क।
- संयुक्त राष्ट्र ने एक रिपोर्ट में कहा कि 22 करोड़ महिलाएं गर्भ निरोधक उपायों से वंचित है।

6 नवम्बर

- बिहार विधानसभा के पहले चरण का मतदान आज 6 नवम्बर को हुआ।
- छत्तीसगढ़ के राज्योत्सव का समापन उपराष्ट्रपति सीपी राधाकृष्णन ने किया।
- भारतीय मूल के डेमोक्रेट उम्मीदवार जोहरान ममदानी ने न्यूयार्क मेयर का चुनाव जीता।
- अमेरिका के वर्जीनिया प्रांत में भारतीय मूल की गजाला हाशमी लेफ्टिनेंट गवर्नर चुनी गई।

7 नवम्बर

- बिहार विधानसभा चुनाव के पहले चरण में करीब 65 फीसदी मतदान हुआ।
- बिहार विस चुनाव के लखीसराय विधानसभा क्षेत्र में उपमुख्यमंत्री विजय सिन्हा के काफिले पर चप्पलें फेंकी।
- छग में पीएससी घोटाला, 37 चयनित उम्मीदवारों को मिलेगी नियुक्ति।
- भारत के पूर्व क्रकेटर सुरेश रैना और शिखर धवन पर ईडी का शिकंजा।

सर्वोच्च न्यायालय में फिर से मंडरा रहा है बेंच हंटिंग का डर

■ के रवींद्रन

मुख्य न्यायाधीश बी. आर. गवई द्वारा केंद्र सरकार को 'बेंच हंटिंग' के प्रयास के लिए कड़ी फटकार लगाने से न्यायिक स्वतंत्रता और भारत के शीर्ष न्यायालय पर कार्यपालिका के प्रभाव को लेकर एक पुरानी और असहज बहस फिर से शुरू हो गई है। इसकी तात्कालिक वजह सरकार की वह मांग थी जिसमें उसने मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता वाली पीठ के समक्ष सुनवाई के अंतिम चरण में पहुंच चुके एक मामले को पांच न्यायाधीशों वाली संविधान पीठ को स्थानांतरित करने की मांग की थी। समय और योजना के मद्देनजर यह कदम मुख्य न्यायाधीश को अपनी पीठ के फैसले से बचने की कोशिश के रूप में प्रतीत हुआ, जिसने उस प्रवृत्ति को और पुष्ट किया जो वर्षों से न्यायालय को परेशान करती रही है। वह है शक्तिशाली वादियों द्वारा न्यायपालिका को प्रभावित करने का प्रयास कि कौन से न्यायाधीश किस मामले की सुनवाई करेंगे।

बेंच हंटिंग, एक ऐसी प्रथा रही है जो जितनी सूक्ष्म है उतनी ही विनाशकारी भी। यह न्याय के इस मूल सिद्धांत को कमजोर करती है कि कानून को सत्ता के प्रति 'अंधा' होना चाहिए। अपने सबसे निंदनीय रूप में, यह असुविधाजनक या स्वतंत्र विचारों वाली समझी जाने वाली बेंचों को दरकिनार करने और कार्रवाई को उन बेंचों की ओर मोड़ने का प्रयास करती है जो अधिक अनुकूल समझी जाती हैं। हालांकि अदालत के गलियारों में इस बारे में लंबे समय से चर्चा होती रही है, न्यायमूर्ति गवई की टिप्पणी ने इस मामले को फिर से खुलकर सामने ला दिया है। इस बार इसके पीछे मुख्य न्यायाधीश के कार्यालय का ज़ोर है। उनके शब्द न केवल प्रक्रियात्मक पैंतरेबाज़ी से बल्कि एक बार-बार होने वाले पैटर्न से भी निराशा दर्शाते हैं जो न्यायपालिका की संस्थागत विश्वसनीयता पर संदेह पैदा करता है।

मुख्य न्यायाधीश का आक्रोश एक आंतरिक दुविधा को भी दर्शाता है। वह है राजनीतिक टकराव की स्थिति में आए बिना संस्था को सूक्ष्म घुसपैठ से कैसे बचाया जाए। न्यायपालिका को सरकार के साथ खुले टकराव में उतरे बिना अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए सावधानी से कदम उठाने चाहिए। लेकिन चुप्पी की भी कीमत चुकानी पड़ती है। जब पीठों को स्थानांतरित करने या उनका विस्तार करने के प्रयासों को चुनौती नहीं दी जाती।

इस आदान-प्रदान का संदर्भ महत्वपूर्ण है। विचाराधीन मामला न्यायाधिकरण सुधार अधिनियम की संवैधानिक वैधता से संबंधित है, एक ऐसा कानून जिसकी अर्ध-न्यायिक निकायों में नियुक्तियों और सेवा शर्तों पर कार्यपालिका को व्यापक अधिकार देने के लिए आलोचना की जाती है। पीठ इस मामले की गहन जांच कर रही है, और याचिकाकर्ताओं द्वारा अपनी दलीलें पूरी करने के बाद सरकार के अनुरोध के समय ने लोगों को चौंका दिया। मुख्य न्यायाधीश को यह एक ऐसे नतीजे को पटरी से उतारने या विलंबित करने का प्रयास लगा जो शायद सरकार को पसंद न हो। इसलिए, उनकी प्रतिक्रिया न केवल न्यायिक स्वायत्तता का बचाव थी, बल्कि उन सीमाओं की भी याद दिलाती थी जो कार्यपालिका और न्यायपालिका को अलग करती हैं।

यह पहली बार नहीं है जब इस तरह की चिंताएं सार्वजनिक हुई हैं। इस मुद्दे ने पहली बार जनवरी 2018 में राष्ट्रीय ध्यान आकर्षित किया था जब सर्वोच्च न्यायालय के चार वरिष्ठ न्यायाधीशों- न्यायमूर्ति जे. चेलमेश्वर, न्यायमूर्ति रंजन गोगोई, न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर और न्यायमूर्ति कुरियन जोसेफ - ने तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा द्वारा मामलों के मनमाने आवंटन का विरोध करने के लिए एक असाधारण प्रेस कॉन्फ्रेंस की थी। उनकी शिकायत थी कि सरकार से जुड़े मामलों को चुनिंदा रूप से 'पसंदीदा पीठों' को सौंपा जा रहा है। वह क्षण अभूतपूर्व था। इससे पहले कभी भी कार्यरत न्यायाधीशों ने सार्वजनिक रूप से अपनी ही संस्था के आंतरिक कामकाज की ईमानदारी पर सवाल नहीं उठाया था। इसने न्यायालय के भीतर गहरी दरारों को उजागर किया। उन्होंने एक संरचनात्मक समस्या को उजागर किया जो तब से चली आ रही है- वह अस्पष्ट तरीका जिससे मुख्य न्यायाधीश, 'रोस्टर के मास्टर' के रूप में, पीठों को मामले सौंपते हैं।

चेलमेश्वर प्रकरण से संरचनात्मक सुधार तो नहीं हुआ, लेकिन इसने एक स्थायी चेतावनी का निशान ज़रूर छोड़ा। उस समय व्यक्त की गई चिंताएं आज के माहौल में भी गूंजती हैं, बस फर्क इतना है कि अब आरोप बाहरी तौर पर, सरकार पर ही, प्रक्रियागत मांगों के ज़रिए न्यायिक प्रक्रिया में हेरफेर करने की कोशिश करने के लिए निर्देशित हैं। मुख्य न्यायाधीश गवई की हताशा इस बढ़ती धारणा को दर्शाती है कि कार्यपालिका का हस्तक्षेप अधिक परिष्कृत हो गया है, जो प्रत्यक्ष दबाव पर कम और समय खरीदने, पीठों को बदलने, या न्यायिक परिदृश्य को बीच में ही बदलने के लिए डिज़ाइन की गई प्रक्रियात्मक युक्तियों पर अधिक निर्भर करता है।

जब कार्यपालिका द्वारा बेंच हंटिंग की जाती है, तो यह न केवल एक नैतिक चूक है, बल्कि एक संवैधानिक अपमान भी है। भारत के संस्थापक चार्टर में निहित शक्तियों का पृथक्करण, सरकार की प्रत्येक शाखा द्वारा दूसरे की अधिकार-सीमाओं का सम्मान करने पर निर्भर करता है। कार्यपालिका द्वारा किसी पीठ की संरचना को प्रभावित करने का प्रयास न्यायपालिका की स्वतंत्रता को भीतर से ही नष्ट करना है। ऐसा हर कदम सार्वजनिक जीवन में न्यायालय के अधिकार को बनाए रखने वाली तटस्थता की धारणा को कमज़ोर करता है। भले ही कोई औपचारिक कदाचार सिद्ध न हो, लेकिन हेरफेर का आभास मात्र न्याय प्रणाली में विश्वास को नुकसान पहुंचा सकता है।

न्यायाधीशों को राजनीतिक या संस्थागत प्रभाव से मुक्त रखने का सिद्धांत लोकतांत्रिक वैधता के मूल में है। जब वादी, विशेष रूप से राज्य की शक्ति का प्रयोग करने वाले, अपने पसंदीदा परिणामों के अनुरूप प्रक्रियात्मक कदम उठाते देखे जाते हैं, तो यह इस बारे में संदेह पैदा करता है कि क्या न्यायालय वास्तव में कार्यपालिका की अतिरेक पर अंकुश लगाते हैं। इसलिए न्यायमूर्ति गवई की यह स्पष्ट टिप्पणी कि सरकार 'उनकी पीठ से बचने के लिए उत्सुक' प्रतीत होती है, कोई आकस्मिक टिप्पणी नहीं थी, बल्कि एक सार्वजनिक संकेत था कि इस तरह के आचरण को अनदेखा नहीं किया जाएगा। इससे यह संकेत मिलता है कि न्यायालय के भीतर भी, इस बात की जागरूकता है कि राज्य द्वारा किए जाने वाले व्यवहार के पैटर्न न्यायिक स्थान पर चुपचाप अतिक्रमण कैसे कर सकते हैं।

इस क्षण को विशेष रूप से संवेदनशील बनाने वाली बात यह है कि यह समकालीन भारत में न्यायपालिका और सरकार के बीच संतुलन को लेकर बढ़ती चिंताओं के बीच आया है। पिछले एक दशक में, कई उच्च-दांव वाले संवैधानिक मामलों- चुनावी बॉन्ड योजना को चुनौती देने से लेकर संघीय नियुक्तियों से जुड़े मामलों तक- में देरी, स्थगन या अंतिम समय में प्रक्रियात्मक विचलन देखा गया है। इनमें से कई मामलों में, आलोचकों ने सरकार पर रणनीतिक बाधा डालने का आरोप लगाया है। यह धारणा कि कार्यपालिका गुण-दोष पर बहस करने के बजाय, प्रक्रियात्मक साधनों के माध्यम से जवाबदेही को प्रबंधित या विलंबित करने का प्रयास कर रही है, संस्थागत बेचैनी की कहानी को और बल देती है।

यहां दांव पर केवल एक मामले के परिणाम से कहीं अधिक है। सर्वोच्च न्यायालय की विश्वसनीयता न केवल उसके निर्णयों पर, बल्कि उसकी प्रक्रियाओं की अखंडता पर भी निर्भर करती है। न्यायालय संवैधानिक सीमाओं का अंतिम निर्णायक है, और इसकी ताकत जनता के इस विश्वास में निहित है कि वह उन लोगों से स्वतंत्र रूप से कार्य करता है जिनका न्याय करने के लिए उसे बुलाया जाता है। प्रत्येक प्रकरण जो इसके विपरीत संकेत देता है- चाहे वह 2018 में मुख्य न्यायाधीश द्वारा कथित पीठ हेरफेर के माध्यम से हो या अब कार्यपालिका पीठ शिकार के आरोपों के माध्यम से- उस विश्वास को उत्तरोत्तर कमजोर करता है।

मुख्य न्यायाधीश का आक्रोश एक आंतरिक दुविधा को भी दर्शाता है। वह है राजनीतिक टकराव की स्थिति में आए बिना संस्था को सूक्ष्म घुसपैठ से कैसे बचाया जाए। न्यायपालिका को सरकार के साथ खुले टकराव में उतरे बिना अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए सावधानी से कदम उठाने चाहिए। लेकिन चुप्पी की भी कीमत चुकानी पड़ती है। जब पीठों को स्थानांतरित करने या उनका विस्तार करने के प्रयासों को चुनौती नहीं दी जाती, तो वे एक ऐसी संस्कृति को सामान्य बना सकते हैं जहां शक्तिशाली वादी यह मान लेते हैं कि वे न्यायिक प्रक्रिया को अपने फायदे के लिए ढाल सकते हैं। इस प्रथा का सार्वजनिक रूप से विरोध करके, न्यायमूर्ति गवई ने इस सामान्यीकरण को बर्दाश्त करने से इनकार करने का संकेत दिया है।

नौकरशाही को खोखला कर रहा भ्रष्टाचार का कीड़ा

पंजाब में पुलिस के एक उप महानिरीक्षक (डीआईजी) को भ्रष्टाचार के मामले में गिरफ्तार किया गया है। यह मामला एक ही समय में दुस्साहस, घृणित और वीभत्सता का प्रतीक है। जिस नौकरशाही को कभी 'भारत का स्टील फ्रेम' कहा जाता था, उसमें एक अधिकारी की इस तरह की लूट और उसका शीर्ष पद पर सामान्य काम-काजी जीवन व्यतीत करना नौकरशाही के भीतर पतन और इसके सामान्यीकरण की सीमा को दर्शाता है। ऐसा संभव नहीं है कि इस अधिकारी का अत्यधिक लालच उनके साथियों और सरकार को मालूम न हो लेकिन इससे पता चलता है कि बल में पथभ्रष्टता को किस हद तक स्वीकार किया जाता है। आरोपी आईपीएस अधिकारी हरचरण सिंह भुल्लर की हिरासत के लिए केंद्रीय जांच ब्यूरो (सीबीआई) और राज्य के सतर्कता ब्यूरो (विजिलेंस ब्यूरो) के बीच टकराव के कारण मामला और जटिल हो गया। भुल्लर के यहां से 7.5 करोड़ रुपये की नकदी, लग्जरी कारों का संग्रह, 2.5 किलोग्राम वजन के सोने के आभूषण, 26 लग्जरी घड़ियां और परिवार के सदस्यों और संदिग्ध बेनामी संस्थाओं के नाम पर लगभग 50 अचल संपत्तियों के दस्तावेज़ जब्त किए गए हैं। एक तरह से यह लूट का खुला मामला है लेकिन दूसरे स्तर पर सीबीआई व राज्य के बीच की खींच-तान एक गहरी सड़ांध, संबंधों की जटिलता और राजनीतिक निहितार्थ के उद्देश्यों की ओर इशारा करती है। इस केस में जो कुछ भी सामने आता है, वह अलग बात है लेकिन सीबीआई के खिलाफ पहले से ही मिले सभी सबूतों के मद्देनजर अपना बचाव करने के लिए भुल्लर को कड़ी मेहनत करनी होगी। इन सबूतों में एक वॉयस कॉल भी शामिल है जिसमें आरोपी अपने बिचौलिए को दी गई रिश्वत के बारे में आगे के कदमों पर चर्चा करता है।

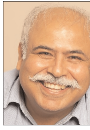

जगदीश रत्तनानी

स्वतंत्रता और अखंडता मिथक बन गए हैं। स्वाभिमान का न होना ही आदर्श हैं। राजनीतिक हस्तक्षेप को रोकने के लिए अक्सर सुना जाने वाला रोना एक समूह के लिए अर्थहीन साइडबार है जिनकी पहचान आत्म-संरक्षण के लिए झुकना और पहला अवसर मिलते ही शोषण करना है। अभी तक आया अनुभव इस पनपने वाली सड़ांध की पुष्टि करता है।

यह मामला असामान्य तो है किन्तु अनोखा नहीं। नौकरशाही अपने कई लोगों की रक्षा करती है। उसके बाद भी नियमित अंतराल पर घोटाले सामने आते हैं जिससे समय-समय पर झटके लगते हैं जो हमें बताते हैं कि भ्रष्टाचार भारतीय समाज में स्थायी रूप से है और नौकरशाही में पनपता है। यह बीमारी जटिल है और विभिन्न रूपों और अंदाजों में आती है तथा संरक्षण की राजनीति से प्रेरित है। रिश्वतखोरी, भ्रष्ट प्रथाओं के बड़े कैनवास का एक हिस्सा है जिसमें (विशेष रूप से वर्तमान भारतीय संदर्भ में) क्रोनिज़्म, जांच एजेंसियों का दुरुपयोग या विशिष्ट रूप से धन का प्रयोग शामिल हैं जिन्हें 'विलफुल डिफॉल्ट' कहा जाता है।

फिर भी सिस्टम की जटिलता की वजह से बीमारी को अनियंत्रित रूप से जारी रखने की अनुमति देने का कोई कारण नहीं है। आईआईएम कोलकाता में मैनेजमेंट सेंटर फॉर ह्यूमन वैल्यूज के संस्थापक और दिवंगत शिक्षाविद एसके चक्रवर्ती ने 1997 में एक पेपर में 'घोर भ्रष्टाचार' और 'सूक्ष्म अनैतिकता' के बीच अंतर के बारे में बात की थी। अगर 'सूक्ष्म अनैतिकता' को पहचानना और लड़ना चुनौतीपूर्ण है, तो 'घोर भ्रष्टाचार' को आसानी से देखा जा सकता है और वह सजा पाने का हकदार है। यदि भ्रष्टाचार ग्रीक पौराणिक कथाओं वाला 'बहुत से सिरों वाला राक्षस' है तो पहले कौन सा सिर काटा जाए, इस बात पर चर्चा करने से अधिक महत्वपूर्ण है कि जो सिर स्पष्ट दिखाई दे रहा है उसे पहले काटा जाए। मजबूत कदम उठाने की अनिच्छा गहरी निराशा और असहायता की भावना को जन्म देती है। चक्रवर्ती ने कहा: 'क्या हम एक बीमार और निराश समाज की ओर बढ़ रहे हैं? भले ही भौतिक समृद्धि में वृद्धि हो पर क्या आने वाली पीढ़ियां इस तरह की विरासत के लिए आभारी होंगी?' बेशक, अधिकांश भारतीयों की भौतिक समृद्धि में वृद्धि नहीं हुई है। उदारीकरण के पक्ष में कुछ प्रमुख तर्क, कि भ्रष्ट लाइसेंस-परमिट-राज को ध्वस्त कर दिया जाएगा और बाजार के कब्जे में आने पर भ्रष्टाचार को अपने आप रोक दिया जाएगा- खोखले साबित हुए हैं। घोर भ्रष्टाचार अपने स्थान पर ही जमा हुआ है। राष्ट्र पर एक व्यापारिक-राजनीतिक आधारित भ्रष्टाचार के सूक्ष्म रूप का बोझ और अधिक है जो राज्य के संसाधनों को लूटता है तथा आम आदमी की कीमत पर नियमों को झुकाता है।

यह तर्क देना आसान है कि पंजाब के डीआईजी का मामला और भ्रष्टाचार के अन्य सनसनीखेज मामले प्रणाली का एक छोटा सा हिस्सा हैं जो दूसरे तरीके से काम करते हैं। उस आत्मसंतोष को खरीदना उस तबाही के प्रति आंखें बंद करना है जिसे दूसरों ने 'भारतीय लोकतंत्र का अभिशाप' कहा है। आईएएस और आईपीएस कैडर सहित देश की शीर्ष रैंक वाली नौकरशाही की भर्ती करने वाले संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) ने हाल ही में 100 साल पूरे किए हैं। इस आयोग को डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर के इस कथन पर विचार करना चाहिए कि, 'लोक सेवा आयोग का कार्य उन लोगों को चुनना है जो सार्वजनिक सेवा के लिए उपयुक्त हैं'।

क्या भर्ती प्रक्रिया गलत है या सिस्टम के पास नए अधिकारियों को अपने क्लब में शामिल करने का एक तरीका है? इनमें से कुछ कठिन प्रश्न हैं जिनका हल नहीं निकल सकता जब तक कि यूपीएससी योग्यता के अर्थ पर गहरे सवाल उठाने के बजाय नए लोगों के साथ जश्न के मूड में होता है। इस योग्यता का मूल्यांकन कैसे किया जाता है या तेजी से बदलते परिवेश में इसकी पुरानी दुनिया की परीक्षण प्रणालियों की अर्थहीनता दिखाई देती है। अधिकारियों की नियुक्ति की शर्तें अपने आप में आरामदायक और गैर-मांग वाली हैं। वे क्लब की जीवन भर की सदस्यता की मानसिकता को प्रोत्साहित करते हैं जिससे बेदखल करना मुश्किल है।

प्रणाली उन उम्मीदवारों को प्रोत्साहित करती है जो सरकार में उच्चतम स्तर पर नियुक्तियों के साथ आने वाले भत्ते, जीवन भर रोजगार के सुरक्षा जाल एवं विशेषाधिकारों की एक विस्तृत श्रृंखला को पसंद करते हैं तथा डॉ. अम्बेडकर ने जिस जिज्ञासा, रचनात्मकता और सार्वजनिक सेवा के विचार की बात कही थी उसको अनदेखा करते हैं। यह तर्क देना संभव है कि प्रशासनिक सेवा सभी गलत कारणों से उम्मीदवारों को आकर्षित करती है ताकि उनका पूल अपने आप में एक प्रकार का भ्रष्टाचार हो। प्रशासनिक सेवाओं के स्तर में गिरावट का एक वैध कारण राजनीतिक हस्तक्षेप है पर जब मुठभेड़ के नाम पर की गई हत्याओं, बुलडोजर न्याय या वास्तव में विपक्ष के नेता राहुल गांधी और योगेंद्र यादव जैसे स्वतंत्र पर्यवेक्षकों द्वारा कथित चुनाव आयोग के गंभीर उल्लंघनों के खिलाफ कोई आवाज नहीं उठाई जाती है तो समग्र रूप से नौकरशाही के चरित्र पर भी सवाल उठता है। इसके बजाय आईएएस ऑफिसर्स एसोसिएशन ने मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार के बचाव में आना उचित समझा जबकि 2019 में चुनाव के दौरान आदर्श आचार संहिता के उल्लंघन के आरोप में प्रधानमंत्री और गृह मंत्री को क्लीन चिट देने का विरोध करने वाले चुनाव आयुक्त अशोक लवासा के मामले में एसोसिएशन चुप रहा और उन्हें अपने परिवार के सदस्यों को आयकर नोटिस के साथ निशाना बनाते देखा। लवासा उच्च सत्यनिष्ठा वाले एक दुर्लभ अधिकारी थे।

स्वतंत्रता और अखंडता मिथक बन गए हैं। स्वाभिमान का न होना ही आदर्श हैं। राजनीतिक हस्तक्षेप को रोकने के लिए अक्सर सुना जाने वाला रोना एक समूह के लिए अर्थहीन साइडबार है जिनकी पहचान आत्म-संरक्षण के लिए झुकना और पहला अवसर मिलते ही शोषण करना है। अभी तक आया अनुभव इस पनपने वाली सड़ांध की पुष्टि करता है। यह विफल प्रणाली सुधार से परे हो सकती है। जिन नौकरशाहों ने अग्निवीर कार्यक्रम को तैयार करने में मदद की ताकि सैनिक पांच साल की नौकरी के बाद चले जाएं, उन्हें यह बताने की जरूरत है कि इस तरह के कार्यक्रम को आईएएस और आईपीएस पर लागू किया जाना चाहिए। एक निश्चित अवधि तक सेवा करने के बाद योग्यता या पद के बजाय केवल उसके सेवाकाल के आधार पर 'समय-आधारित पदोन्नति' ही आधार बना हुआ है। बाबुओं को आयोजित पदों या पद पर बिताए गए समय के बजाय उनके मुख्य प्रदर्शन संकेतक (केपीआई) के लिए जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए। पूर्व प्रधानमंत्री वीपी सिंह ने एक बार कहा था, 'जब आपके पास उन लोगों के लिए दिल नहीं है, जिनकी आप सेवा करते हैं, तो मुझे आपकी तथाकथित योग्यता से क्या लेना-देना है?'

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। सिंडिकेट: द बिलियन प्रेस)

प्रकाशक, मुद्रक : राजीव रंजन श्रीवास्तव द्वारा पत्रकार प्रकाशन प्रा. लि. के लिए 506, आई.एन.एस. बिल्डिंग, 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं बीएफएल इंफोटेक लि., सी 9, सेक्टर-3, नोएडा से मुद्रित। सम्पादक : राजीव रंजन श्रीवास्तव,
(पी.आर.बी. एक्ट के तहत समाचार चयन के लिए जिम्मेदार)। आर.एन.आई. नं. DELHIN/2008/24216. दिल्ली कार्यालय :फोन: 011-23718195,23357784, फैक्स: 011-43581404, नोएडा कार्यालय: फोन: 0120-4114404 फैक्स: 0120-4273770
ई-मेल: deshbandhudelhi@gmail.com वेब: www.deshbandhu.co.in

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

चिंतन

अब देश की रक्षा में तैनात फाइटर जेट भी होंगे स्वदेशी

पूरी दुनिया ने देखा कि आपरेशन सिंदूर के दौरान भारत पाकिस्तान पर कई गुणा भारी पड़ा। पाकिस्तान के अंदर घुसकर हमारे जवानों ने आतंकी अड्डों को नष्ट कर दिया। लाहौर और रावलपिंडी तक भारतीय हमलों की गूंज सुनाई दे रही थी। हमारी ड्रोन तकनीक पाकिस्तान की चीन से ली गई वायु प्रतिरक्षा प्रणाली पर कहीं ज्यादा भारी पड़ी। हमारे ड्रोन मौत बनकर सीधे दुश्मन की फौजी छावनियों के ऊपर मंडरा रहे थे। इसके बाद पाकिस्तान ने भारत के सैन्य ठिकानों और आम नागरिकों को तुर्किये और चीनी ड्रोन बेड़े के जरिये निशाना बनाने की कोशिश की, लेकिन एक भी प्रयास सफल नहीं हो पाया। उसने सैकड़ों ड्रोन एक साथ भेजे, परंतु स्वदेशी वायु प्रतिरक्षा प्रणाली आकाशतीर ने उन्हें विफल कर दिया। भारतीय वायु प्रतिरक्षा प्रणाली का कमाल ही कहा जाएगा कि कोई पाकिस्तानी ड्रोन चंडीगढ़ अथवा दिल्ली तक नहीं पहुंच सका और उन्हें सीमा के निकट ही ध्वस्त कर दिए गए। जब 9-10 मई की रात पाकिस्तान ने बड़े हमले की मंशा से ड्रोन के साथ उन्नत फतह श्रेणी की मिसाइलें दागी गईं तो हमने उन्हें भी नाकाम कर दिया और इसके कुछ ही मिनट में हमारी सेनाओं ने पाकिस्तान के उन सभी वायु सैनिक अड्डों को निशाना बनाया, जहां पर उन्नत श्रेणी के अमेरिकी एफ-16 और चीनी जेफ-17 विमान थे। भारत ने उस एयरबेस को भी तबाह कर दिया, जहां तुर्किये के ड्रोन का बड़ा बेड़ा था और जिसके जरिये पाकिस्तान बड़े ड्रोन हमले कर रहा था। यदि पाकिस्तान को अमेरिका और चीन से मिले अति उन्नत लड़ाकू विमानों, चीनी वायु प्रतिरक्षा प्रणाली और तुर्किये से मिले ड्रोन के बावजूद मुंह की खानी पड़ी तो यह हमारी अद्भुत सैन्य सामर्थ्य ही था और इसमें सबसे बड़ा योगदान था हमारी स्वदेशी तकनीक का। भारत की विजय मात्र पाकिस्तान पर ही नहीं, अपितु अमेरिकी, चीनी और तुर्किये की हथियार तकनीक पर भी है। इस युद्ध के दौरान आकाश जैसी स्वदेशी वायु प्रतिरक्षा प्रणाली ने शानदार काम किया। पाकिस्तान के किसी भी नापाक मंसूबे को कामयाब नहीं होने होने दिया। इसी कामयाबी से आगे बढ़ते हुए अब भारत स्वदेशी जेट के निर्माण की और कदम बढ़ा रहा है। अगले साल की शुरुआत से ही भारत में स्वदेशी फाइटर जेट इंजन का उत्पादन शुरू हो जाने की संभावना है। आत्मनिर्भर भारत अभियान के लिए यह बहुत बड़ी खबर है। कि जेट इंजन के उत्पादन के लिए अमेरिकी जनरल इलेक्ट्रिक और फ्रांस की सफ्रान समेत कई वैश्विक कंपनियों के साथ चर्चा चल रही है। इसके बाद तेजी से इस पर काम शुरू होने की संभावना है। इसके निर्माण में सबसे खास बात यह है कि भारत फाइटर जेट इंजन बनाने के लिए भले ही अन्य देशों के साथ तालमेल करे, लेकिन इनका निर्माण देश में ही होगा। भले ही हाल-फिलहाल की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भले ही रूस से एस-400 खरीदा जाए या किसी अन्य देश से कुछ और, लेकिन इरादा साफ होना चाहिए कि है कि भविष्य में जो भी रक्षा उपकरण चाहिए उसका निर्माण देश में ही होगा। तभी देश आत्मनिर्भर होगा।

सोशल मीडिया की दुश्वारियां भी सामने है

विचार
डॉ. संजय शुक्ला

छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर में बीते दिनों 'छत्तीसगढ़ महतारी' की प्रतिमा को खंडित करने के बाद राज्य में इसकी व्यापक प्रतिक्रिया देखी गई। राज्य स्थापना दिवस के ऐन पहले प्रतिमा को तोड़ने तथा आक्रोशित छत्तीसगढ़ क्रांति सेना के पदाधिकारियों द्वारा अग्रवाल और सिंधी समाज पर किए गए आपत्तिजनक टिप्पणी को लेकर सोशल मीडिया से लेकर सड़कों पर भारी सरगर्मी देखी गई। विवाद थमा ही नहीं था कि रायगढ़ के एक युवक द्वारा सतनाम पंथ के प्रवर्तक गुरु घासीदास बाबा पर विवादित टिप्पणी ने इस आग में घी डाल दिया।अलबत्ता छत्तीसगढ़ जैसे शांतिप्रिय राज्य में स्थानीयता या क्षेत्रवाद को लेकर सोशल मीडिया में छिड़ी बहस ने इस माध्यम के सदुपयोग और दुरुपयोग दोनों के संबंध में एक विमर्श को जन्म दे दिया है। इस बीच सोशल मीडिया का सार्थक उपयोग भी सामने आया जब यूजर्स द्वारा रेलवे प्रशासन से राज्य स्थापना दिवस यानि 1 नवंबर को रेलवे स्टेशनों में छत्तीसगढ़ के 'राज्य गीत' के प्रसारण की मांग की गई। यह सुकूनदायक रहा कि रेल प्रशासन ने इस दिशा में सजगता दिखाई और स्थापना दिवस पर सभी रेलवे स्टेशनों में राज्यगीत प्रसारित किए गए। इंटरनेट क्रांति के वर्तमान दौर में सोशल मीडिया लोगों के दिनचर्या का अहम हिस्सा बन चुका है। युवाओं से लेकर महिलाओं और बुजुर्गों की एक बड़ी आबादी किसी न किसी सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म में घंटों समय बिता रहा है। सोशल मीडिया ने जहां पारंपरिक मीडिया के वर्चस्व को तोड़ा है वहीं इसका दखल देश और दुनिया की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव में भी परिलक्षित हो रहा है। सोशल मीडिया वह मंच है जो लोगों के विचारों और सूचनाओं को बड़ी तेजी से हजारों - लाखों लोगों तक पहुंचा रहा है फलस्वरूप इसे आम आदमी का संसद भी नाम दिया गया है। राजनीति और चुनाव में सोशल मीडिया की ताकत को सबसे पहले पश्चिमी देशों ने आजमाया। देश में पहली बार साल 2014 के लोकसभा चुनाव में देश के युवाओं ने इस सोशल मीडिया के जरिए बने 'ब्रांड मोदी' पर भरपूर ऐतबार किया। भाजपा के इस प्रयोग के बाद अमूमन सभी राजनीतिक दलों ने पार्टी में आईटी सेल बनाया जिसका उपयोग अपने राजनीतिक अभियान और चुनाव के दौरान किया जा रहा है। 2024 के आम चुनाव से राजनीतिक पार्टियां अपने आईटी सेल के साथ ही इन्फ्लुएंसर्स के जरिए सोशल मीडिया से जुड़े मतदाताओं को प्रभावित करने का जतन कर रहे हैं। अब सभी सियासी दल सोशल मीडिया के साथ ही आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस यानि 'एआई' और डीपफेक (कृत्रिम वीडियो) के जरिए जोर अजमाइश कर रहे हैं। जानकारी के मुताबिक देश में एक अरब से ज्यादा मतदाता हैं जिसमें से तकरीबन 80 करोड़ मतदाता विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स जैसे फेसबुक, एक्स (ट्विटर), व्हाट्सएप, इंस्टाग्राम और यूट्यूब से जुड़े हुए हैं। सोशल मीडिया के इसी ताकत के चलते राजनीतिक दलों, धार्मिक और सामाजिक संगठनों द्वारा अपने विचारधारा और एजेंडे को आम लोगों तक पहुंचाने के लिए इस माध्यम का भरपूर इस्तेमाल किया जा रहा है।

विडंबना है कि अब सोशल मीडिया की दुश्वारियां भी सामने आने लगी है फलस्वरूप दुनिया भर की सरकारें इसके दुरूपयोग पर चिंतित हैं। विभिन्न राजनीतिक ,धार्मिक और जातिवादी संगठनों द्वारा इस मीडिया का उपयोग सियासी ,धार्मिक तथा जातिगत नफरत फैलाने के लिए किया जा रहा है जिससे देश और समाज में नफरत और अशांति बढ़ रही है। भारत में पिछले वर्षों में घटित राजनीतिक, सांप्रदायिक और जातिवादी हिंसा में प्रमुख भूमिका सोशल मीडिया की रही है फलस्वरूप सरकार और प्रशासन को दंगाग्रस्त इलाकों में इंटरनेट बंद करना पड़ा था। अलबत्ता सोशल मीडिया का दुरूपयोग केवल समाज में नफरत और अशांति फैलाने के लिए ही नहीं हो रहा है बल्कि विभिन्न आतंकवादी तथा अलगाववादी संगठनों द्वारा इस माध्यम का इस्तेमाल युवाओं के 'ब्रेनवाश' के लिए किया जा रहा है। सोशल मीडिया और इंटरनेट के इसी नकारात्मक उपयोग के चलते वर्ल्ड वाइड वेब 'डब्ल्यू.डब्ल्यू.डब्ल्यू.' के अविष्कारक टिम बर्नर्स ने कोफ्त और निराशा में कहा था कि 'इंटरनेट अब नफरत फैलाने वालों का अड्डा बनते जा रहा है '। दूसरी ओर सोशल मीडिया से जुड़े एक शीर्षस्थ अधिकारी कि मानें तो यह मीडिया किसी सुचारू ढंग से चल रहे लोकतांत्रिक ढांचे को बहुत हद तक नुकसान पहुंचा सकता है।वर्तमान राजनीतिक और सामाजिक परिवेश पर गौर करें तो उक्त दोनों बातें सही साबित हो रहीं हैं। हालांकि सोशल मीडिया के नकारात्मक पक्ष को किनारे रख दें तो इसका सकारात्मक पक्ष भी है जो देश और समाज के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास में भूमिका निभा रहा है। देश में अनेक गैर राजनीतिक आंदोलनों को सफलता सोशल मीडिया के जरिए ही मिली है वहीं आम आदमी से जुड़े मुद्दों का भी समाधान इसी माध्यम के जरिए संभव हुआ है। लिहाजा इस माध्यम के उपयोग पर सावधानी और जवाबदेही दोनों आवश्यक है।

अलबत्ता सोशल मीडिया केवल राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक ताने-बाने को ही छिन्न-भिन्न नहीं कर रहा बल्कि यह किशोरों और युवाओं के शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर भी असर डाल रहा है। नयी पीढ़ी के मोबाइल और सोशल मीडिया की बढ़ती लत देश और समाज के लिए एक गंभीर चुनौती बन रही है। डिजिटल इंटेलिजेंस प्लेटफॉर्म 'सेंसर टावर' के एक रिपोर्ट के मुताबिक भारतीय ' जेन- जी' ने पिछले वर्ष मोबाइल पर 1.12 ट्रिलियन घंटे बिताए जो दुनिया में सबसे ज्यादा है। रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि 18 वर्ष के आयु के चालीस करोड़ लोगों में से हर तीसरा किशोर या युवा मोबाइल के लत का शिकार है। आलम यह है कि मोबाइल की लत छोटे बच्चों में भी लग रही है लेकिन इसके लिए मुख्य रूप से अभिभावक ही जिम्मेदार हैं।सोशल मीडिया पर ऑनलाइन गेमिंग और अश्लील साइट्स की लत किशोरों व युवाओं को अपराध, नशाखोरी और यौन हिंसा की ओर धकेल रहा है। चिकित्सा विशेषज्ञों के अनुसार मोबाइल और सोशल मीडिया की बढ़ती लत के चलते बच्चों से लेकर बुजुर्गों में विभिन्न शारीरिक बीमारियां जैसे मोटापा, मधुमेह, हृदयरोग, उच्च रक्तचाप, नेत्ररोग से लेकर अनिद्रा,अवसाद, चिंता, चिड़चिड़ापन, गुस्सा और अकेलापन जैसे मानसिक रोगों के मामले लगातार बढ़ रहे हैं। इसके अलावा सोशल मीडिया इन दिनों सायबर अपराध का सबसे बड़ा जरिया बन चुका है। 'डिजिटल अरेस्ट' और 'सेक्सटॉर्शन' गिरोह के धमकी और झांसे में लोग करोड़ों रुपए लुटा चुके हैं। सेक्सटॉर्शन के चलते अनेक लोगों के द्वारा खुदकुशी की खबरें सामने आई हैं।गृह मंत्रालय और सीबीआई की रिपोर्टों के अनुसार देश में ' डिजिटल अरेस्ट स्कैम ' के जरिए साइबर अपराधियों ने लगभग 3000 करोड़ रुपए से ज्यादा की ठगी किया है। इस धोखाधड़ी का शिकार महिलाएं और बुजुर्ग भी हो रहे हैं। सुप्रीम कोर्ट ने देश में बढ़ रहे डिजिटल अरेस्ट की मामले को गंभीरता से लिया है तथा इससे निबटने के लिए सख्त आदेश की जरूरत बताते हुए सरकार से जवाब मांगा है।

बहरहाल भले ही इंटरनेट ने लोगों के जीवन को आसान कर दिया है लेकिन डिजिटल निरक्षरता वाले देश में सोशल मीडिया के चलते देश और समाज में अशांति भी बढ़ रही है लिहाजा इस पर अंकुश की भी जरूरत है। सोशल मीडिया के दुरूपयोग पर केंद्र सरकार सहित आदालतों ने भी अनेकों बार चिंता जताई है। सरकार और अदालतों द्वारा इस तकनीक के बेजा इस्तेमाल को रोकने की कोशिशें भी हुई लेकिन एक तबका इन कोशिशों को /"बोलने की आजादी/" पर खतरा बताकर विरोध पर उतारू हो जाती है। इस अधिकार के पैरोकारों को समझना होगा कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मायने कुछ भी बोलना या लिखना नहीं है बल्कि इस अधिकार पर भी कुछ बंदिशें हैं। देश में साइबर अपराध पर लागू कानून अभी भी जरूरत के लिहाज से प्रभावी नहीं बन पाए हैं फलस्वरूप अपराधी कानून के चंगुल से बच जाते हैं। इस दिशा में वर्तमान चुनौतियों के मुताबिक कानून बनाने की जवाबदेही केंद्र सरकार की है क्योंकि यह अधिकार संसद को ही है। इसी प्रकार सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के यूजर्स को भी इस माध्यम में अपने विचार या विडियो साझा करते समय देश और समाज के लिए अपनी जिम्मेदारी के प्रति स्व-अनुशासित होना होगा। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स की भी जवाबदेही है कि वे ऑनलाइन सामाग्रियों की फैक्ट चेकिंग के लिए प्रभावी तकनीक लागू करें ताकि देश में शांति और सद्भाव के साथ आम आदमी का भरोसा इस माध्यम पर कायम रहे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं।)

आधी आबादी

डॉ. मोनिका शर्मा

बिहार चुनाव : अपने मत मायने समझती स्त्रियां

बिहार विधानसभा चुनाव-2025 के प्रथम चरण में आधी आबादी ने जमकर मतदान किया। कई क्षेत्रों में तो महिलाओं ने पुरुष मतदाताओं की तुलना में अधिक मतदान किया है। पहले चरण की 121 सीटों पर हुई बंपर वोटिंग में महिला वोटरों का उत्साह राजनीति के समीकरण बनाने और बिगाड़ने वाला प्रतीत होता है। इतना ही नहीं, शहरों से लेकर गांवों-कस्बों तक, मतदान केन्द्रों पर लगी स्त्रियों की लंबी कतारें एक नागरिक के तौर पर अपने मत के मायने समझने का भी द्योतक बनीं हैं। व्यापक रूप से देखा जाय तो महिलाओं की यह भागीदारी कई मायने में शिक्षा, सजगता और सामाजिक भूमिका में आ रहे सकारात्मक बदलावों का भी परिणाम है। दरअसल, जीवन की बेहतरी से जुड़ी सरकारी योजनाएं हों या सुरक्षित परिवेश बनाने की कवायद। सरकारी नीतियों और सामाजिक माहौल से महिलाओं का जीवन सबसे अधिक प्रभावित होता है। यही वजह है कि बिहार में 2010 के बाद आधी आबादी ने हर बार बढ़-चढ़कर मतदान किया है। तब से महिलाएं इस राज्य में भी चुनाव की धुरी बनी हुई हैं। बिहार विधानसभा चुनाव-2025 के प्रथम चरण में हुए रिकॉर्ड 64.66 प्रतिशत मतदान में भी स्त्रियों की भागीदारी अहम दिखी है। ध्यातव्य है कि 2020 के पहले चरण की तुलना में यह आंकड़ा कुल मतदान का करीब 8 प्रतिशत ज्यादा है। मतदान में स्त्रियों की बढ़ती हिस्सेदारी के चलते ही इस बार भी बिहार विधानसभा चुनाव में सभी दलों ने महिला मतदाताओं पर केन्द्रित योजनाओं पर विशेष ध्यान भी दिया है। चाहे एनडीए हो या फिर महागठबंधन, सभी दल आधी आबादी की महत्वपूर्ण भूमिका को समझने और सरकार बनाने के लिए उनका साथ पाने के लिए प्रयासरत दिखे। यूं भी बीते कुछ दिनों में प्रदेश में चुनावों में विकास, सुरक्षा, शिक्षा और रोजगार जैसे मुद्दे छाये रहे हैं। समझना मुश्किल नहीं कि ऐसे सभी मुद्दे महिलाओं के व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक जीवन पर गहरा असर डालते हैं। यही वजह है कि महिला मतदाताओं के झुकाव को समझने की कवायदें केवल राजनीतिक विश्लेषण का विषय भर नहीं है। जीवनयापन से जुड़ी सहजता देती योजनाओं और नीतियों के अलावा सम्मान और सुरक्षा महिलाओं के लिए सबसे अहम मुद्दा रहा है। असल में महिला वोटरों को लुभाने की होड़ के परिणाम के अलावा आधी आबादी के इस उत्साह और रुझान को उनके दायित्वबोध से जोड़कर देखना भी जरूरी है। भारत की स्त्रियां भी ना केवल जमीनी मुद्दों को समझती हैं बल्कि उनसे जुड़े सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव को सबसे ज्यादा झेलती भी हैं।

देशभर से आए दिन सामने आती घटनाएं बताती हैं कि सुरक्षा और जीने की सहजता का आधी आबादी को आज भी इंतजार है। यही वजह है कि सुरक्षा बिहार विधानसभा चुनाव में अहम चुनावी मुद्दा रही है। नतीजतन, महिला मतदाताओं के लिए सुरक्षित परिवेश की जरूरत जाति या सामुदायिक भेद से परे वोट करने की बुनियाद बन गई है। मतदाता समूह के रूप में अपने संवैधानिक अधिकार को इस्तेमाल करते हुए आधी आबादी की बहुत की सोच बहुत स्पष्ट रहती है। निःसन्देह, लाभकारी योजनाएं उन्हें भी प्रभावित करती हैं पर असुरक्षित माहौल में किसी भी तरह की सहायता का कोई अर्थ नहीं रह जाता। समझना आवश्यक है कि 2016 में बिहार की महिलाओं ने शराबबंदी और सुरक्षित परिवेश को अपना समर्थन देकर इसी बात को पुख्ता किया था। असल में देखा जाए तो स्त्रियों के स्वतंत्र रूप से अपना मत देने के आंकड़े ही शराब बंदी के बाद बढ़े हैं। तब महिलाओं ने अपने जीवन से हर पक्ष को प्रभावित करने वाले शराबबंदी के निर्णय के लिए नितीश कुमार का खुलकर समर्थन किया था। भारत के चुनावी इतिहास में स्त्रियों का यह रुझान बहुत व्यावहारिक और परिपक्व सोच की बानगी माना जाता है। महिलाओं के विरुद्ध दर्ज अपराधों के आंकड़े बताते हैं कि बिहार में शराबबंदी के बाद महिलाओं के विरुद्ध हिंसा में कमी आई। विशेषकर घरेलू हिंसा दुष्कर्म, छेड़छाड़, यौन उत्पीड़न और भावनात्मक हिंसा जैसे अपराधों में रेखांकित करने योग्य कमी आई। महिलाओं की बड़ी आबादी का जीवन इस निर्णय से प्रभावित हुआ। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-5 के आंकड़ों के मुताबिक 83 प्रतिशत विवाहित महिलाओं ने बताया कि शराबबंदी से पहले पर उन्हें अक्सर पति की शारीरिक या भावनात्मक हिंसा झेलनी पड़ती थी। सामाजिक बेहतरी, पारिवारिक स्थिरता और स्वास्थ्य लाभ से जुड़ा यह निर्णय आज भी महिला वोटरों के मन के जुड़ा है। ऐसे में महिला मतदाताओं का बड़ी संख्या में वोट देने के लिए घर से निकलना इस बार भी निर्णायक साबित हो सकता है।

(लेखिका वरिष्ठ स्तंभकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

हम जो भी करेंगे वह कर्म है

संकलित
दर्शन

'इगोसेंट्रिक' कर्म को वे कर्म कहते हैं। ऐसे कर्म को, जिसमें कर्ता मौजूद है। जिसमें कर्ता यह विचार करके ही कर रहा है कि करने वाला मैं हूं। जब तक मैं करने वाला हूं, तब तक हम जो भी करेंगे, वह कर्म है। अगर मैं संन्यास ले रहा हूं, तो संन्यास एक कर्म हो गया। अगर मैं त्याग कर रहा हूं, तो त्याग एक कर्म हो गया। अकर्म का मतलब ठीक उलटा है। अकर्म का मतलब है ऐसा कर्म, जिसमें कर्ता नहीं है। जिसमें मैं कर रहा हूं, ऐसा कोई बिंदु नहीं है। ऐसा कोई केंद्र नहीं है, जहां से यह भाव उठता है कि मैं कर रहा हूं। अगर मैं कर रहा हूं, यह खो जाए, तो सभी कर्म अकर्म है। कर्ता खो जाए तो सभी कर्म अकर्म है। इसलिए कृष्ण का कोई कर्म, कर्म नहीं है, सभी अकर्म हैं। कर्म और अकर्म के बीच में विकर्म की जगह है। विकर्म का अर्थ है, विशेष कर्म। विशेष कर्म किसे कहते हैं कृष्ण? जहां न कर्ता है, और न कर्म। फिर भी चीजें तो होंगी। फिर भी चीजें तो होंगी ही। आदमी श्वास तो लेगा ही। न कर्म है, न कर्ता है। श्वास तो लेगा ही। श्वास कर्म तो है ही। खून तो गति करेगा ही शरीर में। भोजन तो पचेगा ही। ये कहां पड़ेंगे? ये विकर्म हैं। ये मध्य में हैं। यहां न कर्ता है, न कर्म है। साधारण मनुष्य कर्म में है, संन्यासी अकर्म में है, परमात्मा विकर्म में है। वहां न कोई कर्ता है, न कोई कर्म है। वहां चीजें ऐसी ही हो रही हैं, जैसे श्वास चलती है। वहां चीजें बस हो रही हैं। यह कर्म योग का तत्व है । जो विकर्म को समझ लेगा, वह अकर्म में उतर जाएगा। कर्म हमारी स्थिति है, जैसे हम जी रहे हैं। विकर्म हमारी समझ होगी, अकर्म हमारा होना हो जाएगा।

दूसरों की जरूरतें पूरी करना ही दान है

संकलित
प्रेरणा

महाभारत का एक प्रसंग है। एक दिन युधिष्ठिर ने वेद व्यास से पूछा कि दान बड़ा है या पूजा-पाठ और तपस्या? व्यास जी ने युधिष्ठिर को अपनी बात समझाने के लिए एक कथा सुनानी शुरू की। व्यास जी ने कहा कि एक मुद्गल नाम के महर्षि थे, वे भिक्षा मांगकर जीवन चलाते थे। भिक्षा में उन्हें आटा, खाने-पीने की चीजें, हवन सामग्री मिल जाती थीं। दान में मिली चीजों से ही वे खाना बनाते और पूजा-पाठ करते थे। कभी-कभी ऐसे दिन भी आते थे, जब उन्हें भिक्षा नहीं मिल पाती थी। अधिकतर अमावस्या और पूर्णिमा पर ऐसा हुआ करता था। इन दोनों तिथियों पर ऋषि मुद्गल से मिलने दुर्वासा ऋषि आया करते थे। दुर्वासा मुनि को खाना खिलाने के बाद उनके लिए कुछ बचता नहीं था तो उन्हें भूखे रहना पड़ता था। एक दिन फिर ऐसा ही हुआ तो दुर्वासा मुनि ने मुद्गल ऋषि से पूछा कि आप मुझे खाना देकर खुद भूखे रहते हैं, लेकिन मैंने कभी भी आपके चेहरे पर भूख के लक्षण नहीं देखे हैं, क्या आपको भूख नहीं लगती है? मुद्गलजी ने कहा कि मेरे लिए दान का महत्व सबसे ज्यादा है। अन्न दान तो सर्वश्रेष्ठ होता है, जब आपकी भूख शांति होती है, तब मैं भी तृप्त हो जाता हूं। मैं दान पुण्य कमाने के लिए नहीं करता हैं, मैं सिर्फ दूसरों की मदद करना चाहता हूं। व्यास जी ने युधिष्ठिर को आगे समझाया कि तपस्या स्वयं के लिए की जाती है, लेकिन दान हमेशा दूसरों की भलाई के लिए किया जाता है। इसलिए दूसरों की आवश्यकता की पूर्ति करना ही दान है। इसलिए दान तप से भी श्रेष्ठ है।

अंतर्मन

आज की पाती

अन्न की बर्बादी और अति खाना हानिकारक

वर्ष 1945 को दुनिया में पहली बार संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन की स्थापना की गई थी, जिसका मुख्य उद्देश्य भुखमरी से निपटना भी है। वर्ष 1979 में विश्व खाद्य दिवस प्रथम बार मनाया गया था। इस दिवस का मुख्य उद्देश्य दुनियाभर में खाद्य सुरक्षा और संतुलित भोजन के प्रति जागरूक करना भी हो गया है। भोजन प्राणी जाति के तंदरुस्त रहने के लिए बेहद जरूरी है, लेकिन भोजन संतुलित और प्रकृति के दायरे में होना चाहिए। ग्लोबल हंगर इंडेक्स रिपोर्ट 2024 में यह बताया गया है कि हमारे देश की रैंकिंग में कुछ सुधार हुआ है। इस बार हमारा देश 105वें स्थान पर रहा, हालांकि बांग्लादेश 84वें, नेपाल 68वें और श्रीलंका 56वें स्थान पर हैं। - पराग विश्वकर्मा, दुर्ग

ट्रेंड

राष्ट्र गीत को नमन

मैं अपने पूजनीय राष्ट्र गीत - एक शाश्वत गान - को नमन करता हूं जिसने राष्ट्रवाद की भावना को जागृत किया और जो पीढ़ियों को प्रेरित करता रहा है। 'वंदे मातरम्' भारत की सांस्कृतिक विरासत और सभ्यतागत लोकाचार का स्थायी प्रतीक है।
- सी. पी. राधाकृष्णन, उपराष्ट्रपति

आरजेडी बेचैन

बिहार में जंगलराज की वापसी के लिए आरजेडी कितना बेचैन है, इसका पता चुनाव अभियान में वायरल हो रहे उसके गानों से चलता है। इनमें गरीब, दलित-महादलित और अति पिछड़े समाज के लोगों को डराने का प्रयास साफ नजर आता है।
- नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

शेल्टर होम तैयार

दिल्ली सरकार ने सर्दी में जरूरतमंद नागरिकों को सुरक्षित आश्रय प्रदान करने की दिशा में बड़ा और प्रभावी कदम उठाया है। 250 अतिरिक्त शेल्टर होम तैयार किए गए हैं। इस बार शेल्टर होम्स में आधुनिक तकनीक का उपयोग भी किया जा रहा है।
- रेखा गुप्ता, सीएम, नई दिल्ली

अब गारंटी है

'आप' सरकार ने सिर्फ 3 साल में ही बिना रिश्वत और बिना सिफारिश के पंजाब में 56 हजार सरकारी नौकरियां दीं हैं। अब गारंटी है... इन चुनाव नतीजों के तुरंत बाद तरन-तारन में सड़कें, फ्लाइओवर और लड़कियों के लिए टेक्निकल कॉलेज बनेंगे।
-अरविंद केजरीवाल, पूर्व सीएम, दिल्ली

करंट अफेयर

लुटनिक ने ट्रंप की शुल्क शक्तियों का किया बचाव

अमेरिका के वाणिज्य मंत्री हॉवर्ड लुटनिक ने दावा किया कि राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने ''बात मनवाने'' के लिए शुल्क का इस्तेमाल एक कूटनीतिक हथियार के रूप में किया और भारत से आग्रह किया कि वह रूस से ''तेल खरीदना बंद करे'' ताकि यूक्रेन युद्ध को समाप्त कराने में मदद मिल सके। लुटनिक ने बृहस्पतिवार को फॉक्स न्यूज के साथ एक साक्षात्कार में यह टिप्पणी की। साथ ही उन्होंने ऐसे वक्त में ट्रंप की शुल्क शक्तियों के इस्तेमाल का बचाव किया जब उच्चतम न्यायालय में इसकी वैधता पर सुनवाई जारी है। लुटनिक ने कहा, 'राष्ट्रपति इन शुल्कों का उपयोग न्याय खरीदने के लिए कर रहे हैं। वह रूस और यूक्रेन में युद्ध को समाप्त करने के लिए शुल्क का उपयोग कर रहे हैं, जहां उन्होंने भारत से कहा है कि 'तेल खरीदना बंद करो'।' न्यायालय इस बात की जांच कर रहा है कि क्या 1977 के 'इंटरनेशनल इमरजेंसी इकॉनमिक पावर्स एक्ट' (आईईपीए) के तहत ट्रंप के लिए आपातकालीन शक्तियों का उपयोग करके कई देशों, जिनमें भारत भी शामिल है पर व्यापक प्रत्यावर्ती शुल्क लागू करना कानूनी था। लुटनिक ने विश्वास जताया कि अमेरिकी राष्ट्रपति यह मुकदमा जीतेंगे क्योंकि ये शक्तियां अमेरिका की रक्षा करती हैं।

ऑफ बीट

पुरुष-महिलाओं के मस्तिष्क में जीन का व्यवहार अलग

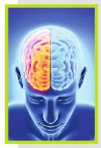

दशकों से पुरुषों और महिलाओं में बुद्धिमत्ता तथा व्यवहार के अंतर को लेकर बहस होती रही है, लेकिन अब वैज्ञानिक साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि जैविक रूप से पुरुष और महिला के मस्तिष्क में सैकड़ों जीन अलग-अलग ढंग से सक्रिय रहते हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि इन जीनों का अलग-अलग तरीके से सक्रिय होना मस्तिष्क विकारों, जैसे अल्जाइमर और पार्किंसन जैसी बीमारियों से जुड़ा हो सकता है। शोधकर्ताओं के अनुसार, पुरुष और महिला मस्तिष्कों के बीच ये आनुवंशिक अंतर विकास की प्रारंभिक अवस्था में ही स्थापित हो जाते हैं और संभवतः मस्तिष्क के विकास को आकार देने में भूमिका निभाते हैं। यह प्रवृत्ति न केवल मनुष्यों में, बल्कि अन्य प्राइमेट (वनमानुष) प्रजातियों में भी पाई गई है, जिससे संकेत मिलता है कि ये अंतर बहुत प्राचीन हैं। जीन गतिविधि में अंतर कई दशकों के शोध से यह पुष्टि हुई है कि पुरुषों और महिलाओं में मस्तिष्क की संरचना, कार्यप्रणाली और मानसिक रोगों की प्रवृत्ति में अंतर है। लेकिन यह स्पष्ट नहीं था कि इन अंतरों में कितना योगदान जीन का है और कितना पर्यावरण का। 2017 में किए गए एक अध्ययन में सैकड़ों पुरुषों और महिलाओं के मरणोपरांत मस्तिष्क ऊतक का विश्लेषण किया गया था।

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय
टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-42422221 पर या सीधे मेल से aapkepatra.haribhoomi@gmail.com पर भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

पायनियर
नई दिल्ली, शनिवार, 8 नवंबर 2025

मेयर बने ममदानी

जनता ने नकारी ट्रंप की राजनीति

इसे डोनाल्ड ट्रम्प के लिए व्यक्तिगत हार कहा जा सकता है, जोहरान ममदानी को न्यूयॉर्क शहर के मेयर के रूप में चुना गया है। और इस द्विआधारी का कारण सरल है: ममदानी उन सभी चीजों के लिए खड़े हैं जिन्हें ट्रम्प खत्म करना चाहते हैं, समाजवाद, पर्यावरण, प्रवासी, निष्पक्ष व्यापार और, सबसे ऊपर, सार्वजनिक जीवन में नैतिकता। उन्होंने ट्रम्प-समर्थित उम्मीदवार को हरा दिया है और ध्रुवीकरण और भय की राजनीति की उनकी कहानी को नष्ट कर दिया है, यह बयानबाजी पर तर्क की जीत है। दरअसल, उनकी जीत में कई चीजें पहली बार हुईं, 34 वर्षीय समाजवादी, भारतीय माता-पिता के बेटे और युगांडा में जन्मे, ने प्रतिष्ठान के दिग्गज, एंड्रयू कुओमो और दक्षिणपंथी रोवोकेटर को हराया, कर्टिस स्लिवा न्यूयॉर्क के पहले मुस्लिम, पहले दक्षिण एशियाई, अफ्रीका में जन्मे पहले और एक सदी से भी अधिक समय में सबसे कम उम्र के मेयर बनने वाले हैं। एक अज्ञात राज्य विधानसभा सदस्य से न्यूयॉर्क शहर के सबसे प्रतिष्ठित पद तक ममदानी की जबरदस्त वृद्धि सिर्फ एक व्यक्तिगत जीत नहीं है, यह एक वैचारिक मील का पत्थर है।

उनकी जीत ट्रम्प-शैली की राजनीति के लिए एक तीखी फटकार का प्रतिनिधित्व करती है, विभाजन, तमाशा और अन्य के प्रदर्शन पर बनी राजनीति। ऐसे समय में जब डोनाल्ड ट्रम्प लोकलुभावन आक्रोश और सांस्कृतिक हमले के साथ अमेरिका की रूढ़िवादी कथा पर हावी हो रहे हैं, ममदानी की जीत से पता चलता है कि मतदाता, कम से कम न्यूयॉर्क में, सहानुभूति, समावेशन और आर्थिक निष्पक्षता की ओर रुख करने के लिए तैयार हैं।

जब ममदानी ने 2024 के अंत में अपना अभियान शुरू किया, तो कुछ लोगों ने उन्हें गंभीरता से लिया। विश्लेषकों ने उन्हें आवास और कराधान के बारे में कट्टरपंथी विचारों वाले एक सीमांत समाजवादी के रूप में खारिज कर दिया। फिर भी, दृढ़ता, रचनात्मकता और कामकाजी वर्ग के न्यूयॉर्क वासियों के साथ एक प्रामाणिक संबंध के माध्यम से, ममदानी ने फिर से परिभाषित किया कि जमीनी स्तर का आंदोलन कैसा दिख सकता है। उनका अभियान कॉर्पोरेट दानदाताओं द्वारा नहीं बल्कि स्वयंसेवकों, सामुदायिक आयोजकों और पूरी तरह से डिजिटल-पहली रणनीति द्वारा संचालित था।

मजाकिया टिकटॉक वीडियो से लेकर बहुभाषी सड़क पर बातचीत तक, वह उन मतदाताओं तक पहुंचे जिन्हें लंबे समय से नजरअंदाज किया गया था - आप्रवासी, किरायेदार, गिग श्रमिक, और ट्रम्पोनॉमिक्स द्वारा कुचले गए युवा परिवार। उनके नीतिगत प्रस्ताव - किराए पर रोक और सामाजिक आवास से लेकर मुफ्त बसें, सार्वभौमिक बाल देखभाल और 30 डॉलर न्यूनतम वेतन तक - कट्टरपंथी लग सकते हैं, लेकिन एक ऐसे शहर में गहराई से प्रतिबिंबित होते हैं जो अपने ही लोगों के लिए तेजी से अप्रभावी हो रहा है। उन्होंने वैचारिक अमूर्तता को नहीं, बल्कि जीवंत अनुभव को प्रतिबिंबित किया। संघर्ष की निकटता से पैदा हुई उनकी सहानुभूति ने उनकी राजनीति को दुर्लभ नैतिक स्पष्टता से भर दिया।

फिर भी उनकी यात्रा सहज नहीं थी। उनकी क्षमाप्रार्थी मुस्लिम पहचान, आप्रवासी अधिकारों के लिए उनका मुखर समर्थन और गाजा में इजराइल के कार्यों की उनकी आलोचना ने भयंकर प्रतिक्रिया को आमंत्रित किया। कुओमो ने उन पर यहूदी विरोधी भावना को बढ़ावा देने₹ का आरोप लगाया, जबकि ट्रम्प ने उन्हें कम्युनिस्ट पागल करार दिया। लेकिन ममदानी की प्रतिक्रिया दृढ़ और सम्मानजनक थी: उन्होंने न तो अपने सिद्धांतों को कमजोर किया और न ही अपनी जड़ों से खुद को दूर किया। यह अमेरिका को याद दिलाता है कि नेतृत्व अभी भी अहंकार के बजाय सहानुभूति पर बनाया जा सकता है, और राजनीति अभी भी एक नैतिक खोज हो सकती है, आक्रोश का बाजार नहीं। इसमें कोई संदेह नहीं कि ममदानी को भारी परीक्षाओं का सामना करना पड़ेगा। लेकिन अभी के लिए, उनकी जीत एक बड़े संदेश का संकेत देती है - अंत में तर्क हमेशा प्रबल रहेगा, चाहे कुछ भी हो जाए!

प्रकृति और धर्म के विपरीत प्रगति

अधिकांश तथाकथित आधुनिक प्रौद्योगिकियां कच्ची, क्रूर और घटिया हैं? क्या होगा अगर मैं उन्हें भौतिक प्रकृति की अधूरी या यहां तक कि कुछ मामलों में गलत समझ पर आधारित प्रौद्योगिकियां कहूं? क्या होगा अगर हमें बताया जाए कि मानव प्रयास के विभिन्न क्षेत्रों में लगभग सभी आधुनिक प्रौद्योगिकियां पर्यावरण-प्रदूषणकारी और प्रकृति-अमित्र हैं?

अतुल सहगल
लेखक, प्रबंध परामर्शदाता हैं।

आधुनिक समय की तकनीकें चमक-दमक से भरपूर हैं। उन्हें श्रमसाध्य और पथप्रदर्शक अनुसंधान का उत्पाद घोषित किया जाता है। इन्हें विशाल ब्रह्मांड को नियंत्रित करने वाले वैज्ञानिक सिद्धांतों की महान खोजों और उस पर आधारित क्रांतिकारी आविष्कारों का परिणाम माना जाता है। उन्हें इस ग्रह पर रहने वाले अरबों मनुष्यों के जीवन में महान लाभकारी परिवर्तनों के अग्रदूत के रूप में सम्मानित किया जाता है।

माना जाता है कि इनका उद्देश्य उन 193 देशों के लिए आगे के आर्थिक विकास और विकास के साधन के रूप में है, जिनकी कुल आबादी दुनिया भर में 8 अरब है। लेकिन क्या होगा अगर मैं आपको बताऊं कि अधिकांश तथाकथित आधुनिक प्रौद्योगिकियां कच्ची, क्रूर और घटिया हैं? क्या होगा अगर मैं उन्हें भौतिक प्रकृति की अधूरी या यहां तक कि कुछ मामलों में गलत समझ पर आधारित प्रौद्योगिकियां कहूं? क्या होगा अगर हमें बताया जाए कि मानव प्रयास के विभिन्न क्षेत्रों में लगभग सभी आधुनिक प्रौद्योगिकियां पर्यावरण-प्रदूषणकारी और प्रकृति-अमित्र हैं? इसके अलावा, आप यह कैसे मानेंगे कि उपरोक्त अधिकांश प्रौद्योगिकियां मानवीय मूल्यों से रहित हैं? दुर्भाग्य से वे हैं।

हमें भौतिक प्रकृति के मूल सिद्धांतों तक जाना होगा। हमें ब्रह्मांड के सर्वज्ञ, दिव्य निर्माता द्वारा वैदिक ग्रंथों में प्रदान किए गए मूल, कालातीत ज्ञान आधार पर जाना होगा। सभी मनुष्य उसकी रचना हैं, और उसने 1.96 अरब वर्ष से भी अधिक पहले, सृष्टि के आरंभ में, कोडित और गूढ़ रूप में सारा ज्ञान सबसे पहले मनुष्यों को सौंपा था। वह मौलिक ज्ञान सार्वभौमिक, कालातीत और ब्रह्मांडीय ग्रंथों में सन्निहित है जिन्हें वेद कहा जाता है।

इसका कारण यह है कि ब्रह्मांड का स्वामी और निर्माता सबसे अच्छी तरह जानता है कि उसके द्वारा बनाए गए मनुष्यों को कैसे रहना और व्यवहार करना चाहिए-शांति, स्थिरता और स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए उन्हें किस प्रकार की तकनीकों का विकास और उपयोग करना चाहिए। उन्होंने मनुष्यों द्वारा परिश्रमपूर्वक पालन के लिए मनुष्यों को कोडित सिद्धांतों या मूल्यों का एक सेट प्रदान किया, जिसे धर्म कहा जाता है। धर्म धार्मिक जीवन जीने की संहिता है और इसके व्यापक दायरे में शुद्ध, निष्कलंक, सच्चा ज्ञान शामिल है जो सभी विज्ञानों और प्रौद्योगिकियों को भी कवर करता है। आइए देखें कि आज की प्रौद्योगिकियां वैदिक वैज्ञानिक साहित्य में वर्णित प्रकृति के सभी मूल तत्वों - वायु, पृथ्वी, अग्नि, जल और आकाश - पर किस प्रकार कठोर हैं।

आज के सतही परिवहन वाहन वायु-प्रदूषणकारी और पृथ्वी (मिट्टी)-प्रदूषणकारी हैं। इनमें ऑटोमोबाइल और हवाई जहाज शामिल हैं। इलेक्ट्रिक बैटरियों सहित इन वाहनों के कई हिस्से और घटक उपयोग के बाद बायोडिग्रेडेबल होते हैं।

बिजली उत्पादन के सभी तरीके-कोयला या डीजल-आधारित थर्मल, जल विद्युत, परमाणु ऊर्जा और यहां तक कि सौर और पवन ऊर्जा-पर्यावरण पर प्रसिद्ध हानिकारक प्रभावों के बिना नहीं हैं। सौर पैनल 25 वर्ष के जीवनकाल के बाद काफी हद तक बायोडिग्रेडेबल होते हैं। पवन ऊर्जा टरबाइन पक्षियों के लिए खतरा पैदा करते हैं। रासायनिक प्रक्रिया उद्योग अत्यधिक वायु-प्रदूषण कर रहे हैं। पेट्रोलियम और पेट्रोकेमिकल उद्योग पृथ्वी-प्रदूषणकारी और वायु-प्रदूषणकारी दोनों हैं। तेल-खुदाई और निष्कर्षण गतिविधियाँ पृथ्वी के नीचे बड़े छेद बनाती हैं, जो भूमिगत प्राकृतिक पदार्थों के अनुपात को बिगाड़ने के अलावा, पृथ्वी की

> **हमारी प्रौद्योगिकियां न केवल पर्यावरण-अनुकूल होनी चाहिए, बल्कि शाश्वत प्रासंगिक, दिव्य मानवीय मूल्यों के साथ भी जुड़ी होनी चाहिए। हमारे वैज्ञानिकों, इंजीनियरों और, सबसे बढ़कर, राजनीतिक नेताओं को उपरोक्त कड़वी सच्चाइयों के प्रति सचेत हो जाना चाहिए और इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, सुधारात्मक कार्रवाई करनी चाहिए।**

टेक्टोनिक प्लेटों के स्वभाव को भी बिगाड़ देती हैं। रसायनों द्वारा उपचार के बाद भी कारखानों के प्रदूषकों को नदियों और समुद्रों में छोड़ने के हानिकारक प्रभाव प्राकृतिक जल निकायों को प्रदूषित करते हैं, जिससे जलीय वनस्पतियों और जीवों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। रासायनिक उर्वरकों और आनुवंशिक रूप से संशोधित बीजों के निरंतर उपयोग से मिट्टी की उर्वरता का क्षरण हो रहा है और अनाज, फलों और सब्जियों की आंतरिक, प्राकृतिक गुणवत्ता और स्वाद कम हो रहा है।

ईथर, प्रकृति का दूसरा प्रमुख तत्व, मोबाइल टेलीफोनी टावरों और अन्य वायरलेस संचार उपकरणों से निकलने वाले माइक्रोवेव के रूप में विद्युत चुम्बकीय विकिरण द्वारा भारी रूप से प्रदूषित हो रहा है। इस महत्वपूर्ण पहलू पर अधिक विस्तार की आवश्यकता है। माइक्रोवेव कम आवृत्ति वाली तरंगें नहीं हैं; उनकी उच्च आवृत्ति होती है, जो विद्युत चुम्बकीय स्पेक्ट्रम पर रेडियो तरंगों और अवरक्त के बीच गिरती है। इनकी आवृत्ति रेडियो तरंगों से अधिक लेकिन दृश्य प्रकाश की तुलना में कम होती है। माइक्रोवेव की आवृत्ति लगभग 300 मेगाहर्ट्ज से 300 गीगाहर्ट्ज तक होती है और इसका उपयोग रडार, सेल फोन और खाना पकाने जैसे अनुप्रयोगों के लिए किया जाता है।

इन अनुप्रयोगों के लिए माइक्रोवेव ऊर्जा के व्यापक उत्पादन द्वारा प्राकृतिक पृष्ठभूमि विकिरण में माइक्रोवेव की सामग्री को बढ़ाया जा रहा है। यह ईथर अंतरिक्ष में माइक्रोवेव के प्राकृतिक अनुपात को परेशान कर रहा है और इसलिए इसे प्रदूषित कर रहा है। और ग्लोबल वार्मिंग स्पष्ट रूप से प्रदर्शित कर रही है कि हमारी काल्पनिक प्रौद्योगिकियाँ माँ प्रकृति के सूक्ष्म आदिम तत्व अग्नि (अग्नि) को दूषित कर रही हैं। सबसे हालिया तकनीकी चमत्कार कंप्यूटर हार्डवेयर, कंप्यूटर सॉफ्टवेयर और कृत्रिम बुद्धिमत्ता हैं।

इनका मुख्य उद्देश्य सकल आर्थिक उत्पादन को बढ़ाना या मशीनों या कंप्यूटिंग एल्गोरिदम द्वारा मनुष्यों का प्रतिस्थापन करना है। इससे दुर्लभ पृथ्वी धातुओं सहित अधिक से अधिक प्राकृतिक सामग्रियों का दोहन होगा, और उपयोग के बाद अवशिष्ट पदार्थ निकलेंगे जो केवल आंशिक रूप से पुनर्नवीनीकरण योग्य हैं, और उनकी पुनर्चक्रण प्रक्रियाएं भी पर्यावरण की दृष्टि से हानिकारक हैं।

अब हम मानवीय मूल्यों पर आते हैं जो प्रौद्योगिकियों और उनके उपयोग के साथ जुड़े होने चाहिए। एक वैदिक व्युत्पन्न पाठ, महा उपनिषद, यह संदेश देता है कि दुनिया एक परिवार है और सभी मनुष्य एक ही निमार्ता की संतान होने के कारण भाईचारे के बंधन से जुड़े हुए हैं। यह दिव्य संदेश अप्रत्यक्ष रूप से बताता है कि मनुष्यों को, राष्ट्रों और महाद्वीपों से परे, अन्य मनुष्यों के साथ एक वैश्विक परिवार के सदस्यों के रूप में व्यवहार करना चाहिए और संस्थानों, प्रणालियों और यहां तक कि प्रौद्योगिकियों और प्रौद्योगिकी-आधारित प्रक्रियाओं को तदनुसार डिजाइन करना चाहिए।

इसके अलावा, संयम (लालच न करना), करुणा, ईमानदारी और सच्चाई ऐसे मूल्य हैं जिनका तकनीकी उपकरणों के विकास और उपयोग दोनों में पालन किया जाना चाहिए। उन्हें न्यायसंगत धन सृजन और वितरण के लिए अनुकूल होना चाहिए। सीधे शब्दों में कहें तो, हमारी प्रौद्योगिकियां न केवल पर्यावरण-अनुकूल होनी चाहिए, बल्कि शाश्वत प्रासंगिक, दिव्य मानवीय मूल्यों के साथ भी जुड़ी होनी चाहिए।

हमारे वैज्ञानिकों, इंजीनियरों और, सबसे बढ़कर, राजनीतिक नेताओं को उपरोक्त कड़वी सच्चाइयों के प्रति सचेत हो जाना चाहिए और इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, सुधारात्मक कार्रवाई करनी चाहिए।

आइए हम प्रकृति के शक्तिशाली, प्रतिशोधात्मक प्रकोप का सामना करने के लिए इंतजार न करें, जिसके कुछ हल्के लक्षण पहले से ही जलवायु परिवर्तन, शहरों में बाढ़, सड़कों का टूटना, बर्फ की चोटियों का पिघलना, हिंसक भूस्खलन और ढहती पहाड़ियों के रूप में देखे जा रहे हैं।

ध्यानः आधुनिक जीवन के तनाव का उपचार

> **यदि मैं नकारात्मक या व्यर्थ विचारों को अनुमति देता हूं तो ध्यान कठिन हो जाता है। अगर मैं अपना दिमाग साफ करूं और अपने विचार सकारात्मक रखूं, तो शांति का अनुभव करना आसान है। इसके बारे में सिर्फ पढ़ना ही काफी नहीं है। अतः आज ही ध्यान करना शुरू करें!**

ब्रह्मकुमार निकुंज
लेखक, आध्यात्मिक उपदेशक हैं।

पिछले लगभग 50 वर्षों या उससे अधिक समय में, चिकित्सा पेशेवरों द्वारा यह तेजी से महसूस किया गया है कि कई बीमारियाँ तनाव या आघात के कारण होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप अधिक से अधिक मौतें होती हैं। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि कुछ साल पहले तनाव जैसी कोई चीज, जिसे लेकर हम इतने गंभीर नहीं थे, आज हमारी रोजमर्रा की जिंदगी का हिस्सा बन गई है? आज, तनाव से संबंधित बीमारियों और उनके उपचार पर साहित्य की बाढ़ आ गई है, और आधुनिक पुरुषों और महिलाओं पर तनाव के प्रभावों पर बात करना या लिखना आजकल लगभग एक फैशन बन गया है।

हालांकि हम सभी तनाव के बारे में बात करते हैं, लेकिन अक्सर यह स्पष्ट नहीं होता है कि तनाव वास्तव में क्या है। भले ही विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्वास्थ्य की अपनी प्रसिद्ध परिभाषा में, स्वास्थ्य के सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक पहलुओं को ध्यान में रखा है, तनाव के कुछ बहुत महत्वपूर्ण पहलुओं को अब तक डॉक्टरों, सामाजिक वैज्ञानिकों, अपराधशास्त्रियों, प्रशासकों, इतिहासकारों और अन्य लोगों द्वारा नजरअंदाज किया गया है, नजरअंदाज किया गया है, या कम से कम कम महत्व दिया गया है। बहुत से लोगों को लगता है कि तनाव एक ऐसी चीज है जो उन्हें किसी घटना के दौरान होती है जैसे कि शारीरिक चोट, भावनात्मक दिल टूटना, या पारिवारिक झगड़ा आदि।

कुछ लोगों का कहना है कि तनाव एक ऐसी भावना है जो किसी आतंकवादी हमले, रेल दुर्घटना या विमान दुर्घटना जैसी घटना के जवाब में हमारे दिमाग और शरीर द्वारा अनुभव की जाती है। हालांकि, विशेषज्ञों का मानना है कि हालांकि तनाव में घटनाएं और उन पर हमारी प्रतिक्रियाएं शामिल होती हैं, लेकिन ये इसे पैदा करने वाले सबसे महत्वपूर्ण कारक नहीं हैं। जिन स्थितियों में हम खुद को पाते हैं उनके बारे में हमारे विचार ऊपर उल्लिखित अन्य कारणों की तुलना में अधिक गंभीर हैं।

हमें यह समझने की आवश्यकता है कि जब हमारे साथ कुछ होता है, तो हम स्वचालित रूप से मानसिक रूप से स्थिति का मूल्यांकन करते हैं और निर्णय लेते हैं कि क्या यह वास्तव में हमारे लिए खतरनाक है, हमें स्थिति से कैसे निपटना है, और हम किन कौशलों का उपयोग कर सकते हैं। इसलिए, अगर हमें लगता है कि स्थिति की मांगें हमारे कौशल पर भारी पड़ती हैं, तो हम स्थिति को तनावपूर्ण मानते हैं। दूसरी ओर, यदि हमें लगता है कि हमारा मुकाबला करने का कौशल स्थिति की मांगों से अधिक है, तो हम इसे तनावपूर्ण नहीं मानते हैं। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, कम मात्रा में तनाव अच्छा है और कभी-कभी आवश्यक भी होता है क्योंकि यह व्यक्ति को प्रेरित करता है और उसे अधिक उत्पादक बनने में मदद करता है। हालाँकि, इसकी अधिकता या इसकी तीव्र प्रतिक्रिया घातक हो सकती है। इसलिए, जिस तरह से हम किसी तनाव-उत्तेजक घटना से निपटते हैं, वह हमारे स्वास्थ्य पर इसके प्रभाव को निर्धारित करेगा। मूल विचार स्वयं को और तनावपूर्ण घटनाओं के प्रति हमारी प्रतिक्रियाओं को समझना है, जिससे उन्हें अधिक प्रभावी ढंग से संभालना सीखना है। किसी को यह समझना चाहिए कि तनाव प्रबंधन आधुनिक जीवन के दबावों और अशांति से बचने या भागने के बारे में नहीं है। नहीं! वास्तविक अर्थ में, यह इस बात की सराहना करना सीखने के बारे में है कि शरीर बाहरी दबावों पर कैसे प्रतिक्रिया करता है और ऐसे कौशल विकसित करना है जो शरीर के समायोजन को बढ़ाते हैं।

गीता में कहा गया है कि मनुष्य अपना सबसे अच्छा मित्र या अपना सबसे बड़ा शत्रु स्वयं हो सकता है। अपना सबसे अच्छा दोस्त बनने के लिए, मुझे खुद के साथ समय बिताना होगा, खुद से प्यार करना और सम्मान करना सीखना होगा ताकि मैं दूसरों के लिए भी ऐसा कर सकूं। मेरे दिमाग में जो चल रहा है उसे देखकर, मैं धीरे से उसे सही रास्ते पर वापस ला सकता हूं।

यदि मैं नकारात्मक या व्यर्थ विचारों को अनुमति देता हूं तो ध्यान कठिन हो जाता है, लेकिन अगर मैं अपना दिमाग साफ करूं और अपने विचार सकारात्मक रखूं, तो शांति का अनुभव करना आसान है। इसके बारे में सिर्फ पढ़ना ही काफी नहीं है, उठें और आज ही ध्यान करना शुरू करें!

आप की बात

दुख के गानों का नकारात्मक असर

आज के दौर में संगीत हर किसी की जिंदगी का अहम हिस्सा बन चुका है। कोई खुश हो या दुखी, हर भावना के लिए एक गीत मौजूद है। परंतु पिछले कुछ वर्षों में सैड गानों का चलन तेजी से बढ़ा है। खासकर युवाओं के बीच ये गाने बेहद लोकप्रिय हो गए हैं। टूटे रिश्ते, प्रेम में असफलता या किसी तरह की मानसिक उदासी के बाद लोग अक्सर सैड गानों का सहारा लेते हैं, यह सोचकर कि इससे दिल को सुकून मिलेगा। मगर हकीकत इससे उलट है, ऐसे गाने मन के दर्द को मिटाने की बजाय और गहरा कर देते हैं। सैड गानों के बोल और धुन आम तौर पर निराशा, बिछड़ाव, टूटे भरोसे और अकेलेपन की भावना को दशार्ते हैं। जब कोई व्यक्ति बार-बार ऐसे गीत सुनता है, तो उसका मन उन्हीं भावनाओं में डूबने लगता है। दिमाग में नकारात्मक विचारों का जमाव होता है और व्यक्ति अवचेतन रूप से खुद को दुखी महसूस करने लगता है। इससे मानसिक ऊर्जा कम होती है, आत्मविश्वास घटता है और जीवन के प्रति उत्साह धीरे-धीरे खत्म होने लगता है। रात में अकेले बैठकर ऐसे गाने सुनना नींद की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है, जिससे तनाव और चिंता बढ़ती है। लंबे समय तक यह आदत मानसिक रोग जैसे डिप्रेशन का कारण भी बन सकती है। कभी-कभी सैड गाने मन के दर्द को व्यक्त करने का जरिया बन जाते है।

– **संदीप कुमार**, मधुपुर, झारखंड

राजनीति या फैमिली बिजनेस

अपने बयानों से कांग्रेस को अक्सर असहज करने वाले पार्टी के वरिष्ठ नेता एवं तिरुअनंतपुरम के सांसद शशि थरूर ने एक बार फिर अपने एक लेख में कुछ ऐसी बातें कही हैं, जिनसे संसद में विपक्ष के नेता राहुल गांधी तथा सांसद प्रियंका गांधी समेत कई नेता असहज हो सकते हैं कारण थरुर का कहना है कि वंशवादी राजनीति भारतीय लोकतंत्र के लिए एक गम्भीर खतरा है और अब समय आ गया है कि भारत वंशवाद की जगह मेरिटोक्रेसी को अपनाऐ। इंटरनेशनल मीडिया आर्गनाइजेशन प्रौजेक्ट सिंडिकेट के लिए लिखे एक लेख में थरुर ने कहा है कि जब राजनैतिक सत्ता काबिलियत, प्रतिबद्धता या जमीनी जुडाव के बजाय वंश के आधार पर तय होती है तो इससे शासन विधि की गुणवत्ता प्रभावित होती है। वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में वंशवादी उत्तराधिकार फैला हुआ है, भारत में राजनीति, बिजनेस न्यायपालिका और फिल्म इंडस्ट्री समेत सभी सेक्टर में वंशवाद का काफी असर देखा जा सकता है एवं यह ट्रेड कुछ चुनिंदा परिवारों तक ही मौकों को सीमित कर देता है। इण्डियन पालिटिक्स आर ए फैमिली बिजनेस शीर्षक वाले लेख में थरुर ने कहा है कि दशकों से एक ही परिवार भारतीय राजनीति के परिदृश्य पर हावी रहा है जिसे नेहरु, गांधी वंश कह सकते हैं जिसका प्रभाव भारत की आजादी की लड़ाई से जुड़ा हुआ है लेकिन इसने इस विचार को भी मजबूत किया है कि राजनैतिक नेतृत्व जन्म सिद्ध अधिकार हो सकता है।

– **मनमोहन राजावत**, शाजापुर

जेएनयू में वामपंथ की जीत

अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के छात्रसंघ चुनाव में वामपंथियों की जीत बिहार चुनाव के मध्य नजर बेहद महत्वपूर्ण है। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के 2025 छात्रसंघ चुनाव में लेफ्ट यूनियन ने प्रेसिडेंट, वाइस प्रेसिडेंट, जॉइंट सेक्रेटरी और काउंसलर के पदों पर शानदार जीत हासिल की जबकि अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद अपना खाता भी नहीं खोल पाई। तीन साल के अंतराल के बाद हुए इस चुनाव में 40 से अधिक पैनल मैदान में थे, लेकिन लेफ्ट ने भाजपा विरोधी माहौल का फायदा उठाकर एकजुट वोट बैंक बनाया और जीत हासिल की, जबकि अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद ने युवाओं के बीच बेरोजगारी, फीस हाइक और कैंपस स्वायत्तता जैसे मुद्दों कुछ छात्रों के समक्ष रखा था लेकिन कामयाबी नहीं मिल सकी। लेफ्ट की जीत युवा छात्रों के लेफ्ट-वामपंथी झुकाव को मजबूत करेगी, जो भाजपा के राष्ट्रवाद' के नॅरेटिव को चुनौती देती नजर आएगी। बिहार के विधानसभा चुनाव में भी लेफ्ट की जीत विपक्षी एकता का प्रतीक बनेगी क्योंकि काफी बड़ी संख्या में बिहार के छात्र जेएनयू में पढ़ाई के लिए आते हैं। कैंपस राजनीति मुख्यधारा में वामपंथी सक्रियता के कारण युवा सक्रियता बढ़ेगी, जो किसान-मजदूर आंदोलनों से जुड़कर जनवादी आंदोलन को बढ़ावा मिलेगा। वामपंथियों के अनुसार यह जीत लोकतंत्र की जीत है।

– **वीके जाटव**, नई दिल्ली

तोल मोल के बोल

राहुल गांधी की मुखरता अगर तथ्यों पर आधारित न हो, तो वह खुद उनके लिए और उनकी पार्टी के लिए नुकसानदेह सिद्ध होती है। एक जिम्मेदार नेता प्रतिपक्ष से जनता यह अपेक्षा करती है कि वह सरकार की गलतियों को ठोस प्रमाणों और विश्वसनीय आंकड़ों के साथ उजागर करे ताकि लोगों को वास्तविकता का पता चले और उसका लोकतांत्रिक विरोध हो सके। लेकिन अफसोस कि अब तक राहुल केवल जनभावनाओं को भड़काने वाले बयानों से माहौल बनाने की जुगत में लगे रहें हैं। हरियाणा चुनाव और ब्राजील मॉडल जैसे उदाहरणों ने यह स्पष्ट किया है कि बिना तथ्यों के आरोप राजनीतिक विश्वसनीयता को कमजोर करते हैं।उन्हें यह समझना चाहिए कि विपक्ष की भूमिका केवल विरोध करने की नहीं, बल्कि रचनात्मक सुझाव देने की भी होती है। यदि गंभीरता,अध्ययन और आंकड़ों पर आधारित संवाद की रणनीति अपनाई तो जनता न सिर्फ सुनेगी बल्कि नेतृत्व को स्वीकारेगीभी। फिलहाल उनकी अति-उत्साही और अक्सर असंगत मुखरता उन्हें हास्यास्पद स्थिति में ला रही है। बेहतर होगा कि वे विचार, विवेक और संयम का संतुलन बनाते हुए एक परिपक्व राजनीतिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करें।

– **अमृतलाल मारू 'रवि'**, इन्दौर

पाठकगण अपने विचार responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भेज सकते हैं।

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 225

उच्च शिक्षा में सुधार जरूरी

नवीनतम क्यूएस एशिया यूनिवर्सिटी रैंकिंग उन चुनौतियों की ओर इशारा करती हैं जिनका सामना भारत को विश्व की सेवा क्षेत्र की राजधानी के रूप में अपनी पहचान बनाने के लिए करना पड़ रहा है। भारत दुनिया की अग्रणी कंपनियों के वैश्विक क्षमता केंद्रों के लिए एक पसंदीदा स्थान के रूप में अपनी स्थिति को अपनी बढ़ती घरेलू बौद्धिक पूंजी का एक संकेतक मानता है। लेकिन वैश्विक उच्च शिक्षा का विश्लेषण करने वाली फर्म, क्वाक्वेरेली साइमंड्स (क्यूएस) द्वारा संकलित वार्षिक रैंकिंग से पता चलता है कि देश अपनी उच्च शिक्षा में गंभीर सुधार किए बिना इस मानव संसाधन पर भरोसा नहीं कर पाएगा।

भारत ने न केवल सबसे अधिक प्रतिनिधित्व वाली उच्च शिक्षा प्रणाली के रूप में अपना शीर्ष स्थान चीन के हाथों गंवा दिया, बल्कि उसके कई प्रमुख संस्थानों की रैंकिंग में भी उल्लेखनीय गिरावट आई। इस वर्ष 137 भारतीय विश्वविद्यालयों ने इस सूची में प्रवेश किया, जिससे इसमें शामिल देश के विश्वविद्यालयों की कुल संख्या 294 हो गई। उच्च तकनीकी शिक्षा को बढ़ावा देने की चीन की ऊर्जावान और सक्षम नीति का अंदाजा इसके 261 संस्थानों के जुड़ने से लगाया जा सकता है जिससे वहां के संस्थानों की कुल संख्या 395 हो गई है। कोई भी भारतीय संस्थान शीर्ष 10 में जगह नहीं बना पाया। इसमें हॉन्ग कॉन्ग, चीन और वैश्विक नवाचार के उभरते केंद्र सिंगापुर के संस्थान रहे। भारत का शीर्ष प्रदर्शन करने वाला विश्वविद्यालय भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), दिल्ली रहा लेकिन उसकी 59वीं रैंकिंग पिछले वर्ष के 44वें स्थान से 15 पायदान नीचे है। आईआईटी बंबई 2025 में 48 से गिरकर 71 पर आ गया और आईआईटी खड़गपुर पिछले साल के 60 से गिरकर 77 पर पहुंच गया। मद्रास और कानपुर सहित सभी प्रमुख आईआईटी ने कम से कम 2021 के बाद से अपनी सबसे निचली रैंक दर्ज की। भारत की शीर्ष 10 रैंकिंग में शामिल सात संस्थानों में से केवल चंडीगढ़ विश्वविद्यालय ही 120 से 109 पर पहुंचा है। कोई भी भारतीय विश्वविद्यालय वैश्विक स्तर पर शीर्ष 100 में स्थान नहीं रखता है। हालांकि चीन के कई विश्वविद्यालय इसमें शामिल हैं, जिनमें 14वें स्थान पर पेकिंग विश्वविद्यालय है।

विडंबना है कि यह खराब प्रदर्शन ऐसे समय में दिख रहा है, जब भारत सरकार ने पिछले एक दशक में उच्च शिक्षा में कई सुधार पेश किए हैं। इन सुधारों में, आईआईटी के लिए अधिक शासी स्वायत्तता, केंद्रीय विश्वविद्यालयों के लिए संसाधन जुटाने के मानदंडों में ढील, और विदेशी विश्वविद्यालयों के प्रवेश का रास्ता आसान बनाना शामिल है। लेकिन इनमें से किसी ने भी भारतीय विद्यार्थियों को उच्च अध्ययन के लिए स्वदेश में ही रहने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार विदेश में पढ़ने वाले भारतीय विद्यार्थियों की संख्या इस साल 18 लाख तक पहुंच गई है, जो 2023 में 13 लाख थी। विदेश जाने में यह स्थिर वृद्धि शीर्ष भारतीय संस्थानों में उपलब्ध सीमित सीटों के साथ-साथ इन क्षेत्रों में उपलब्ध रोजगार के अवसरों के कारण है। ये रुझान भारतीय उच्च शिक्षा में गुणवत्ता की गंभीर कमी की ओर इशारा करते हैं। इनसे यह भी पता चलता है कि केंद्रीय और राज्यों के विश्वविद्यालयों को शिक्षण मानकों और संसाधनों पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

यह स्थिति केवल तकनीकी और वैज्ञानिक अनुसंधान पर केंद्रित संस्थानों की ही नहीं है, जिनके लिए क्यूएस रैंकिंग के मानदंड अनुकूल प्रतीत होते हैं, बल्कि कला और मानविकी के लिए भी ऐसा ही है। कला और मानविकी की उपेक्षा को कम करके नहीं आंका जा सकता। विश्वविद्यालयों में नियुक्तियों में बढ़ते हस्तक्षेप और केंद्र व राज्य सरकारों द्वारा विशिष्ट विचारधाराओं के अनुरूप पाठ्यक्रम तैयार करने के प्रयासों ने उच्च शिक्षा की ईमानदारी और गुणवत्ता को लगातार कमजोर किया है। प्रतिभाशाली शिक्षाविद और उत्कृष्ट छात्र बेहतर संसाधनों वाले स्वतंत्र अनुसंधान के अवसरों की तलाश में तेजी से अन्यत्र जा रहे हैं। अनुसंधान के लिए एक तटस्थ लेकिन सक्षम वातावरण, चाहे वह कला का क्षेत्र हो या विज्ञान का, वह आदर्श है जिसकी ओर भारत को लक्ष्य बनाना चाहिए।

विनय सिन्हा

जेन-जी का विद्रोह और भारत के लिए सबक

हमारे पड़ोसी देशों में हाल के दौर में जो भी विद्रोह हुए हैं उनकी जड़ें भ्रष्टाचार के विरोध में निहित रही हैं। इसमें भारत के लिए भी सबक छिपे हुए है। बता रहे हैं अजय छिब्बर

हाल ही में आयोजित सरदार पटेल स्मृति व्याख्यान में देश के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजित डोभाल ने उचित ही यह बात रेखांकित की है कि बांग्लादेश, नेपाल और श्रीलंका में सरकारों के गिरने में शासन व्यवस्था एक प्रमुख कारण रही। जेन जी (सन 1997 से 2012 के बीच पैदा हुई पीढ़ी) के विद्रोहों ने भारत के पास-पड़ोस में मौजूद भ्रष्ट और गूंगी-बहरी सरकारों को गिरा दिया और यह सिलसिला आगे बढ़ता नजर आ रहा है।

ताजा नाम है हिंद महासागर में मौजूद मेडागास्कर का जहां प्रदर्शनकारियों का दावा है कि वे नेपाल और श्रीलंका से प्रेरित हुए। इसी प्रकार इंडोनेशिया, फिलिपींस, केन्या और मोरक्को में भी जेनजी प्रदर्शनों ने सरकारों को अपनी नीतियां बदलने के लिए विवश किया। एक सामान्य प्रतीक मसलन फूस से बनी टोपी पहने एक हंसती हुई खोपड़ी, इन प्रदर्शनों का मुख्य प्रतीक बनती जा रही है। यह जापानी मांगा और एनिमेशन सिरीज वन पीस से प्रेरित है जिसमें समुद्री डकैतों का एक गुट भ्रष्ट सरकारों से लोहा लेता है।

इनमें से प्रत्येक विद्रोह की तात्कालिक वजह थोड़ी अलग है। बांग्लादेश में इसकी वजह थी सरकारी नौकरी में कोटा सिस्टम वापस लाने का निर्णय, नेपाल में सोशल मीडिया पर प्रतिबंध, इंडोनेशिया में सांसदों के लिए ऊंचा वेतन और मैडागास्कर में बिजली और पानी की कमी। परंतु इन विद्रोहों की व्यापक वजह एक ही रही है, भले ही तात्कालिक प्रेरणा कुछ भी रही हो।

युवाओं के तेवर बगावती हैं क्योंकि अवसरों की कमी है और सेवाओं की गुणवत्ता खराब। परंतु इन तमाम विद्रोहों में एक साझा वजह भी है: भ्रष्टाचार का विरोध। सोशल मीडिया ने युवाओं को इस बात को लेकर जागरुक बना दिया है कि अभिजात सरकारें कितनी निष्प्रभावी और भ्रष्ट हैं और कैसे वे उनका जीवन और भविष्य बरबाद कर रही हैं।

ट्रांसपैरेंसी इंटरनैशनल (टीआई) हर वर्ष भ्रष्टाचार धारणा सूचकांक प्रकाशित करता है। यह सूचकांक 180 देशों में भ्रष्टाचार को लेकर कारोबारियों की धारणा पर आधारित होता है। इन्हें 0 से 100 के पैमाने पर आंका जाता है जहां उच्च स्कोर का अर्थ होता है कम भ्रष्टाचार। टीआई के स्कोर के अनुसार देखा जाए तो बांग्लादेश में भ्रष्टाचार बहुत अधिक है और उसे 150वां स्थान दिया गया है। इसी प्रकार मेडागास्कर को 140वां स्थान और श्रीलंका को 121वां स्थान दिया गया है। इन सभी देशों में भ्रष्टाचार बहुत अधिक बढ़ा है। नेपाल भी बहुत भ्रष्ट देश माना गया है और उसे 107वां स्थान दिया गया है लेकिन टीआई के मुताबिक बीते एक दशक में उसके भ्रष्टाचार में अधिक इजाफा नहीं हुआ है। परंतु नेपाल में युवा बेरोजगारी की दर 20.8 फीसदी है जो बहुत अधिक है। यह श्रीलंका से थोड़ी ही कम है जहां इसका आंकड़ा 22.5 फीसदी है। वास्तविक बेरोजगारी काफी अधिक हो सकती है।

अब विरोध प्रदर्शन लैटिन अमेरिका के पेरू तक फैल गया है जिसे सूचकांक में 127वां स्थान मिला है। हाल के वर्षों में वहां भ्रष्टाचार में भारी इजाफा हुआ है। वे देश जहां भ्रष्टाचार का स्तर बहुत अधिक है और जहां बहुत अधिक जोखिम है वे हैं मेक्सिको (140वां स्थान) और पाकिस्तान (135वां स्थान)। पूरे एशिया में हमें चीन, दक्षिण कोरिया, ताइवान और वियतनाम में भ्रष्टाचार विरोधी प्रयासों में काफी सुधार देखने को मिला है लेकिन इंडोनेशिया, फिलिपींस और थाईलैंड में यह नहीं नजर आया है। भ्रष्टाचार सूचकांक में सबसे अधिक सुधार दर्शाने वाले देश का नाम है वियतनाम (88वां स्थान), और यही वजह है कि वह आर्थिक क्षेत्र में भी बेहतर प्रदर्शन कर रहा है। वियतनाम की सबसे अमीर महिला ट्रुऑन्ग माई लैन को वित्तीय धोखाधड़ी के मामले में सजा सुनाया जाना यह दिखाता है कि वियतनाम भ्रष्टाचार से निपटने को लेकर कितना गंभीर है।

यह अनुमान लगाना तो मुश्किल है कि अगला विद्रोह कहां होगा लेकिन उम्मीद की जा सकती है कि बढ़ती अनिश्चितता और भू-आर्थिक विभाजन के बीच ऐसी घटनाएं बढ़ेंगी। क्या भारत के लिए भी इसमें कुछ सबक हैं?

भारत इस सूची में 96वें स्थान पर है और राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) सरकार के पहले कार्यकाल में उसके टीआई भ्रष्टाचार स्कोर में कुछ सुधार नजर आया लेकिन बाद में वे तमाम फायदे नदारद हो गए और इस आंकड़े में हम दोबारा 2014 के स्तर पर फिसल गए।

ये स्कोर व्यवसायों की धारणा पर आधारित होते हैं। लेकिन नागरिकों का क्या? वे सरकारी एजेंसियों से काम कराने, बिल भरने, ड्राइविंग लाइसेंस प्राप्त करने, या कानूनी और संपत्ति से जुड़े लेन-देन में अपने दैनिक जीवन में किस स्तर का भ्रष्टाचार झेलते हैं? प्रमाण बताते हैं कि बिल भुगतान और टैक्स फाइलिंग के डिजिटलीकरण के बावजूद भारतीय नागरिकों को भारी मात्रा में भ्रष्टाचार का सामना करना पड़ता है। आप जिससे भी मिलें, उसके पास घूसखोरी की कोई भयावह कहानी जरूर होगी। हमें केवल किस्से-कहानियों पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं है। ट्रांसपैरेंसी इंटरनैशनल के 2020 के ग्लोबल करप्शन बैरोमीटर में सरकारी अधिकारियों के साथ लोगों के संपर्क को लेकर सर्वेक्षण किया गया और पूछा गया कि क्या उन्होंने कभी रिश्वत दी है।

सर्वेक्षण में पाया गया कि जिन नागरिकों का सरकारी अधिकारियों से कोई काम पड़ा, उनमें सबसे अधिक 39 फीसदी भारतीयों ने रिश्वतखोरी की बात कही। यह बांग्लादेश, नेपाल और श्रीलंका सहित किसी भी देश से अधिक आंकड़ा है। भारत में घूस लेना और भ्रष्टाचार अब एक स्वीकार्य बात बन चुका है। डिजिटलीकरण के बावजूद अधिकारी किसी न किसी प्रकार रिश्वत लेने का तरीका तलाश कर ही लेते हैं। उच्च स्तर पर देखें तो इलेक्टोरल बॉन्ड की योजना बिना किसी पारदर्शिता के बड़े पैमाने पर राजनीतिक फंडिंग का मौका प्रदान करती है। परंतु भ्रष्टाचार लोगों के दैनिक जीवन को प्रभावित करता है मसलन पुलिस से काम, न्यायिक प्रक्रिया, लाइसेंस हासिल करना या संपत्ति से संबद्ध लेनदेन आदि। इसे छोटे स्तर का भ्रष्टाचार कहा जाता है।

इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि पड़ोसी मुल्कों की तरह भारत में जेनजी जैसा विद्रोह होगा ही। भारत का विशाल आकार और मजबूत संस्थागत ढांचा इसे एक अलग परिदृश्य में रखता है लेकिन इसके बावजूद कुछ हिस्सों में आशंकाएं बरकरार हैं। प्रवासन ने एक सुरक्षा वॉल्व का काम किया है।

बिहार, उत्तर प्रदेश और ओडिशा से युवा बड़ी संख्या में देश के दूसरे हिस्सों में काम करने के लिए जा रहे हैं। परंतु इससे उन राज्यों में तनाव पैदा हो रहा है जिनमें से कुछ ने अब अपने नागरिकों के लिए कोटा प्रणाली लागू कर दी है। हालांकि प्रवासियों से उन्हें भी फायदा मिलता है। इसके बावजूद पड़ोसी देशों में हुए विद्रोह में भारत के लिए चेतावनी छिपी हुई है। भारत को केवल युवा बेरोजगारी ही नहीं बल्कि उस गहरे और व्यापक भ्रष्टाचार पर भी निशाना साधना होगा जो पूरे तंत्र में फैला हुआ है और जो नागरिकों पर एक भारी कर की तरह प्रभाव डालता है।

(लेखक जॉर्ज वॉशिंगटन विश्वविद्यालय के इंस्टीट्यूट फॉर इंटरनेशनल इकनॉमिक पॉलिसी में विशिष्ट विजिटिंग स्कॉलर हैं)

लालू की विरासत तेजस्वी के लिए दोधारी तलवार

सियासी हलचल

आदिति फडणीस

'**सावधान** रहें। चेहरे भले ही बदल गए हों। लेकिन लोग अब भी वही हैं।' यह बात केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने पिछले महीने बिहार के दरभंगा में अपनी रैली में कही थी। शाह ने कहा, 'जंगलराज नए वेश में वापस आने की कोशिश करेगा। उन्हें बाहर रखने की जिम्मेदारी आपकी है।'

कपड़े निश्चित रूप से बदल गए हैं। तेजस्वी यादव रंग-बिरंगी टी-शर्ट और जींस पहनकर जनसभाओं को संबोधित करते हैं। सफेद खादी का चलन खत्म हो गया है। और गृह मंत्री की टिप्पणी बिल्कुल वही दिखाती है जो वह दिखाना चाहते हैं, यही कि राष्ट्रीय जनता दल (राजद) नए नेतृत्व के अधीन है।

◆ नया नेतृत्व? पूरा पटना संजय यादव की चर्चा कर रहा है, जो बिहार में हरियाणा से आए एक बेहद कीमती व्यक्ति हैं। तेजस्वी कहते हैं कि संजय यादव उनके 'दार्शनिक, मार्गदर्शक और ट्यूशन टीचर' हैं। लेकिन उनकी बहिन रोहिणी समेत दूसरे लोग कहते हैं कि वह इससे कहीं बढ़कर हैं। संजय और तेजस्वी की मुलाकात 2011 के आसपास अखिलेश यादव के जरिये हुई थी। (हरियाणवी प्रतिभाओं में कुछ तो ऐसा है कि राजद उन्हें चुंबक की तरह अपनी ओर खींचता है। लालू प्रसाद के दाहिने हाथ और पूर्व केंद्रीय मंत्री प्रेम चंद गुप्ता मूल रूप से हिसार के थे और उन्होंने एक निर्यातक-आयातक के रूप में शुरुआत की और बाद में लालू प्रसाद के सलाहकार बन गए।) संजय यादव कंप्यूटर साइंस की पढ़ाई के बाद हरियाणा के महेंद्रगढ़ में तब तक एक शांत जीवन बिता रहे थे, जब तक कि उन्हें बिहार की राजनीतिक हलचल में नहीं डाल दिया गया। यदि तेजस्वी की कुछ बहिनों और भाई तेज प्रताप की बात पर विश्वास किया जाए तो संजय यादव ही परिवार के दिल में सेंध लगाने के लिए जिम्मेदार हैं, खासकर तब जब लालू प्रसाद के लंबे समय से वफादार रहे अब्दुल बारी सिद्दीकी के दावे को दरकिनार कर उन्हें 2024 में राज्य सभा सीट दी गई।

तेजस्वी यादव महज चार महीने के थे जब उनके पिता बिहार के मुख्यमंत्री बने। उन्होंने दिल्ली में स्कूली शिक्षा प्राप्त की, लेकिन पेशेवर क्रिकेट खेलने के लिए दसवीं कक्षा में पढ़ाई छोड़ दी। स्कूल में ही उनकी मुलाकात अपनी पत्नी, जो उस समय उनकी सहपाठी थीं, रेचल गोडिन्हो (अब राजश्री यादव) से हुई। वह हरियाणा से ही ताल्लुक रखती हैं। परिवार के विरोध के बावजूद दोनों ने शादी कर ली। अब तीस के दशक में पहुंच चुके तेजस्वी यादव रैलियों में कहते हैं, 'मैं अभी युवा हूं, युवाओं की महत्त्वाकांक्षा और उनकी चाहत को समझता हूं। मेरे चाचा, जो मुख्यमंत्री हैं, अस्वस्थ हैं। आप ही बताइए क्या आप दिल्ली और गुजरात के लोगों को बिहार चलाने देंगे? या कोई बिहार का लाल आपका राज्य चलाएगा?' भीड़ ज्यादा नहीं है, लेकिन लोगों का उत्साह साफ नजर आता है।

राजद में एक गुपचुप तरीके से एक बदलाव देखने को मिल रहा है। बताया जा रहा है कि यह संजय यादव के इशारे पर हो रहा है, हालांकि ये कदम सोचे-समझे हैं और सावधानी से उठाए जा रहे हैं। तेजस्वी को अब भी लालू प्रसाद की राजनीतिक विरासत के असली उत्तराधिकारी के रूप में पेश किया जा रहा है। यह उनकी चुनावी सभाओं में मंच पर कतार में सबसे स्पष्ट दिखाई देता है। जदयू और भाजपा की चुनावी सभाओं में केंद्र और राज्य के नेता मंच पर होते हैं। राजद में मुखिया, ग्राम प्रधान होते हैं, जो दर्शाता है कि पार्टी और बिहार के गांवों के बीच संगठनात्मक संबंध बरकरार है। एक तरह से देखा जाए तो यह कांग्रेस के उलट है। बिखरा हुआ यादव समुदाय उनके पीछे एकजुट होता दिख रहा है। भाजपा को रोकने के लिए पूरे राज्य में विकल्प के अभाव में मुसलमान तेजस्वी को अपना सबसे अच्छा दांव मानते हैं। उनमें से एक ने कहा, 'राजद से योगी आदित्यनाथ या अमित शाह को भी मैदान में उतार दीजिए, आप देखेंगे, उन्हें एक-एक मुस्लिम वोट मिलेगा।'

लेकिन लालू की विरासत दोधारी तलवार है क्योंकि राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) की दिलचस्पी स्वाभाविक रूप से राजद के कार्यकाल के केवल उस हिस्से को उजागर करने में है जो अपहरण, जबरन वसूली और अराजकता को दर्शाता है। राजग सामाजिक न्याय और सशक्तीकरण के कार्यान्वयन में लालू प्रसाद के योगदान की तुलना वर्तमान परिवार-प्रधान राजद से करता है। यह सच्चाई का केवल एक हिस्सा है।

तेजस्वी यादव ने 2025 के विधान सभा चुनाव में राजद के 36 फीसदी टिकट (143 में से 51) यादवों को आवंटित किए, जो आबादी का 14.26 फीसदी हैं। मुसलमानों, जिनकी आबादी 17.70 फीसदी है, को केवल 19 सीटें मिलीं, जो कुल का लगभग 13 फीसदी और 2020 के समान ही है। लेकिन इस बार राजद के उम्मीदवारों की सूची में अन्य जातियों को शामिल करना उल्लेखनीय है। अतीत में भूमिहार राजद को एक राजनीतिक संभावना के रूप में सोच ही नहीं सकते थे। इस बार, राजद के टिकट पर चुनाव लड़ रहे छह उम्मीदवार भूमिहार हैं, जो एक 'अगड़ा' समुदाय है और पारंपरिक रूप से लालू प्रसाद की पार्टी का विरोधी रहा है। मोकामा के एक बाहुबली सूरजभान सिंह 2025 में राजद में शामिल हो गए और उन्होंने अपनी पत्नी को इस सीट से चुनाव मैदान में उतारा है (एक फौजदारी मामले में दोषी पाए जाने के कारण उनके चुनाव लड़ने पर रोक है)। तेजस्वी ने अपने सहयोगियों की सलाह मानकर निषाद और मल्लाह समुदाय के अस्थिर और अप्रत्याशित नेता मुकेश सहनी को उपमुख्यमंत्री पद की पेशकश करके उन्हें अपने पक्ष में करने की कोशिश की। गौरा बौराम सीट पर उन्होंने राजद उम्मीदवार को सहनी की विकासशील इंसान पार्टी के पक्ष में चुनाव से हटने के लिए मजबूर किया, जिसकी उन्हें काफी कीमत चुकानी पड़ी। उन्होंने कभी भी सार्वजनिक रूप से नीतीश कुमार की आलोचना नहीं की।

पटना के बाकरगंज में एक छोटी सी दुकान चलाने वाले सुनील कुमार कहते हैं, 'उन्हें एक मौका जरूर मिलना चाहिए। लोग उन्हें कम से कम एक बार आजमाना तो चाहते हैं।' वह अपनी जाति नहीं बताते, लेकिन अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं है। वह इसे छिपाने की कोशिश करते हैं। लेकिन उनकी चाहत साफ दिखाई देती है।

आपका पक्ष

प्रदूषण रोकने के लिए पीयूसी पर चालान कितना कारगर

दिल्ली में ठंड के मौसम में प्रदूषण का स्तर काफी बढ़ जाता है। प्रदूषण रोकने के लिए कई कदम उठाए जाते हैं। इसी कड़ी में वाहनों में प्रदूषण नियंत्रण (पीयूसी) प्रमाणपत्र नहीं होने पर 10,000 रुपये का चालान काटा जाता है। पीयूसी एक साल के लिए निर्गत किया जाता है। अगर कोई वाहन पीयूसी निर्गत तिथि के अगले दिन ही धुआं छोड़ने लगा तो इस प्रमाणपत्र का क्या औचित्य रह जाएगा। ट्रैफिक पुलिस पीयूसी नहीं रहने पर 10,000 रुपये का चालान काट देती है। खबरों के अनुसार दिल्ली में इस साल अक्टूबर तक बिना प्रमाणपत्र के चल रहे 4.87 लाख से अधिक वाहनों के चालान काटे गए जो पिछले साल से 20 फीसदी अधिक है। वर्ष 2024 में 3.78 लाख वाहनों के चालान काटे गए थे। प्रदूषण रोकथाम के लिए उठाए गए कदम राजस्व उगाही का जरिया नहीं बने इसके लिए हरित न्यायाधिकरण पंचाट (एनजीटी) अथवा अदालत को संज्ञान लेने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए कोविड काल में चेहरे पर मास्क लगाना अनिवार्य किया गया था और मास्क नहीं लगाने पर जुर्माने का प्रावधान किया गया था। उस वक्त चेहरे पर लगा मास्क नाक से नीचे उतर जाने पर भी जुर्माना लगा दिया जाता था। केवल जुर्माना वसूलने की प्रवृति से प्रदूषण कम नहीं होगा। अगर वास्तव में प्रदूषण कम करना है तो हर पहलू पर उचित विचार कर ही कदम उठाए जाएं और सिर्फ जुर्माना वसूले जाने की सख्त हिदायत देने के बजाय लोकहित को तरजीह दी जानी चाहिए।

मोहित कुमार, नई दिल्ली

दिल्ली में वाहनों के प्रदूषण नियंत्रण (पीयूसी) प्रमाणपत्र की जांच करती ट्रैफिक पुलिस

ठोस विकल्प से ही दशा और दिशा में बदलाव संभव

इस समाचार पत्र में प्रकाशित संपादकीय 'महिलाओं को नकदी हस्तांतरण' पढ़ा, जिस पर गंभीरता से विमर्श जरूरी है। पीआरएस लेजिस्लेटिव रिसर्च की रिपोर्ट राज्य सरकारों की वित्तीय स्थिति पर एक यथार्थपरक दृष्टि प्रस्तुत करती है। यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि राज्यों के पास कुल सरकारी व्यय का दो-तिहाई भार होता है, फिर भी उनकी वित्तीय सेहत पर सार्वजनिक विमर्श सीमित रहता है। रिपोर्ट से स्पष्ट होता है कि राज्यों की राजस्व प्राप्तियों का बड़ा हिस्सा वेतन, पेंशन, सब्सिडी और ब्याज भुगतान में खर्च हो जाता है, जिससे विकासात्मक कार्यों के लिए संसाधन कम पड़ जाते हैं। पूंजीगत व्यय का केंद्र की सहायता पर निर्भर होना एक अस्थायी समाधान है, जो दीर्घकालिक वित्तीय आत्मनिर्भरता की दिशा में बाधा बन सकता है। राज्यों के बीच बढ़ती आर्थिक असमानता भी गंभीर चिंता का विषय है। उच्च प्रति व्यक्ति आय वाले राज्य अधिक राजस्व जुटाकर विकास में आगे बढ़ रहे हैं जबकि कमजोर राज्य पिछड़ते जा रहे हैं। वहीं महिलाओं को बिना शर्त नकदी हस्तांतरण जैसी योजनाएं राजस्व घाटे में डूबे राज्यों द्वारा उधार लेकर चलाना आर्थिक दृष्टि से टिकाऊ नहीं कहा जा सकता। राज्य अपनी वित्तीय स्वायत्तता और राजस्व सृजन क्षमता को बढ़ाएं, व्यय प्राथमिकताओं में संतुलन लाएं और दीर्घकालिक विकास की दृष्टि से नीतियां तैयार करें, ताकि आर्थिक स्थिरता और सामाजिक समरसता दोनों सुनिश्चित हो सके।

अमृतलाल मारू, इंदौर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

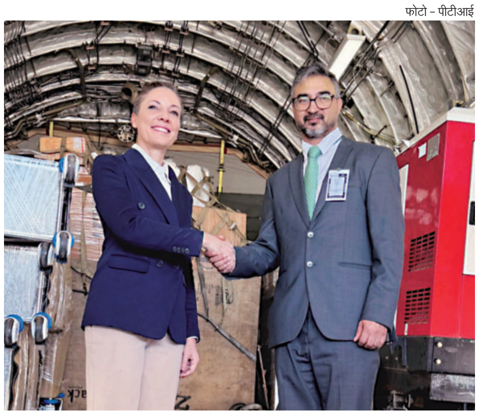

जमैका में भारत के उच्चायुक्त मयंक जोशी ने किंग्स्टन में वहां की विदेश मामलों और विदेश व्यापार मंत्री कामिना जॉनसन स्मिथ (बाएं) को भारत की ओर से मानवीय सहायता की एक खेप सौंपी। पिछले दिनों वहां विनाशकारी तूफान आया था।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

दैनिक जागरण
जिसके अंदर नफरत है उसे किसी दुश्मन की जरूरत नहीं

सुप्रीम कोर्ट की सख्ती

यह स्वागतयोग्य तो है कि सुप्रीम कोर्ट ने स्कूलों, अस्पतालों, हाईवे, रेलवे स्टेशनों और अन्य सार्वजनिक स्थानों से आवारा कुत्तों को हटाने का निर्देश पारित कर दिया, लेकिन बात तब बनेगी, जब ऐसा वास्तव में हो सके। चूंकि शीर्ष कोर्ट ने आवारा कुत्तों के साथ बेसहारा पशुओं को भी सार्वजनिक स्थलों से हटाने का निर्देश दिया है, इसलिए यह सहज ही समझा जा सकता है कि स्थानीय निकायों की चुनौती बढ़ गई है। अभी उनके पास इतने संसाधन ही नहीं हैं कि वे यह काम कर सकें। संसाधनों के अभाव के साथ ही उनके पास इच्छाशक्ति भी नहीं है। इसका प्रमाण यह है कि सुप्रीम कोर्ट ने यह पाया था कि इसी संदर्भ में उसके पहले के आदेश पर अधिकतर राज्यों ने अपना जवाब ही दाखिल नहीं किया। इसी कारण उसे राज्यों के मुख्य सचिवों को तलब करना पड़ा। सुप्रीम कोर्ट ने आवारा कुत्तों और बेसहारा पशुओं को हटाने के साथ ही उनका टीकाकरण, बंध्याकरण करने और उनके लिए विशेष बाड़े एवं आश्रयस्थल बनाने का भी आदेश दिया है। यह सब होना ही चाहिए, लेकिन तथ्य यह है कि देश के कई प्रमुख शहरों में भी आवारा कुत्तों और बेसहारा पशुओं के लिए आश्रयस्थल नहीं हैं। स्पष्ट है कि सुप्रीम कोर्ट के आदेश पर अमल होना एक टेढ़ी खीर है। यह ठीक है कि उसने आठ सप्ताह बाद अपने आदेश के अमल की स्थिति पर रिपोर्ट मांगी है, लेकिन आशंका यही है कि आवारा कुत्तों और बेसहारा पशुओं को हटाने के उसके आदेश का पालन करने के नाम पर दिखावटी कार्रवाई हो सकती है। यदि ऐसा होता है तो समस्या जस की तस रहने वाली है।

अच्छा हो कि सुप्रीम कोर्ट इस पर निगाह रखे कि उसके आदेश पर सही तरह अमल हो रहा है या नहीं? यह इसलिए आवश्यक है, क्योंकि उसके ऐसे कई आदेशों पर अब तक अमल नहीं हो सका है। इनमें से एक यातायात में बाधक धार्मिक स्थलों को हटाने का आदेश है। आवारा कुत्तों और बेसहारा पशुओं को सार्वजनिक स्थलों से हटाने के सुप्रीम कोर्ट के आदेश पर सही तरह अमल तब तक संभव नहीं, जब तक राज्य सरकारें गंभीरता का परिचय नहीं देतीं। सुप्रीम कोर्ट आवारा कुत्तों की समस्या पर कितनी भी सख्ती का परिचय दे, राज्यों का रवैया यही बताता है कि उनकी नजर में यह कोई बड़ी समस्या नहीं। उनका यही रवैया बेसहारा पशुओं को लेकर भी है। राज्य सरकारों का ऐसा ढुलमुल रवैया तब है, जब आवारा कुत्ते और बेसहारा पशु दुर्घटनाओं का कारण बनते रहते हैं। उचित यह होगा कि राज्य सरकारें यह समझें कि यदि नगर निकाय अपने हिस्से की जिम्मेदारियों का निर्वाह करने के लिए सक्रिय नहीं होते तो शहरी जीवन की समस्याएं बढ़ती ही जानी हैं। यही सही समय है कि वे स्थानीय निकायों को सक्षम बनाने के साथ ही उन्हें जवाबदेह भी बनाएं।

कठघरे में जेल प्रशासन

रांची के बिरसा मुंडा केंद्रीय कारा से वायरल हुआ दो कैदियों के डांस का वीडियो जेल प्रशासन की कार्यशैली पर गंभीर प्रश्न खड़े कर रहा है। वीडियो में दिख रहे विधु गुप्ता और विक्की भालोटिया नशे में डांस करते नजर आ रहे हैं। इन दोनों पर करोड़ों रुपये के घोटाले के गंभीर आरोप हैं। जेल में दोनों जिस तरह मस्ती में डांस करते हुए कथित वायरल वीडियो में दिख रहे हैं, उससे अंदाजा लगाया जा सकता है कि दोनों जेल में भी बेखौफ और निश्चिंत हैं, क्योंकि वहां उन्हें ऐशो-आराम की सुविधाएं मुहैया कराई जा रही हैं। जेल प्रशासन की जिम्मेदारी केवल कैदियों की सुरक्षा और सजा के दौरान अनुशासन बनाए रखना भर नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करना भी है कि कोई भी कैदी जेल के भीतर नियमों का उल्लंघन न करे और न ही उसे किसी विशेष सुविधा का लाभ मिले। इससे साफ हो गया कि जेल प्रशासन की निगरानी में भारी खामियां हैं। अगर वीडियो में दिखाए गए कैदी शराब के नशे में हैं, तो यह भी स्पष्ट है कि जेल के भीतर शराब पहुंच रही है। यह सुरक्षा उपायों की नाकामी के साथ ही भ्रष्टाचार का भी बड़ा उदाहरण है। झारखंड सरकार को अब इस मुद्दे पर गंभीर कदम उठाने की आवश्यकता है, क्योंकि पहले भी कैदियों को जेल में वीआइपी ट्रीटमेंट देने को लेकर सवाल उठते रहे हैं। कारा महानिरीक्षक ने इस मामले में सहायक कारापाल को भले ही निलंबित कर दिया है, लेकिन कोशिश यह हो कि ऐसी घटनाएं दोबारा घटनाएं नहीं हों।

जेल में कैदियों के डांस की तस्वीरें जेल की व्यवस्था पर गंभीर सवाल खड़े कर रही हैं

बिहार में तीन अस्मिताओं का मुकाबला

डा. एके वर्मा

बिहार चुनाव में इस बार एक प्रश्न यह भी है कि नेताओं को जिताने की व्यूह रचना में पारंगत प्रशांत किशोर खुद कितने सफल हो पाते हैं?

चुनावी रणनीतिकार से नेता बने प्रशांत किशोर की जन सुराज पार्टी ने बिहार की सभी 243 सीटों पर प्रत्याशी उतार कर विधानसभा चुनाव को त्रिकोणीय बना दिया है। इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि बिहार में पहली बार तीन-अस्मिताओं का भी तिहरा मुकाबला हो रहा है। बिहार में सामान्यतः जातीय-अस्मिताओं के इर्द-गिर्द चुनाव होते रहे हैं, लेकिन इस बार वर्ग और क्षेत्र भी मैदान में हैं। तेजस्वी यादव के नेतृत्व में महागठबंधन जातीय-अस्मिता, नीतीश-मोदी के नेतृत्व में राजग वर्ग अस्मिता और जन सुराज पार्टी के प्रशांत किशोर क्षेत्रीय अस्मिता को आधार बनाकर चुनाव लड़ रहे हैं। जहां महागठबंधन मुख्यतः यादव-मुस्लिम समीकरण पर केंद्रित है, राजग 'सबका-साथ, सबका-विकास' से विभिन्न सामाजिक वर्गों को अपने चुनाव प्रचार की धुरी बनाए है, वहीं प्रशांत किशोर ने 'जय-बिहार' का नारा देकर चुनावी स्पर्धा में एक क्षेत्रीय अस्मिता निर्मित की है। यह चतुराई भरा दांव है। भले ही प्रशांत किशोर को कोई बड़ी सफलता मिले या न मिले, लेकिन बिहार में पहली बार यह प्रयोग किया गया है। इससे पहले तक तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना जैसे राज्यों में ही क्षेत्रीय दल चुनाव प्रचार में क्षेत्रीय अस्मिताओं को रेखांकित करते थे। यह संभावनाओं से भरा है। प्रशांत के अनुसार 14 नवंबर को मतगणना के दिन वे अर्श या फर्श पर होंगे। उनको 10 से कम या 150 सीटें मिलेंगी। क्या ऐसा हो सकेगा?

यह चुनाव विपक्षी दलों राजद और कांग्रेस द्वारा चुनाव आयोग की विशेष गहन पुनरीक्षण यानी एसआइआर के जरिये 'वोट-चोरी' के आरोप की पृष्ठभूमि में हो रहा है। मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के स्वास्थ्य को लेकर भी चिंताएं थीं और राजग सरकार बनने पर उनका मुख्यमंत्री बनना संदेह से भरा था, लेकिन जैसे-जैसे चुनाव आगे बढ़ा, वोट-चोरी का मुद्दा तो अप्रभावी हुआ ही, नीतीश को लेकर संदेह भी दूर होते गए। इस सबके बीच प्रशांत ने चुनावी-रण में अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज कराई। बिहार चुनावों में सामान्यतः जाति और मुस्लिम बहुल निर्वाचन क्षेत्रों में सांप्रदायिकता के आधार पर मतदान होता रहा है। हालांकि मोदी-नीतीश ने मतदान के रुख को जाति और मजहब से आगे बढ़ाकर वर्ग पर केंद्रित किया है। इसमें महिला, युवा, छोटे किसान और गरीब-दलित-शोषित-वंचित वर्ग के लाभार्थी शामिल हैं।

बिहार चुनाव में विजय का आधार अब केवल जाति और मजहब ही नहीं, वरन सुशासन, सुरक्षा, विकास, लोक-कल्याण और नेतृत्व जैसे पहलू भी प्रभावी कारक होते जा रहे हैं। इस चुनाव में प्रशांत किशोर पर भी नजरें होना बहुत स्वाभाविक है। सबके मन में यही सवाल है कि नेताओं को जिताने की व्यूह रचना में पारंगत प्रशांत खुद नेता के रूप में कितने सफल हो पाते हैं? क्या वे अपनी रणनीतिक योग्यता से जन सुराज पार्टी को कुछ सीटों पर विजय दिला सकेंगे? पिछले तीन-वर्ष पदयात्रा करते हुए करीब पांच हजार गांवों में जनसंपर्क कर उन्होंने जो विकल्प बनाया है, क्या वह लालू के जंगलराज की वापसी रोकेगा? क्या राजग के विकास संबंधी दावों की हवा निकालने में सफल होगा? क्या बिहार की गौरवशाली अस्मिता लौटाएगा, युवाओं का पलायन रोकेगा और राज्य में विकास की गंगा बहाएगा? उन्होंने टिकट बांटते समय इस बात का भी ध्यान रखा है कि उसमें समाज की विभिन्न जातियों का समुचित प्रतिनिधित्व हो। वे नीतीश-सरकार द्वारा महिलाओं के खाते में 10-10 हजार रुपये भेजने की आलोचना करते हुए कहते हैं कि यह पैसा उन्होंने जनता की तिजोरी से लेकर उसी को लौटा कर सरकारी भ्रष्टाचार किया है। इसके बावजूद प्रशांत को यह चुनाव एक जुआ लगता है। वे कहते हैं कि 'लीप आफ-फेथ' के कारण लोगों का उनको वोट देना सुनिश्चित नहीं, क्योंकि पिछले 30-40 वर्षों में अव्यवस्था, अराजकता, अपराधीकरण के स्थायित्व में जनता का इतना विश्वास हो गया है कि उसे लगता है कि बिहार में कुछ बदलेगा ही नहीं। मतदाता के मनोविज्ञान को कुरेदते हुए वे कहते हैं कि अगर जन सुराज का प्रत्याशी खराब हो तो उसे भी वोट न दें और केवल अच्छे लोगों को ही वोट दें, जो बिहार में बदलाव लाएं। वे गारंटी देते हैं कि चुनावों के बाद वे न तो राजग का हिस्सा बनेंगे और न ही महागठबंधन का। इससे दो प्रश्न उठते हैं। पहला कि जनता उन्हें क्यों वोट दे? दूसरा, यदि उनके कुछ विधायक जीत भी गए तो कहीं वे सरकार बनाने वाले गठबंधन की ओर न खिसक जाएं? इसे प्रशांत भी स्वीकार करते हैं। ऐसे में यह भी देखना होगा कि बिहारी अस्मिता के आधार पर प्रशांत महागठबंधन या राजग किसके वोट बैंक में सेंध लगा पाएंगे। 2024 के लोकसभा चुनावों में एनडीए को 47 प्रतिशत और महागठबंधन को 37 प्रतिशत मत प्राप्त हुए थे। प्रशांत इनमें से किसका वोट काटेंगे?

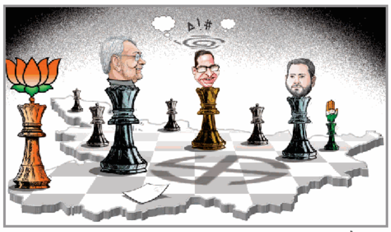

अवधेश राजपूत

सामान्यतः मतदाता उस पार्टी को वोट देना पसंद करता है, जो अपने बलबूते या गठबंधन के माध्यम से सत्ता में आ सके। जबकि प्रशांत का संकल्प है कि वे राजग और महागठबंधन से समान दूरी बनाकर रखेंगे। इससे संभवतः प्रशांत समर्थक मतदाता भी उन्हें वोट न दें, क्योंकि वे नहीं चाहेंगे कि उनका वोट 'व्यर्थ' चला जाए। प्रशांत स्वयं भी चुनाव नहीं लड़ रहे। संभव है वे जोखिम न उठाना चाहते हों। हालांकि राजनीतिक प्रतिफल के लिए जोखिम तो उठाना ही पड़ता है।

बिहार की चुनावी-स्पर्धा में क्या प्रशांत द्वारा 'क्षेत्रीय-अस्मिता' को आधार बनाकर राजनीतिक-नेतृत्व ग्रहण करने की कोई संभावना बनती है? बिहार में ओबीसी एक बड़ा फैक्टर है, जिसे मोदी भाजपा की ओर मोड़ने में सफल हुए हैं। जो ओबीसी कभी राजद और जदयू में बंटा करता था, आज उसका एक बड़ा भाग प्रधानमंत्री मोदी को पिछड़े वर्ग के रहनुमा की तरह देखता है। अब यह 14 नवंबर को जनता ही तय करेगी कि क्या बिहारी अस्मिता जातीय और वर्ग अस्मिताओं पर भारी है?

(लेखक सेंटर फार द स्टडी आफ सोसायटी एंड पालिटिक्स के निदेशक एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)
response@jagran.com

अमेरिका में टकराव का नया दौर

डा. मनीष दाभाडे

जब भी ट्रंप को कोई वैचारिक विरोधी मिला है, उन्होंने उसे 'दुश्मन' बना कर अपनी स्थिति मजबूत की है

जोहरान ममदानी की न्यूयार्क में मेयर पद पर विजय को अमेरिकी प्रगतिशील राजनीति की एक बड़ी उपलब्धि के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है और इसी कारण पूरी दुनिया में उनकी चर्चा है, परंतु इस विजय के साथ-साथ राष्ट्रपति ट्रंप के साथ उनका जो राजनीतिक टकराव उभर रहा है, वह केवल शहर के शासन के लिए नहीं, बल्कि राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी गहरी हलचल का संकेत देता है। ममदानी ने चुनाव जीतते ही राष्ट्रपति ट्रंप को ललकारते हुए खुद को उनके 'सबसे बड़े दुःस्वप्न' के रूप में पेश किया। इससे वह युवाओं में और लोकप्रिय हो सकते हैं, लेकिन संघीय सत्ता से टकराव की यह रणनीति अंततः न्यूयार्क के लिए आत्मघाती सिद्ध हो सकती है। ममदानी के घोषणापत्र में नीतिगत साहस अवश्य है। उन्होंने मुफ्त सार्वजनिक परिवहन, किराया नियंत्रण, ट्रांसजेंडर अधिकारों की रक्षा करने का वादा किया है, पर इन्हें लागू करने के लिए संघीय सरकार से संसाधनों की आवश्यकता अनिवार्य है। ट्रंप पहले ही सार्वजनिक रूप से ममदानी को 'कम्युनिस्ट' कह चुके हैं और न्यूयार्क शहर को मिलने वाले संघीय फंड को न्यूनतम तक सीमित करने की धमकी दे चुके हैं। यह केवल बयानबाजी नहीं है। ट्रंप का प्रशासन पहले भी डेमोक्रेटिक राज्यों और शहरों के प्रति दंडात्मक रुख अपनाता रहा है। ऐसे में एक ऐसे राष्ट्रपति से सीधी टकराव की नीति अपनाना, जो राजनीतिक प्रतिशोध में संकोच नहीं करता, क्या व्यावहारिक है?

न्यूयार्क की बजट व्यवस्था संघीय अनुदान पर निर्भर है- शिक्षा, आवास, सामाजिक सेवाओं के कई विभागों को अपने कुल बजट का बड़ा हिस्सा वाशिंगटन से प्राप्त होता है। अगर संघीय सरकार सहयोगी नहीं रही तो स्थानीय निकाय की योजनाओं का धरातल पर उतारना असंभव हो सकता है। इस संदर्भ में, अंतरराष्ट्रीय अनुभव भी चेतावनी स्वरूप हैं। बार्सिलोना की पूर्व मेयर अदा कोलाउ ने जब 'नागरिक मंच' और सामाजिक आंदोलन के बूते सत्ता संभाली थी, तब उन्होंने पूंजीवाद के विरुद्ध एक नई नगर प्रशासन की कल्पना की थी, लेकिन राष्ट्रीय सरकार की वित्तीय बाधाओं और यूरोपीय संघ की कठोर नीतियों के आगे उनके अधिकांश वादे अधूरे रह गए। आखिरकार उन्हें जनता ने हटा दिया। लंदन के मेयर सादिक खान ने भी कंजर्वेटिव सरकारों से लगातार टकराव लिया, खासकर सार्वजनिक परिवहन और किराया नियंत्रण जैसे मुद्दों पर, लेकिन वे भी केंद्र सरकार की विधायी सीमाओं से बाहर कुछ कर नहीं सके। परिणामतः उनकी कई नीतियां या तो रुकी रहीं या पूरी तरह लागू नहीं हो सकीं। स्पष्ट है कि नगर राजनीति में वैचारिक ऊर्जा पर्याप्त नहीं होती, प्रशासनिक अधिकार और संसाधन उसकी अनिवार्य शर्तें हैं।

ममदानी पर होंगी पूरी दुनिया की निगाहें। एएफपी

ट्रंप के दृष्टिकोण से देखें तो ममदानी का उभार उन्हें एक नया प्रतीक देता है, जिसके माध्यम से वे डेमोक्रेटिक पार्टी को चरमपंथी के रूप में चित्रित कर सकते हैं। ममदानी के समाजवादी रुख, खुले ट्रांसजेंडर समर्थन और जनकल्याणकारी घोषणाओं को लेकर ट्रंप उन्हें 'शहरी चरम वामपंथी' के रूप में प्रचारित कर रहे हैं। इससे वे अपने रूढ़िवादी ग्रामीण और उपनगरीय आधार को फिर से संगठित कर सकते हैं। यदि ममदानी इस जाल में फंसते हैं और ट्रंप से सार्वजनिक रूप से निरंतर भिड़ते रहते हैं तो इससे ट्रंप को ही लाभ होगा। इतिहास गवाह है कि जब भी ट्रंप को कोई प्रबल वैचारिक विरोधी मिला है, उन्होंने उसे राष्ट्रीय विमर्श में प्रतीकात्मक 'दुश्मन' बना कर अपनी स्थिति मजबूत की है। ट्रंप और उनके प्रवक्ता खुले तौर पर न्यूयार्क को एक 'असफल शहर' कहने लगे हैं। ममदानी के उग्र भाषण और ट्रंप विरोधी प्रतीकों का उपयोग इस ध्रुवीकरण को और भी तेज करेगा। ममदानी को चाहिए कि वे ट्रंप की आलोचना से ज्यादा अपने वैकल्पिक दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित करें। यदि वे ट्रंप के हर बयान पर प्रतिक्रिया देंगे तो उनका प्रशासनिक एजेंडा खो जाएगा। उन्हें यह दिखाना होगा कि वे सिर्फ विरोधी नहीं, बल्कि सक्षम प्रशासक भी हैं। उन्होंने जोश और विचारधारा के संयोग से एक नया मतदाता वर्ग उभारा है, लेकिन यही वर्ग अब उनसे ऐसी योजनाएं चाहता है, जो वास्तव में लागू की जा सकें।

न्यूयार्क की नगर प्रशासनिक मशीनरी को संभालना एक बड़ी चुनौती है। वहां की नौकरशाही, संघीय अनुदानों की जटिलता और न्यायिक प्रक्रियाएं एक आदर्शवादी नेता की परिकल्पनाओं को कसौटी पर कसेंगी। बिना वाशिंगटन के सहयोग से बड़े बुनियादी सुधार करना लगभग असंभव है। राजनीति में प्रतीकों का महत्व अवश्य होता है, लेकिन शहरों को नारे नहीं चलाते, उन्हें चलाती हैं व्यावहारिक नीतियां, वित्तीय अनुशासन और केंद्र-राज्य समन्वय की सूझबूझ। अगर ममदानी प्रशासनिक व्यावहारिकताओं को नजरअंदाज करते हैं और केवल ट्रंप-विरोधी प्रतीक बने रहते हैं तो यह न केवल उनकी विफलता होगी, बल्कि यह पूरे डेमोक्रेटिक आंदोलन को भी नुकसान पहुंचा सकता है। ममदानी को चाहिए कि वे अपनी रणनीति को टकराव के बजाय समाधान की दिशा में मोड़ें। उन्हें शहरी प्रशासन के तौर-तरीकों को गहराई से समझना होगा। वरना वे न तो ट्रंप को टक्कर दे पाएंगे, न ही न्यूयार्क को वह परिवर्तन दे पाएंगे, जिसका उन्होंने वादा किया है।

(लेखक जेएनयू में एसोसिएट प्रोफेसर हैं)
response@jagran.com

सुख का रहस्य

आज का मनुष्य भौतिक रूप से समृद्ध है-महंगे घर, चमचमाती गाड़ियां, विदेशी यात्राएं, आधुनिक जिम और गैजेट्स से सुसज्जित जीवन, परंतु भीतर से वह रिक्त, असंतुष्ट है। सुविधा के चरम पर खड़ा होकर भी वह शांति और आनंद को खोज रहा है। इसके विपरीत अतीत का मनुष्य सीमित संसाधनों में जीता था, किंतु उसके जीवन में अपनापन, आत्मीयता और सुकून का संगीत था। यही विरोधाभास 'अभाव का आनंद' का रहस्य खोलता है।

अभाव का अर्थ केवल वस्तुओं की कमी नहीं, बल्कि इच्छा की मर्यादा है। जब इच्छाएं सीमित होती हैं, तब संतोष जन्म लेता है। संतोष ही आत्मिक आनंद का द्वार है। महात्मा गांधी ने कहा था, 'पृथ्वी सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है, पर किसी एक की लालच की नहीं।' अभाव के दिनों में इंसान कृतज्ञ रहना सीखता है, हर छोटी चीज के लिए आभार प्रकट करता है और यही भावना उसे आंतरिक सुख देती है। आज का जीवन सुविधा-संपन्न है, पर सरल नहीं। साधनों की अधिकता ने संबंधों की गहराई छीन ली है।

अभाव हमें भीतर झांकने का अवसर देता है। जब बाहरी वस्तुएं नहीं होतीं तो मनुष्य भीतर की संपदा खोजता है-प्रेम, करुणा, ध्यान और आत्मचिंतन। यही आध्यात्मिक दृष्टिकोण है कि अभाव कोई दुख नहीं, बल्कि आत्म-उत्थान की भूमि है। जैसे मिट्टी में बीज दबाया जाता है तो वही अंधकार उसे अंकुरण की शक्ति देता है, वैसे ही अभाव आत्मा को प्रकाश की दिशा में ले जाता है। आज जरूरत है कि हम सुविधाओं के बीच भी 'अभाव का भाव' जिंदा रखें-सादगी, संतोष और आत्मसंयम के रूप में, क्योंकि सुख साधनों से नहीं, दृष्टिकोण से उत्पन्न होता है। अभाव का आनंद वही ले सकता है, जो जीवन को भोग नहीं, योग समझकर जीता है। यही जीवन की सच्ची संपन्नता है-अंदर से समृद्ध होने की कला।

ललित गर्ग

साइबर धोखाधड़ी से निपटने की पहल

सुनीता मिश्रा

'कालिंग नेम प्रजेंटेशन' सुविधा के चलते जब भी कोई आपको काल करेगा, मोबाइल की स्क्रीन पर उसका असली नाम दिखाई देगा

मोबाइल काल से होने वाली धोखाधड़ी एवं साइबर अपराधों को रोकने के लिए टेलीकाम रेगुलेटरी अथारिटी आफ इंडिया (ट्राई) और डिपार्टमेंट आफ टेलीकम्युनिकेशंस (डाट) ने अहम कदम उठाया है। इसके तहत जल्द ही मोबाइल यूजर्स को 'कालिंग नेम प्रजेंटेशन' (सीएनएपी) नाम का एक नया फीचर दिया जाएगा। इस नई सुविधा के चलते जब भी कोई काल करेगा, मोबाइल की स्क्रीन पर उसका असली नाम दिखाई देगा। यह नाम मोबाइल नंबर का कनेक्शन लेते समय दिए गए दस्तावेजों के आधार पर होगा। इस सुविधा से बढ़ते फर्जी काल, स्पैम काल और धोखाधड़ी से लोगों को बचाना आसान होगा। दूरसंचार विभाग देशभर में इस सेवा को मार्च 2026 तक लागू कर सकता है। दरअसल ट्रूकालर एप होने के बावजूद कालिंग नेम प्रजेंटेशन सुविधा शुरू करने का मुख्य कारण सत्यता है। सीएनएपी फीचर दूरसंचार आपरेटरों के आधिकारिक केवाईसी डाटाबेस से कालर का नाम लेता है। यह वही नाम होता है, जो सिम कार्ड खरीदते समय मोबाइल यूजर ने अपने पहचान पत्र में दिया होता है। इसलिए नाम सत्यापित होता है। इस सुविधा के लिए किसी एप को डाउनलोड करने की आवश्यकता भी नहीं होगी, क्योंकि यह सीधे नेटवर्क स्तर पर काम करेगी।

लोग लंबे समय से किसी अनजान नंबर की जानकारी जैसे कि काल करने वाले का नाम, उसका स्थान पता लगाने के लिए, स्पैम और धोखाधड़ी से बचने के लिए ट्रूकालर एप का उपयोग कर रहे हैं, लेकिन ट्रूकालर मुख्य रूप से क्राउडसोर्स (उपयोगकर्ताओं द्वारा दी गई जानकारी) डाटा पर निर्भर करता है, जहां यूजर्स अपने कांटैक्ट लिस्ट के नामों या सुझावों के आधार पर अज्ञात नंबरों को नाम देते हैं। यह जानकारी कभी-कभी गलत, पुरानी या अनौपचारिक हो सकती है। कई बार ट्रूकालर पर केवल नंबर दिखाई देता है, काल करने वाला का नाम नहीं दिखता। इसके लिए इंटरनेट का कनेक्शन होना भी जरूरी है।

हालांकि कुछ दूरसंचार कंपनियों ने नए फीचर को लेकर चिंता जताई है। उनके अनुसार इससे काल सेटअप में देरी, प्राइवेसी का मुद्दा और तकनीकी चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है, परंतु यह कदम देशभर में स्पैम काल्स, धोखाधड़ी और साइबर अपराधों जैसे डिजिटल अरेस्ट और वित्तीय घोटालों को रोकने के लिए उठाया गया है। इससे मोबाइल फोन यूजर्स को पता होगा कि उन्हें कौन काल कर रहा है, जिससे वे फर्जी काल को पहचानने में सक्षम होंगे। यह फैसला दूरसंचार सेवाओं में उपभोक्ताओं का विश्वास बढ़ाएगा। कालिंग नेम प्रजेंटेशन सरकार द्वारा सत्यापित सुविधा है। अज्ञात नंबर स्पैम काल के लिए अहम हथियार रहे हैं। ऐसे में मोबाइल फोन की स्क्रीन पर नाम दिखाई देने से स्पैमर्स पर लगाम लगाई जा सकेगी।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

फर्जी डिग्री बांटने का खेल

संपादकीय 'फर्जी विश्वविद्यालय' देश में फर्जी शिक्षा संस्थानों की पोल खोलता है। देश में बड़े पैमाने पर खुलेआम फर्जी विश्वविद्यालयों का संचालित होना न केवल आश्चर्यजनक है, बल्कि चिंताजनक भी है। यूजीसी के इतने सख्त नियमों और मानदंडों के बावजूद इन संस्थानों का बदस्तूर संचालित होते रहना दर्शाता है कि ऐसा करने वालों के मन में कानून का कोई खौफ नहीं है और इन संस्थानों के संचालक न केवल विद्यार्थियों के भविष्य के साथ, बल्कि कानून के साथ भी खिलवाड़ करने से नहीं चूक रहे। फर्जी डिग्रीधारी अपनी नकली डिग्री का उपयोग नौकरी पाने, पात्रता परीक्षा में सम्मिलित होने और शासन की विभिन्न योजनाओं का लाभ लेने में करके पात्र अभ्यर्थियों के हक में सेंध लगा रहे हैं। सबसे बड़ी विडंबना यह है कि सबकुछ जानते हुए भी फर्जीवाड़े का यह खेल जारी है। फर्जी संस्थानों के संचालकों के दुस्साहस का पता इस तथ्य से लग जाता है कि 22 फर्जी विश्वविद्यालयों की सूची में से 10 देश की राजधानी दिल्ली में ही हैं, जहां स्वयं केंद्र सरकार, यूजीसी और उच्चतम न्यायालय हैं। क्या कानून, नियम और कायदे केवल नाममात्र के रह गए हैं? क्या यूजीसी, न्यायालय, केंद्र सरकार, राज्य सरकारें इतनी असहाय हो गई हैं कि इन फर्जी संस्थानों पर ताला भी नहीं लगा सकतीं? इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती कि इन संस्थानों से फर्जी डिग्री लेकर निकले व्यक्ति देश का हित करेंगे? देश की शिक्षा व्यवस्था को खोखला बना रही इस अवैध समानांतर शिक्षा व्यवस्था के लिए जितने जिम्मेदार इनके संचालक हैं उतने ही जिम्मेदार वे लोग भी हैं, जो इनका विरोध नहीं करते, इनके खिलाफ कोई ठोस कार्रवाई नहीं करते या इन्हें बंद करने के प्रयास में कोताही बरतते हैं।

mohitsonikukshi@gmail.com

सफलता के मायने

समय के साथ बहुत कुछ बदला है। ऐसे ही सफलता का पैमाना भी। भोगविलास, पद, प्रतिष्ठा, तरक्की यह सब इंसान की जिंदगी में जितना आता है, उतनी ही उसकी लालसा और बढ़ती जाती है। और इन सब का कोई अंत नहीं है। असली सफलता है, परमात्मा ने जो दिया है, उससे संतुष्ट रहना। प्रतिदिन उसका शुक्रिया अदा करना। इसका मतलब यह बिल्कुल नहीं है कि हम जिंदगी में कुछ और पाने का प्रयास न करें। हर इंसान को आगे बढ़ने के लिए अथक प्रयास करने चाहिए। पर हर समय भगवान को कोसते रहना कि यह नहीं दिया, वह नहीं दिया, गलत है। कुछ पाने की चाह में अंधा होना भी गलत है। सब कुछ पाकर भी अगर मन को शांति नहीं है और मन खुश नहीं है, वह सफलता नहीं है। संयम, संतुष्टि, खुशी और शांति ही सफलता के सूत्र है। सफलता कोई वस्तु नहीं है कि जिसके पीछे है भाग उसे पकड़ सफल कहलाया जा सके। यह आंतरिक अनुभूति है, इसे बाहरी चीजों से नियंत्रण करना व्यर्थ है।

abhilasha18gupta@gmail.com

वोट चोरी या फिर दिमागी हेराफेरी

राहुल गांधी कभी भूकंप, एटम बम और कभी हाइड्रोजन बम की बात करते हैं, लेकिन देश में कोई राजनीतिक हलचल तक सुनाई नहीं देती। कारण वोट चोरी के संदर्भ में अकाट्य ठोस सुबूतों का अभाव। यही वजह है कि आरजेडी नेता तेजस्वी यादव ने भी इस मामले को गंभीरता से नहीं लिया और अपनी चुनावी रैलियों में व्यस्त दिखाई दिए। कांग्रेस नेता राहुल गांधी अगर हरियाणा कांग्रेस सरकार के पूर्व वित्त एवं गृह मंत्री रहे प्रोफेसर संपत सिंह के चार पन्नों के त्यागपत्र को ध्यान से पढ़ते, तब हरियाणा में कांग्रेस की सरकार क्यों नहीं बनी? समझने में आसानी हो जाती। प्रोफेसर संपत सिंह ने कांग्रेस पर बहुतेरे संगीन आरोप ही नहीं लगाए, वरन हरियाणा कांग्रेस में अंदरूनी खींचतान, सिद्धांतों की कमी, स्वार्थ, वंशवाद और पूर्व मुख्यमंत्री भूपेंद्र सिंह हुड्डा को भी कठघरे में खड़ा कर दिया। निस्संदेह राहुल गांधी को चुनाव आयोग पर अंगुली उठाने से पहले हरियाणा कांग्रेस का संज्ञान लेना चाहिए। दीपक गौतम, सोनीपत

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।
****